Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/2014-16
R.N.I.No. 51966/1989
Date of Publication 15th November 2015
Date of posting 15th & 20th November 2015

नवम्बर 2015 • वर्ष 29 • अंक 11 • मूल्य ₹ 30

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

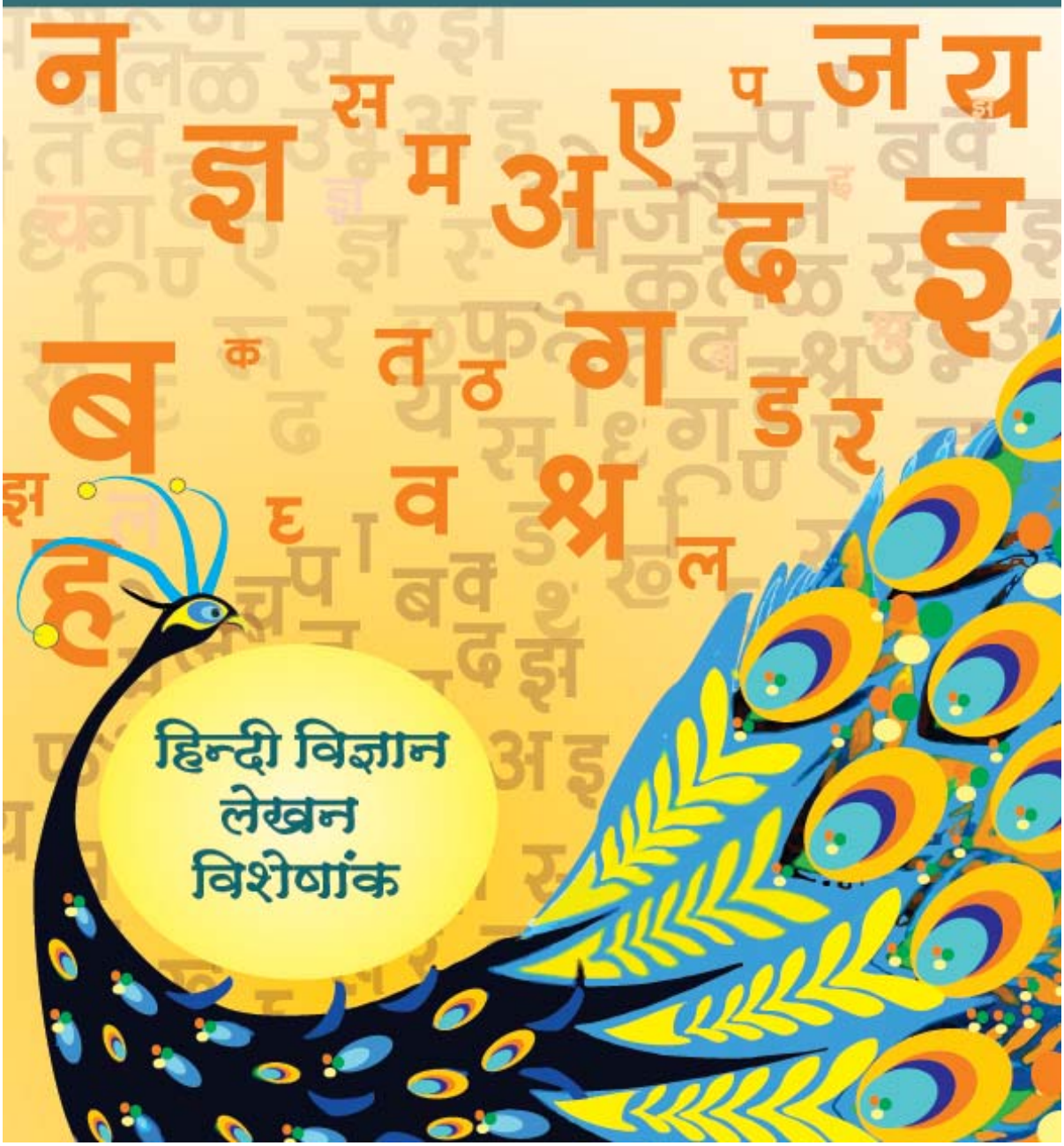

RNI No. 51966/1989
www.electroniki.com
नवम्बर 2015
वर्ष 29
अंक 11

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

सलाहकार मण्डल
शरद चंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, डॉ. संध्या चतुर्वेदी
डॉ. मनमोहन बाला, डॉ. ए.एस.झाड़गांवकर, प्रो. व्ही.के.वर्मा

संपादक
संतोष चौबे

कार्यकारी संपादक
विनीता चौबे

उप–संपादक
पुष्पा असिवाल

सह–संपादक
मनीष श्रीवास्तव, मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन

संस्थागत सहयोग
अमिताभ सक्सेना, शैलेष पांडेय, डॉ. राघव, डॉ. विजय सिंह,
डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे, संतोष शुक्ला

राज्य प्रसार समन्वयक
शशिकांत वर्मा, लातूर सिंह वर्मा, केशव सहाय, लियाक़त अली खोखर,
अदिति चतुर्वेदी, शलभ नेपालिया, अंबरीष कुमार,
हरीश कुमार पहारे

क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक
निशांत श्रीवास्तव, राजीव चौबे, जितेन्द्र पांडे, लुकमान मसूद,
आर.के. भारद्वाज, संजीव गुप्ता, रवि चतुर्वेदी, प्रवीण तिवारी,
अरुण साहू, अभिषेक अवस्थी, विजय श्रीवास्तव, के.आई. जावेद,
परमानंद कुमार पासवान, असीम सरकार, अमृतेष कुमार, योगेश मिश्रा, आशीष
कुमार दास, संतोष कुमार पाढ़ी, दर्शन व्यास, भूपिन्दर चौधरी, आबिद हुसैन
भट्ट, दलजीत सिंह, राजन सोनी, अजीत चतुर्वेदी,
अनिल कुमार, अमिताभ गांगुली

समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन
राजेश पंडा

आवरण एवं डिजाइन
वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी, मुकेश सेन

विज्ञान लोकप्रियकरण में लगी संस्थाओं को हिन्दी में ज्यादा से ज्यादा प्रेरणाप्रद कार्यक्रम करने चाहिए। दूसरी भाषाओं से हिंदी में विज्ञान लेखन–अनुवाद की चुनौतियों को दूर करने के गंभीर व स्थायी प्रयास करने होंगे।

– प्रो.यश पाल

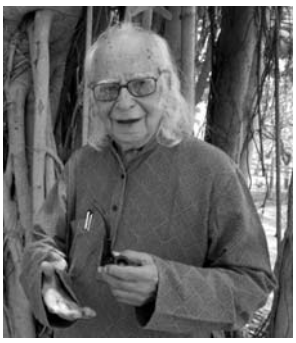

अनुक्रम

साक्षात्कार

हिन्दी सशक्त और प्रभावशाली भाषा है ● प्रो. यश पाल से मनीष मोहन गोरे की बातचीत/05

प्रो.यश पाल का जीवन ● मनीष मोहन गोरे /07

जीवन की एक भाषा होती है ● प्रो. यश पाल /11

हिन्दी में विज्ञान लेखन की स्वायत्ता

हिंदी में विज्ञान साहित्य का विहंगावलोकन ● शुकदेव प्रसाद /14

विज्ञान लोकप्रियकरण, वैज्ञानिक सोच का विकास और हिंदी ● डॉ. नरेन्द्र सहगल /17

हिंदी में विज्ञान संचार और रक्षा विज्ञान ● सुभाषचंद्र लखेड़ा /23

हिंदी में विज्ञान लेखन क्यों और कैसे ● देवेन्द्र मेवाड़ी /27

चिकित्सा विज्ञान में हिंदी की पढ़ाई कराने का प्रयास ● प्रो. मोहनलाल छीपा /33

हिंदी में विज्ञान लेखन की चुनौतियाँ ● डॉ.सुबोध महंती /39

हिंदी बाल विज्ञान साहित्य की आवश्यकता ● डॉ.दिनेश मणि /42

10वाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन और हिन्दी विज्ञान लेखक

10 वाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन और विज्ञान : एक अवलोकन● डॉ.शंभू रतन अवस्थी /47

विज्ञान क्षेत्र में हिंदी ● किंकिणी दासगुप्ता /49

हिंदी में विज्ञान साहित्य की वर्तमान स्थिति तथा संभावनाएं ● डॉ.शिवगोपाल मिश्र /51

गतिविधियाँ /56

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

सेक्ट, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, भोपाल–47

फोन : 0755-2499657, 6766165, 6546511, फैक्स : 0755-2429096

e-mail :electroniki@electroniki.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 330/- प्रति अंक : 30/-

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, संतोष कुमार चौबे, प्रकाशक व मुद्रक संतोष चौबे के लिए पहले पहल प्रिंटरी, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित, संपादक संतोष चौबे

हिन्दी सशक्त और प्रभावशाली संवाद की भाषा है

प्रो. यश पाल से मनीष मोहन गोरे की बातचीत

इन दिनों विज्ञान में हिन्दी लेखन पर विमर्श देश व्यापी हो रहा है और उसकी प्रासंगिकता पर बात होती है। हिंदी भाषा भारत की एक विशाल आबादी के द्वारा बोली, पढी, लिखी और समझी जाने वाली आम भाषा है। इस लोकप्रिय भाषा को संचार का एक सशक्त जरिया बनाकर विज्ञान लोकप्रियकरण किया जा सकता है। आपकी क्या राय है?

यह सच है कि हिंदी हमारे देश की सबसे सशक्त और प्रभावशाली संवाद भाषा है और अधिकांश व्यक्तियों एवं संस्थाओं के द्वारा इसका व्यापक प्रयोग किया जा रहा है। इसे अपनाकर विज्ञान को लोकप्रिय बनाया जाना आवश्यक है। विज्ञान लोकप्रियकरण में लगी संस्थाओं को हिन्दी में ज्यादा से ज्यादा प्रेरणाप्रद कार्यक्रम करने चाहिए। दूसरी भाषाओं से हिंदी में विज्ञान लेखन-अनुवाद की चुनौतियों को दूर करने के गंभीर व स्थायी प्रयास करने होंगे। नए लेखकों को आगे लाने और उन्हें प्रोत्साहन देने की योजनाओं का विकास तथा क्रियान्वयन भी करना चाहिए।

विज्ञान लोकप्रियकरण की आप किस प्रकार व्याख्या करते हैं?

मैं विज्ञान लोकप्रियकरण शब्द के बजाय वैज्ञानिक समझ को अधिक उपयुक्त मानता हूँ। तथ्यों और कोरे ज्ञान को केवल जान भर लेना विद्यार्थी की समझ के लिए पर्याप्त नहीं होता। जानने और समझने में बड़ा व्यापक अंतर है और जो शिक्षक और संचारक इस अंतर को समझ ले, वहाँ से नई शुरुआत कर सकता है और समाज में परिवर्तन ला सकता है।

आपका इशारा वैज्ञानिक दृष्टिकोण की ओर है। शिक्षा व्यवस्था में इस दृष्टिकोण के समावेश को लेकर आपका मत साझा करें।

इतना हम सभी जानते हैं कि बच्चों के सवाल अनोखे होते हैं और हर बच्चा पैदायशी जिज्ञासु होता है। हमें उनके सवालों के जवाब देने की कोशिश नहीं छोड़नी चाहिए। अगर अभिभावक या शिक्षक उनके जवाब दे पाने में स्वयं को असमर्थ पाते हैं तो उन्हें उचित स्रोत से सही जवाब ढूंढना चाहिए और जवाब ढूंढना भी वास्तव में एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण दरअसल सोचने-सीखने का एक तर्कसंगत तरीका होता है। मनुष्य सोचता है इसलिए वह पृथ्वी के अन्य जंतुओं से अलग है और यह उसकी बहुत बड़ी ताकत है। दूसरी ओर यह सोचना कि यह ठीक है और वह नहीं, ये भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण है।

हम परंपरागत शिक्षा व्यवस्था में एकतरफा शिक्षण का सहारा लेते हैं जिसमें बच्चों के सोचने और स्वयं करके सीखने की प्रवृत्ति का विकास रोक लिया जाता है। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिसमें बच्चों को सोचने और सीखने की आजादी हो। पाठ्यक्रम का बोझ इतना होता है कि

बच्चे चाहकर भी लम्बे-चौड़े पाठ्यक्रम को नियत समय में समझ नहीं पाते। इसके अलावा अलग-अलग प्रतिभा से संपन्न बच्चों को एक जैसे पाठ्यक्रम तथा विषय पढने को विवश किया जाना भी अतार्किक बात है।

बच्चों की जिज्ञासा और उनके सीखने की प्रक्रिया में विज्ञान संचार की भूमिका को आप किस तरह देखते हैं?

बच्चे जब अपने आस-पास की चीजों को समझने लगते हैं तो वे सहज और अनोखे सवाल पूछने लग जाते हैं। शिक्षक का यह दायित्व होता है, यह सुनिश्चित करना कि बच्चों की यह नैसर्गिक प्रवृत्ति नष्ट न होने पाए और सीखने-समझने की उनकी प्रक्रिया अबाध चलती रहे। विज्ञान संचारक श्रव्य-दृश्य कार्यक्रम, हैंड्स आन प्रयोगों, लेखन और अन्य गतिविधि आधारित विधाओं के माध्यम से बच्चों के सीखने को गति और उचित दिशा दे सकते हैं।

किसी सिद्धांत को स्वयं समझना सबसे महत्वपूर्ण होता है और मैं इसे समझने का आनंद (Joy of understanding) नाम देता हूं। इस आधार पर मैं कोचिंग क्लास की आलोचना करता हूँ क्योंकि वहां बच्चों के समझने पर नहीं, उन्हें सूचनाओं के भण्डार रटने पर जोर दिया जाता है। मेरी नजर में शिक्षा और सीखने का यह उचित तरीका नहीं है। मेधावी व्यक्तियों ने इस तरह की प्रक्रिया से गुजरकर ज्ञान-विज्ञान आदि जैसे विभिन्न क्षेत्रों में दुनिया में महान योगदान नहीं दिए हैं। अगर बीसवीं शताब्दी के तीन महान वैज्ञानिकों एडीसन, आइंस्टाइन और रामानुजन के उदाहरण लें तो हम पायेंगे कि इन्होंने अपने आकादमिक जीवन में 99.9 प्रतिशत अंक हासिल नहीं किये मगर विज्ञान के क्षेत्र में इनके योगदान सौ प्रतिशत से भी कहीं ज्यादा थे। ये कैसे हुआ? इन वैज्ञानिकों ने प्रति के गूढ़ रहस्यों को स्वयं समझा और अध्ययन-चिंतन-प्रयोग-परीक्षण से मिले नतीजों को कसौटी पर कसके अपने सिद्धांत दुनिया के सामने रखे।

आपका झुकाव कास्मिक किरणों और कण भौतिकी में अनुसंधान से विज्ञान संचार की तरफ कैसे हो गया?

हमारे आस-पास हर तरफ विज्ञान की घटनाएं हर समय घटित हो रही हैं। इसे आम जन को एकदम सटीक न सही, सटीक के बहुत नजदीक की जानकारी हलके-फुल्के ढंग से देने में आनंद आने लगा। इस तरह विज्ञान समझाने के आरम्भिक प्रयास मैंने सबसे पहले स्पेश एप्लीकेशंस सेंटर, अहमदाबाद में किये और वहां लोग मुझे 'स्काईलैब अंकल' कहकर पुकारने लगे। विज्ञान को लेकर मेरी कही बात लोगों के समझ आ रही थी, यह देखकर मुझे आनन्द आता था और इस तरह मेरा रुझान विज्ञान संचार की तरफ हो गया।

आप विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी) के सचिव रहे जिसके अधीन एन.सी.एस.टी.सी. और विज्ञान प्रसार की स्थापना विज्ञान संचार के उद्देश्य से की गई। पिछले 25-30 वर्षों के दौरान इन संस्थाओं ने देश में जो कार्य किये, उन्हें आप किस तरह देखते हैं?

इन्होंने जिन संसाधनों के साथ बड़ी सोच को लेकर दूरदर्शी कार्य किये, वे अत्यंत सराहनीय हैं। हां, आज के बदलते समय-समाज और इसकी चुनौतियों के मद्देनजर इन जैसी संस्थाओं को और भी अधिक सक्रिय भूमिका निभाने की जरुरत है क्योंकि वैज्ञानिक दृष्टिकोण की जरुरत कल से ज्यादा आज है।

आपने वैज्ञानिक अनुसंधान, शिक्षा और विज्ञान संचार इन तीन क्षेत्रों में काम किये हैं। इन तीनों को जोड़कर भारत को आगे कैसे लेकर बढ़ सकते हैं?

अलबर्ट आइंस्टाइन ने 'सिद्धांतों के तरन्नुम या संगीतात्मकता (Musicality of theories) की बात कही थी और इसके माध्यम से वह विज्ञान में उच्च स्तर के सौंदर्य की तरफ इशारा करना चाहते थे। वास्तव में, विज्ञान, शिक्षा और समाज के बीच एक सकारात्मक तालमेल बनाने के बाद किसी भी देश में सच्चे अर्थों में प्रगति लाई जा सकती है।

भावी वैज्ञानिकों और विज्ञान संचारकों को आप क्या सन्देश देना चाहेंगे?

देश के सभी कर्णधारों को मेरा विनम्र सुझाव है कि वे शिक्षा को किताब के पन्नों में छपी स्याही की तरह नहीं बल्कि उसे दुनिया के महान लोगों और उनकी संस्तियों का मूल्यवान खजाना समझें। आप सभी अद्वितीय हो और आप सबको अलग-अलग क्षेत्रों में महान कार्य करने हैं। आपकी विशेषज्ञता के क्षेत्रों में, आपके सच्चे मन से किये गये योगदान से एक देश या समाज ही नहीं बल्कि समूची मानव जाति को लाभ मिलेगा, ऐसी सोच के साथ काम करें।

आपसे इस महत्वपूर्ण बातचीत और बहुमूल्य विचारों के लिए आपको बहुत-बहुत धन्यवाद।

आपको और 'इलेक्ट्रानिकी आपके लिए' परिवार को भी मेरी ओर से अनेक शुभकामनाएं।

प्रो. यश पाल का जीवन

मनीष मोहन गोरे

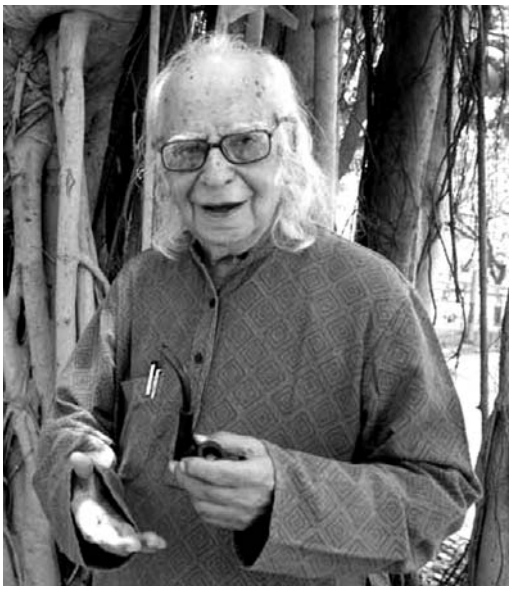

कंधों पर लहराते बड़े-बड़े सफेद बाल, रंगीन कुर्ता, उस पर हॉफ जैकट और होंठों पर सुखद मुस्कान लिए हुए एक वयोवृद्ध भारतीय वैज्ञानिक के बारे में आज हम बात करने जा रहे हैं। क्या आपने अंदाजा लगाया कि यह व्यक्ति कौन है? जी हां! हम बात कर रहे हैं प्रोफेसर यश पाल की। भारत के कोने-कोने में लोग इन्हें अच्छी तरह जानते हैं। उनकी लोकप्रियता बेवजह नहीं है। प्रोफेसर यश पाल वैज्ञानिक, विज्ञान संचारक, शिक्षाविद और संस्थान निर्माता जैसे व्यक्तित्वों का एक सम्मिश्रण है। भारत में ऐसे कम वैज्ञानिक हुए हैं जिन्होंने यश के समान इतने सारे क्षेत्रों में उत्कृष्टता और अदम्य उत्साह के साथ काम किया हो। इन्होंने भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) की एक उत्कृष्ट इकाई स्पेस एप्लीकेशन सेंटर (अहमदाबाद) को संजोकर निर्मित किया और 1975-76 के दौरान सैटेलाइट इंस्ट्रक्शनल टेलीविजन एक्सपेरिमेंट (एसआईटीई) को रूपायित तथा क्रियांवित किया। साइट के क्रियांवयन के बाद भारत में शैक्षिक संचार के पंख लगे जिसका समूचा श्रेय यश पाल को जाता है। मूलभूत विज्ञान में अनेक महत्वपूर्ण योगदान देने के बाद यश पाल 1990 के दशक में 'भारत जन ज्ञान विज्ञान जत्था' से जुड़े और आम जन को उसकी भाषा में विज्ञान की बातें सरलता से समझाने वाले एक विज्ञान संचारक के रूप में लोकप्रिय हुए। उसी दौरान टीवी पर आने वाले विज्ञान धारावाहिक 'टर्निंग प्वाइंट' में दर्शकों के ज्ञान-विज्ञान से जुड़े सवालों के वे रोचक जवाब देते थे। इस कार्यक्रम की लोकप्रियता ने यश पाल की एक राष्ट्रीय छवि का निर्माण किया। बच्चे और युवा उनसे व्यापक रूप से प्रेरित-प्रभावित हुए।

उथल-पुथल भरा आरंभ

यश पाल का जन्म 26 नवंबर 1926 को पंजाब में चेनाब नदी के पूर्वी किनारे पर स्थित झंग (अब पाकिस्तान) में एक अत्यंत सांस्कृतिक मूल्यों वाले परिवार में हुआ था। क्वेटा (बलूचिस्तान) में उनका आरंभिक बचपन व्यतीत हुआ और यहीं उन्हें प्राथमिक शिक्षा भी मिली। दरअसल इस जगह उनके पिता

ब्रिटिश शासन में भारत सरकार के लिए नौकरी करते थे।

सन् 1935 में यश जब 9 वर्ष के बालक थे, तो वहां पर 7.7 क्षमता का विनाशकारी भूकंप आया था और जिसके परिणामस्वरूप क्वेटा में अनुमानित तौर पर 60,000 लोगों की जानें गईं। इस प्राकृतिक आपदा ने क्वेटा को लगभग बर्बाद कर दिया। सौभाग्य से यश और उनके भाई-बहन ध्वस्त मकान के मलबे से सुरक्षित निकाले गए। उन्हें नाना के घर कोट-इसा-शाह भेजा गया। भारतीय सेना ने अगले एक साल में क्वेटा में मलबों को साफ कर गांव-कस्बों की पुर्नस्थापना कर दी और यश व उसके भाई-बहन अपने माता-पिता के पास आ गए। कुछ वर्ष बाद यश के पिता का तबादला जबलपुर हो गया, जहां यश ने स्वाध्याय आरंभ किया और उनकी मुलाकात एक महान शिक्षक पवार से हुई जो लीक से हटकर अध्यापन करते थे। वह अध्यायों को परंपरागत व्याख्यान शैली में न बताकर विद्यार्थियों से चर्चा करके उन्हें अवधारणाओं को समझाते थे। यश के बाल मन पर इस शिक्षण शैली का गहरा असर हुआ। अपने बचपन के दिनों में यश दूसरे विश्व युद्ध, सविनय अवज्ञा और भारत छोड़ो आंदोलन के बारे में सुना करते थे। उस दौर के अधिकांश लोगों की तरह तब यश भी गांधी और उनके विचारों से प्रभावित हुए।

वर्ष 1942 में मैट्रिक परीक्षा पास करने के बाद वह बी.एस-सी. भौतिकी की पढ़ाई के लिए पंजाब विश्वविद्यालय आ गए। भाग्य ने यहां भी उनके साथ एक खिलवाड़ किया-वह लंबे समय तक बीमार पड़ गए। मगर इस बीमारी के कारण एक अच्छी बात हुई, वो ये कि उन्हें दुनिया भर की अनेक महत्वपूर्ण किताबों को पढ़ने का मौका मिल गया और पाठ्यक्रम से अलग इस प्रकार के अध्ययन ने उनके व्यक्तित्व में नए आयाम जोड़े। भौतिकी में एम. एस-सी. का अध्ययन भी उन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय में जारी रखा। इसी दरम्यान उनके पिता का तबादला दिल्ली हो गया और वह अपनी गर्मी की छुट्टियां बिताने अपने पिता के साथ दिल्ली आ गए। यह साल 1947 का समय था जब भारत को आजादी मिलने ही वाली थी। आजादी की उद्घोषणा के बाद देश का विभाजन भारत और पाकिस्तान में हो गया। इस विभाजन के फलस्वरूप यश वापस लाहौर नहीं लौट पाए। 1949 में पंजाब विश्वविद्यालय के दिल्ली विश्वविद्यालय स्थित फीजिक्स ऑनर्स स्कूल से उन्होंनं एम. एस-सी. की पढ़ाई पूरी की।

वर्ष 1942 में मैट्रिक परीक्षा पास करने के बाद वह बी. एस-सी. भौतिकी की पढ़ाई के लिए पंजाब विश्वविद्यालय आ गए। भाग्य ने यहां भी उनके साथ एक खिलवाड़ किया-वह लंबे समय तक बीमार पड़ गए। मगर इस बीमारी के कारण एक अच्छी बात हुई, वो ये कि उन्हें दुनिया भर की अनेक महत्वपूर्ण किताबों को पढ़ने का मौका मिल गया और पाठ्यक्रम से अलग इस प्रकार के अध्ययन ने उनके व्यक्तित्व में नए आयाम जोड़े।

पत्नी निर्मल के साथ यश पाल

कॉस्मिक किरण और कण भौतिकी में अनुसंधान

यश जब एम.एस-सी. अंतिम वर्ष की पढ़ाई कर रहे थे, उसी दौरान टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान (टीआईएफआर) में अनुसंधान सहायक की नौकरी से जुड़ा विज्ञापन अखबार में छपा। हालांकि उस समय यश के एम. एस-सी. के परिणाम नहीं आए थे मगर उन्होंने वहां आवेदन कर दिया और साक्षात्कार के लिए उन्हें बुलावा भी आ गया। संयोगवश उन्हें वह नौकरी मिल गई और वह टीआईएफआर, बांबे (अब मुंबई) को चल दिए, जहां पर उन्होंने अपने जीवन का दो दशक से भी लंबा समय वैज्ञानिक अनुसंधान में बिताया। यश पाल के अनुसंधान क्षेत्र कॉस्मिक किरण और कण भौतिकी थे। टीआईएफआर में यश पाल को देवेंद्र लाल और बर्नार्ड पीटर्स जैसे दो अनुसंधान साथी मिल गए और इस तिकड़ी (लाल, पाल और पीटर्स) ने महत्वपूर्ण अनुसंधान कार्य किए। 1954 में यश पाल अपनी मित्र निर्मल से विवाह के सूत्र में बंध गए। आगे चलकर इनके दो बेटे राहुल और अनिल हुए।

यश पाल और स्पेश एप्लीकेशन सेंटर

भारत के अंतरिक्ष वास्तुकार विक्रम साराभाई के असामयिक निधन के बाद सतीश धवन ने 1972 में अंतरिक्ष आयोग का अध्यक्ष पद संभाला। उनका स्पष्ट तौर पर मानना था कि

अंतरिक्ष कार्यक्रम के अनुप्रयोगों से भारत की आम जनता को लाभ मिलना चाहिए। साराभाई इस सोच को साकार करने की पृष्ठभूमि तैयार कर चुके थे और सैटेलाइट इंस्ट्रक्शनल टेलीविजन एक्सपेरिमेंट (एसआईटीई) की शुरूआत कर दिया था जो एक वर्ष की अवधि के लिए भारत के गांवों में टीवी कार्यक्रमों का प्रसारण करने वाला था।

1972 में स्पेस एप्लीकेशंस सेंटर (एसएसी) की स्थापना उपरोक्त उद्देश्य के साथ अहमदाबाद में की गई। टीआईएफआर छोड़कर एसएसी का निदेशक पद ग्रहण करने और एसआईटीई कार्यक्रम को आगे बढ़ाने के लिए सतीश धवन ने यश पाल को राजी कर लिया। यश पाल ने इस नई जिम्मेदारी का सफल निर्वहन किया और दिन-रात जी-तोड़ मेहनत कर विक्रम साराभाई तथा सतीश धवन के भरोसे का निर्वाह किया। एसआईटीई के जरिए देश में बच्चों की शिक्षा, कृषि, पशुपालन, स्वास्थ्य, स्वच्छता और परिवार नियोजन जैसे मुद्दों पर टीवी कार्यक्रम प्रसारित होने लगे। यह अपने जैसा एक बहुत बड़ा जन संचार प्रयोग था जिसे मूर्त रूप देने में स्पेश एप्लीकेशंस सेंटर के 1500 लोगों की टीम ने काम किया था और इसके लीडर थे यश पाल। यश पाल इस प्रयोग को एक गहन मानवीय अनुभव की संज्ञा देते हुए कहते हैं 'एसआईटीई ने भारत के अंतरिक्ष कार्यक्रम को एक अनोखी प्रेरणा दी जिसके कारण आने वाले वर्षों में अनेक स्थलीय प्रसारण केंद्रों और ट्रांसमीटरों को परस्पर जोड़ने के लिए एक संचार उपग्रह के उपयोग द्वारा राष्ट्रीय टेलीविजन नेटवर्क की स्थापना हुई। विश्व के पहले प्रत्यक्ष प्रसारण उपग्रह टेलीविजन प्रणाली के रूप में एसआईटीई ने विकासशील देशों में शिक्षा के लिए उपग्रहों के प्रयोग के महत्व को साबित करके दिखाया। इस प्रयोग से यह प्रमाणित हुआ कि उपग्रहों का उपयोग शिक्षा संचार और विकास के लिए किया जा सकता है तथा दुनिया को यह संदेश भी संचारित हुआ कि इस तरह की वैज्ञानिक क्षमता भारत के पास है।'

1950 में अपने मित्र देवेन्द्र लाल (दाहिने) के साथ हँसी के कुछ पल

विज्ञान और अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में यश पाल के योगदान को दृष्टिगत रखते हुए भारत सरकार ने 1976 में 'पद्म भूषण' से सम्मानित किया। भारत के ग्रामीणों की आवश्यकताओं को पूरा करने की दिशा में आधुनिक संचार प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग करने में बुद्धिमत्तापूर्ण और मानवीय नेतृत्व के लिए 1980 में एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मान 'मारकोनी फेलोशिप' से यश पाल को नवाजा गया।

एसआईटीई की सफलता के बाद यश पाल का यश अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में न सिर्फ भारत बल्कि पूरी दुनिया में फैल गया। 1982 में संयुक्त राष्ट्र के तत्कालीन महासचिव जेवियर पेरेज डे कूएलर ने यश पाल को बाह्य अंतरिक्ष के अन्वेषण एवं शांतिपूर्ण प्रयोगों पर केंद्रित द्वितीय सुंयक्त राष्ट्र सम्मेलन (UNISPACE-II) का महासचिव बनने का आमंत्रण भेजा। यश पाल ने विएना (आस्ट्रिया) में आयोजित इस सम्मेलन में हिस्सा लिया और इसमें अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

यश पाल की प्रतिभा से भारतीय समाज को व्यापक लाभ पहुंचाने के उद्देश्य से भारत सरकार ने 1983 में उन्हें योजना आयोग का मुख्य सलाहकार बनाया और 1984 में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने उन्हें विज्ञान एंव प्रौद्योगिकी विभाग का सचिव बनाया। इस पद पर वे 1986 तक रहे। 1984 में इंदिरा गांधी की असामयिक मौत के बाद बनी नई सरकार में प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने भारतीय शिक्षा व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन किए जाने के उद्देश्य से उन्हें 1986 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) का चेयरमैन नियुक्त किया।

शिक्षा पद्धति में सुधार लाना यश पाल के जीवन का मुख्य सरोकार था और वह शिक्षा तथा सीखने-समझने के नए तौर-तरीकों में हमेशा रूचि लेते रहे इसलिए यूजीसी में मिली जिम्मेदारी को उन्होंने एक चुनौती की तरह लिया। वह किताबी शिक्षा के बजाय मानवीय संपर्क और सामाजिक परस्पर क्रिया पर बल देते रहे हैं। उन्हें हमेशा यह महसूस होता था कि हमारी शिक्षा पद्धति में कोई गंभीर कमी है जिसे दूर करने से ही मौजूदा स्थिति में सुधार लाया जा सकता है।

अपने अनुभव के आधार पर यश पाल ने यह महसूस किया कि शिक्षा का अर्थ केवल ज्ञान प्रदान करना नहीं है और यह एक-तरफा प्रक्रिया भी नहीं होती बल्कि इसका आशय व्यर्थ की ढेर सारी सूचनाओं के बोझ को कम करके बच्चों के अवगाहन तथा समझने की क्षमता में बढ़ोतरी करना है। यश पाल जोर डालकर यह बात कहते हैं कि समझना वो है जिसके बाद मजा आता है।

1982 में यश पाल को संयुक्त राष्ट्र के बाह्य अंतरिक्ष के अन्वेषण एवं शांतिपूर्ण प्रयोगों पर केंद्रित द्वितीय सुंयक्त राष्ट्र सम्मेलन (UNISPACE-II) का महासचिव बनाया गया

भौतिकी में नोबेल विजेता भारतीय वैज्ञानिक एस. चंद्रशेखर (बाएं) और भारत के मिसाईल मैन ए. पी. जे. अब्दुल कलाम के साथ यश पाल (दाहिने)

यूजीसी चेयरमैन बनने के बाद यश पाल ने भारतीय शिक्षा व्यवस्था में बदलाव लाने की पहल के रूप में चार महत्वपूर्ण कदम उठाए। पहला इंटर-यूनिवर्सिटी एक्सेलेरेटर सेंटर (आईयूएसी), नई दिल्ली; दूसरा इंटर यूनिवर्सिटी सेंटर फॉर एस्ट्रोनामी एंड एस्ट्रोफिजिक्स (आइयूका), पुणे; तीसरा इंफार्मेशन एंड लायब्रेरी नेटवर्क (इंफ्लिबनेट) की स्थापनाएं कीं। पहला सेंटर आईयूएसी नाभिकीय विज्ञान के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय केंद्र के रूप में कार्य कर रहा है, दूसरा आइयूका खगोलिकी, खगोल-भौतिकी अनुसंधान एवं खगोलिकी लोकप्रियकरण जैसे अहम दायित्व निर्वहन कुशलतापूर्वक कर रहा है और तीसरा इंफ्लिबनेट (INFLIBNET) भारत में विशाल संख्या में विश्वविद्यालय पुस्तकालयों को जोड़कर विद्यार्थियों एवं शोधार्थियों के बीच ज्ञान के एक महासेतु का काम कर रहा है। चौथा महत्वपूर्ण कदम यश पाल ने उठाया कि अनेक राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं और संस्थानों को डीम्ड विश्वविद्यालय का दर्जा दे दिया जिसके परिणामस्वरूप यहां के विद्यार्थी, शिक्षक और वैज्ञानिक अध्ययन-अनुसंधान के लिए खुलकर एक-दूसरे से संवाद बनाते हैं तथा ज्ञान का प्रसार बेरोक-टोक होता है।

विज्ञान की जनसमझ में यश पाल की भूमिका

यश पाल ने विज्ञान के लोकप्रियकरण और भारतीय समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास हेतु नैसर्गिक तौर पर जो भी योगदान दिया, वे सब उनके मन से निकले सरोकार थे और उन बातों को उन्होंने स्वयं महसूस किया था। एक वरिष्ठ वैज्ञानिक, निदेशक, सचिव और नीति निर्माता जैसे दायित्वपूर्ण पदों पर रहते हुए उन्हें स्कूली बच्चों, ग्रामीणों, वैज्ञानिकों तथा राजनेताओं से मिलकर जो भी ज्ञान हुआ, उनके आधार पर उन्होंने ज्ञान-विज्ञान को समझने के लिए अपने सुझाव दिए। सबसे पहले यश पाल प्रत्यक्ष रूप से 'भारत जन ज्ञान-विज्ञान जत्था' से जुड़े और फिर एनसीएसटीसी-नेटवर्क के महत्वपूर्ण कार्यक्रम राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस में प्रेरणा-सूत्र बन कर उभरे।

विज्ञान की जटिल बातों को रोचक ढंग से समझाने में महारत हासिल है यश पाल को

टेलीविजन पर अपनी एक अनोखी और प्रभावोत्पादक शैली में विज्ञान की गूढ़ बातों को सरलता से अंग्रेजी व हिंदी में समझाने के कारण उनकी लोकप्रियता को पंख लगे। टीवी धारावाहिक 'टर्निंग प्वाइंट; में देश भर से आए विज्ञान प्रश्नों के सीधे-सरल जवाब देने वाले इस यशस्वी विज्ञान संचारक ने विज्ञान से जुड़े कार्यक्रम की लोकप्रियता को एक नया आयाम प्रदान किया तो वहीं 'मानव की विकास' जैसे धारावाहिक में उनकी कमेंट्री ने श्रोताओं को चमत्कृत कर दिया।

टर्निंग प्वाइंट के लगभग 150 धारावाहिकों में यश पाल ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। इसके बाद वह 'भारत की छाप', 'तर-रम-तू' और 'रेस टू सेव दि प्लैनेट' जैसे लोकप्रिय टीवी धारावाहिकों में भी वे नजर आए। सूर्य ग्रहण (1995 और 1999) और शुक्र पारगमन (2004) जैसी आकाशीय घटनाओं के समय यश पाल टीवी पर अपने अनोखे अंदाज में दर्शकों को वैज्ञानिक जानकारी प्रस्तुत करते रहे।

विज्ञान और शिक्षा के क्षेत्र में अतुलनीय योगदान के लिए भारत सरकार ने पद्म भूषण (1976) और पद्म विभूषण (2013) जैसे महत्वपूर्ण नागरिक सम्मानों से विभूषित किया और नेशनल रिसर्च प्रोफेसर भी बनाया। विज्ञान लोकप्रिकरण के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्यों के लिए विश्व का सर्वश्रेष्ठ यूनेस्को कलिंग पुरस्कार से भी वर्ष 2009 में यश पाल को सम्मानित किया जा चुका है। 89 वर्षीय यश पाल आज भी विज्ञान के बारे में बच्चों में रूचि उत्पन्न करने को लेकर उत्साहित हैं जो उनके लगन व समर्पण को प्रकट करता है। हम उनके दीर्घायु होने की कामना करते हैं।

mmgore1981@gmail.com

जीवन की एक भाषा होती है

मनुष्य की समझ या अक्लमंदी से जुड़ा समस्त विश्वास चार वेदों में समाहित हैं। उपनिषद इन चारों वेदों पर केवल व्याख्याएं (टिप्पणियां) हैं। राम महज एक नेक मनुष्य थे और रामायण, महाभारत तथा गीता से हमें अनेक शिक्षाएं तथा नीतिपरक सबक सीखने को मिलते हैं। इन साहित्यों में जो भी चमत्कार वाले प्रसंग हैं, वे सभी बाद में विवेकहीन लोगों के द्वारा फिजूल में जोडे गए हैं। वास्तव में, प्राचीन आर्य सब कुछ जानते थे और हम भी जान पायेंगे अगर हम वेदों को पढें, समझें और उन्हें आत्मसात करें।

आम तौर पर यह माना जाता है कि इस ग्रह पर हम पहले समझदार प्रजाति हैं। किसी ने कछुए, पेंग्विन या डाल्फिन से कभी नहीं पूछा कि क्या वे समझदार प्राणी हैं या उनकी नजर में हम समझदार हैं। मगर हमें किसी न किसी पूर्वधारणा के साथ आरम्भ तो करना होता और स्वाभाविक रूप से हम मनुष्य अपने पक्ष में ही बात करेंगे। खैर, दुनिया के विभिन्न हिस्सों से एकत्र की गई जंतु जातियों के सदस्यों में अधिकांश हमारे जैसा व्यवहार प्रदर्शित नहीं करते हैं। अपने को बेहद समझदार प्राणी मानने के दौरान मेरे मन में अचानक इस मूल बात से हटकर एक ख्याल आता है। यह सबसे अच्छा होगा यदि यहां पर मैं समय के साथ विकसित हुई मेरी अपनी समझ (जागरूकता) का विश्लेषण करने का प्रयास करूं। मैं बता दूं कि मेरी परवरिश एक आर्य समाज परिवार में हुई है। मनुष्य की समझ या अक्लमंदी से जुडा समस्त विश्वास चार वेदों में समाहित हैं। उपनिषद इन चारों वेदों पर केवल व्याख्याएं (टिप्पणियां) हैं। राम महज एक नेक मनुष्य थे और रामायण, महाभारत तथा गीता से हमें अनेक शिक्षाएं तथा नीतिपरक सबक सीखने को मिलते हैं। इन साहित्यों में जो भी चमत्कार वाले प्रसंग हैं, वे सभी बाद में विवेकहीन लोगों के द्वारा फिजूल में जोडे गए हैं। वास्तव में, प्राचीन आर्य सब कुछ जानते थे और हम भी जान पायेंगे अगर हम वेदों को पढें, समझें और उन्हें आत्मसात करें। अपने बचपने में मैंने आर्य समाज के सभी नियम याद किये थे और मेरे बाल मन पर इस सबक का निस्संदेह गहरा असर हुआ था। हम इस बात को लेकर आश्वस्त थे कि हम सनातनी या अन्य धर्मों की अपेक्षा अधिक विज्ञानसम्मत थे। जाति-प्रथा या मूर्ति पूजा के हम घोर विरोधी थे। हम यह भी मानते थे कि ईश्वर केवल एक है और अनेक ईश्वर की कहानियां अनभिज्ञ लोगों द्वारा रची गई हैं। जाति प्रथा में विश्वास नहीं रखने के कारण हमने बहुत पहले ही अपने सरनेम हटा दिए थे (यह बहुत आसान भी था

यह कहना गलत होगा कि मैंने अपने आर्य समाजी बचपन को पूरी तरह धो डाला। वैदिक मन्त्रों के एक खास प्रकार से किये जाने वाले मंत्रोच्चार और यज्ञ के दौरान प्रयोग की जाने वाली सामग्री का गंध भी मुझे पसंद हैं। एक परंपरागत हिन्दू मंदिर जाने में मैं आज भी असहज महसूस करता हूं क्योंकि मैं वहां के रीति–रिवाजों से परिचित नहीं हूं।

क्योंकि उस जमाने के पंजाब में अक्सर सरनेम नहीं रखा जाता था)। लेकिन जब मेरी उम्र 13 साल की हुई और मुझे अपना स्कूल बदलना था, तब मैंने अपना सरनेम 'आर्य' रख लिया। इसी सरनेम के साथ मैंने अपना मैट्रिकुलेशन पूरा किया। 1942 में जब पूरे देश में आजादी के संग्राम का माहौल था, उस समय 15 साल की उम्र में मैंने अपना सरनेम देश-प्रेम की भावना में 'भारती' रख लिया। उस समय मैं कॉलेज जाता था और खूब पढ़ाई किया करता छात्र आन्दोलनों में भी हिस्सा लिया करता था। यहाँ पर मैं इस बात को दर्ज करना चाहता हूं कि हमारी चेतना पर, व्यक्तिगत अनुभवों के अलावा हमारी बौद्धिक समझ प्रभाव सशक्त होता है। तभी कुछ वर्षों के बाद, मैंने 'भारती' सरनेम भी हटा लिया, मगर मैंने अपने परिवार के अन्य सदस्यों की तरह अपना मूल सरनेम 'भूटानी' का प्रयोग कभी नहीं किया। हालांकि आधुनिक व्यक्ति की यह एक आवश्यकता होती है कि वह कोई न कोई सरनेम लगाए। इस लिहाज से मैंने भी कई सरनेम लगाए जबकि बाद में लोग मुझे मिस्टर पाल कहकर पुकारने लगे और मेरी पत्नी श्रीमती पाल हो गईं तथा इस तरह मेरे बच्चों का सरनेम भी स्वाभाविक रूप से पाल हो गया।

यह कहना गलत होगा कि मैंने अपने आर्य समाजी बचपन को पूरी तरह धो डाला। वैदिक मन्त्रों के एक खास प्रकार से किये जाने वाले मंत्रोच्चार और यज्ञ के दौरान प्रयोग की जाने वाली सामग्री की गंध भी मुझे पसंद हैं। एक परंपरागत हिन्दू मंदिर जाने में मैं आज भी असहज महसूस करता हूं क्योंकि मैं वहां के रीति-रिवाजों से परिचित नहीं हूं। मैं मानता हूं कि अपने जीवन में मैंने विज्ञान के क्षेत्र में कुछ गंभीर काम किये हैं। हालांकि शायद ये महान कार्य की श्रेणी में नहीं आते मगर ये रोचक व गंभीर जरुर रहे हैं और इनसे मुझे बौद्धिक आनंद मिला है। विज्ञान की समझ उत्पन्न करने में मेरे से बेहतर प्रतिभावान लोग मौजूद हैं। मेरा विश्वास है कि प्रकृति की क्रियाओं में कोई गहन अध्यात्म का तत्व अवश्य होता है जो सूक्ष्म व स्थूल और सजीव तथा निर्जीव के बीच सुंदर एवं तार्किक सेतु का काम करता है। यह तत्व ही संभवतः तारों, मंदाकिनियों और ब्रह्माण्ड को पूरा न सही कुछ हद तक समझने में हमें समर्थ बनाता है।

विज्ञान की जटिलताओं और गूढ़ताओं के अलावा भी इसमें बहुत कुछ अनुत्तरित है। मसलन 'मैं कौन हूं', 'मैं किससे संबंधित हूं', 'इन सबके क्या मायने हैं', इन सबसे कुछ सुंदर जवाबों को पाने की शुरुआत होती है जो रहस्योद्घाटन स्रोतों पर आधारित नहीं होते। हमारे पृथ्वी ग्रह पर लगभग चार अरब वर्ष पहले एक कोशिका से हुए जीव विकास के जरिये मैं अपनी वंशावली को चिह्नित कर सकता हूं और यह मेरे लिए एक महत्वपूर्ण बात है। इसी पहली कोशिका के विकास क्रम में इस ग्रह पर सभी जीवधारियों की वंशावलियों का पता लगाना संभव है। सामानांतर रूप में यह भी सच है कि जीवधारियों की दीर्घजीविता प्रकृति में मौजूद अजीव पदार्थों और प्राकृतिक संसाधनों के मध्य सहयोग तथा सहजीविता पर निर्भर करती है।

हमारे जीवन की एक भाषा होती है जिसकी कुछ वर्णमालायें हैं और कमोबेश यही भाषा और वर्णमालाएं हमारी धरती के सभी जीवधारियों में मौजूद हैं। हो सकता है कि हमारी धरती के जैसा जीवन हमारे आस-पास या सुदूर आकाशीय पिंडों में भी मौजूद हो और हमारे या हमसे जिज्ञासु और बेहतर जीव जातियां वहां विद्यमान हों। यह अनिश्चित है और ऐसा होना संभाव्य भी है। इस दिशा में खोज चल रही है और क्या पता जब तक इस गुत्थी का जवाब मिले, उस वक्त मैं न रहूं।

मैं सोचता हूं, जब सूर्य का जन्म हुआ होगा और उसके बाद हमारी पृथ्वी सहित अन्य ग्रहों का विकास हुआ तथा यह कैसा विरल संयोग है कि पृथ्वी पर ऐसी प्राकृतिक दशाएं उपयुक्त हो पाईं जिससे यहां जीवन का संचार हुआ। इसे हम प्रकृति का एक उपहार मान सकते हैं। टैगोर ने एक पंक्ति लिखी थी 'प्रकृति में चीजों की योजना के ऐसे अनोखे सरोकार निहित हैं जो हमें आनंद प्रदान करते हैं।'

मुझे किसी ने बताया कि कोई दो हजार साल पहले हमारे ग्रह पर कुछ लाख लोग पाए जाते थे। इस बात से यह स्पष्ट होता है कि हजारों साल पहले लोग छोटे-छोटे समूहों में जीवन-यापन करते थे और ये समूह एक-दूसरे से दूर रहते थे। मैं सोचता हूँ कि ऐसा करना लाजमी था। दूरी के कारण उनकी भाषाएँ और दर्शन में भी अंतर स्वाभाविक थे। यह आश्चर्यजनक है कि इन कारणों से दुनिया में सामाजिक और सांस्कृतिक स्तरों पर इतनी विविधता आई। इस विविधता के बावजूद इन तमाम मानव समाजों के गहरे मूलभूत दार्शनिक प्रश्नों में समानता थी। इस तरह के मानव अतीत की साधारण समझ हमें पृथ्वी के अन्य मानव समाजों के करीब लाती है और उन्हें हमारा साथी ग्रहवासी बनाती है। मेरी दृष्टि में, पृथ्वी के अन्य मानव समाज व जीवधारी और हमारे बीच के प्राकृतिक संबंध का उत्सव ही यहां पर जीवन का आधार है।

लौकिक बोध

ऊपर मैंने जो कुछ भी कहा, उसे मैं लौकिक बोध या वैश्विक समझ का नाम देना चाहूँगा। यह बोध मुझे न केवल पृथ्वी पर सर्वश्रेष्ठ प्राणी मानने की ओर ले जाता है बल्कि अन्य जीवधारियों को भी सर्वश्रेष्ठ समझने को प्रेरित करता है। मैं स्वीकार करता हूं कि ऐसा सोचना सभी मनुष्यों के लिए कठिन है मगर ऐसी सोच स्थायी मानव अस्तित्व के लिए अनिवार्य है। इस तरह का दृष्टिकोण विकसित नहीं करने पर हेनरी थोरे के शब्दों में 'यंत्रों के यंत्र' बनकर हम रह जायेंगे।

इस लौकिक बोध को उत्पन्न करने में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का बहुत महत्व होता है। अधिकांश लोगों को गलतफहमी होती है और वे वैज्ञानिक दृष्टिकोण का रिश्ता विज्ञान और प्रौद्योगिकी के बारे में सीखने से निकालते हैं। इस शब्द के प्रणेता देश के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरु ने दरअसल इस सोच के साथ यह शब्द रचा था कि लोग तार्किक ढंग से या सूझ-बूझ के साथ अपने जीवन के निर्णय लें और ऐसी मति ही वास्तव में वैज्ञानिक दृष्टिकोण है न कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी को सीखना। मैं नहीं मानता कि जिन देशों में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में ज्यादा तरक्की हुई है, वहां के लोगों में उच्च स्तर का वैज्ञानिक दृष्टिकोण और वैश्विक समझ आवश्यक रूप से मौजूद होता है।

वैश्वीकरण और मैं

आज के समय हम सभी वैश्वीकरण की प्रक्रिया से गुजर रहे हैं। हमें परिवहन व संचार के आधुनिक माध्यमों का शुक्रमंद होना चाहिए। हम सब जानते हैं कि वैश्वीकरण की लहर केवल एकतरफा चलती है, कुछ विशेष और सशक्त से शेष सभी की ओर। इस प्रवृत्ति के कारण तनाव का बढना लाजमी है। हमें यह समझना चाहिए कि वैश्वीकरण की वर्तमान प्रक्रिया वैश्विक समझ की अवधारणा के प्रति पूर्णतः विरोधात्मक है। वैश्वीकरण का मुख्य जोर इस धारणा से संबंधित है कि दुनिया का विशाल हिस्सा सामान और सेवाओं के लिए केवल एक बाजार है। इस तरह की परिस्थितियों में अंतर्राष्ट्रीय समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। मेरी समझ से प्रौद्योगिकियाँ मानव समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होनी चाहिए और इस प्रक्रिया को लेकर कोई राजनीति नहीं होनी चाहिए।

वैश्वीकरण की वर्तमान प्रक्रिया वैश्विक समझ की अवधारणा के प्रति पूर्णतः विरोधात्मक है। वैश्वीकरण का मुख्य जोर इस धारणा से संबंधित है कि दुनिया का विशाल हिस्सा सामान और सेवाओं के लिए केवल एक बाजार है। इस तरह की परिस्थितियों में अंतर्राष्ट्रीय समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। मेरी समझ से प्रौद्योगिकियाँ मानव समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होनी चाहिए और इस प्रक्रिया को लेकर कोई राजनीति नहीं होनी चाहिए।

सामाजिक प्रतिरक्षा

इस आलेख में स्वयं, दूसरे और सामाजिक व्यवहारों में प्रतिरक्षा की भूमिका पर कुछ बात मैं रखना चाहता हूँ। यह स्पष्ट है कि सुरक्षा क्रिया-विधि या प्रतिरक्षा प्रणाली के बिना कोई भी जैविक या सामाजिक जीव खतरे में रहता है। किसी आक्रमण की स्थिति में छोटा ही पुलिस बल अत्यावश्यक होता है। लेकिन बहुत विशाल सेना या बहुत विशाल सुरक्षा या प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया बीमारी या विखंडन पैदा कर सकती है जिसका अच्छा होना मुश्किल है। वास्तव में, अति सुरक्षा रक्षक के लिए खतरनाक होती है।

इन बातों से यह प्रतीत होता है कि सभी बाहरी प्रभाव खतरनाक होते हैं क्योंकि वे प्रत्यक्ष या अतार्किक प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया के द्वारा 'स्वयं' को भंग करते हैं। जैविक और सामाजिक दोनों ही तंत्रों में सहजीविता की संरचनाओं के लिए प्रक्रियाएं होती हैं जो चयनित रूप से प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया को दबाती हैं। विकासवादी जीव विज्ञान में ऐसे अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं, जिसमें जीवधारी उचित बदलाव और समायोजन के द्वारा अपना जीवन व्यतीत करते हैं और इसमें सहजीवी संबंधों की अहम भूमिका होती है। सामाजिक विकास के लिए समय के पैमाने जीव विज्ञान के समान लम्बे नहीं हो सकते हैं, परंतु ये हमारी प्रौद्योगिकियों की क्रियान्वयन अवधियों से तो लम्बे होते ही हैं। इस सदी के उत्तरार्द्ध में हमारे सामने ऐसी चुनौतियां हैं, जो पहले के युगों से गुणात्मक रूप से अलग हैं। दूसरी तरफ मेरा यह भी विश्वास है कि इन चुनौतियों को दूर किया जा सकता है। वैश्विक समझ की आधारभूत अनिवार्यता मुझे भविष्य को लेकर आशावादी बनाती है और मुझे विश्वास है कि हम इन चुनौतियों को पार कर आगे निकल जायेंगे।

palyash.pal@gmail.com

हिंदी में विज्ञान साहित्य का विहंगावलोकन

शुकदेव प्रसाद

हिंदी और हिंदीतर भाषाओं में विज्ञान साहित्य के निर्माण के प्रयास 19वीं शताब्दी के अवसान और 20वीं शती के उन्मेष काल से ही आरंभ हो चुके थे और 20वीं शती के साठादि-सत्तरादि तक इस दिशा में अभूतपूर्व प्रयास हुए लेकिन अस्सी आदि तक आते-आते यह परंपरा शनैः शनैः अवसान को प्राप्त होने लगी।

हिंदी में विज्ञान साहित्य के निर्माण की एक गौरवशाली और सुदीर्घ परंपरा रही है जिसकी अब स्वर्णिम स्मृतियां ही शेष हैं। भाग्यवश हमारे बीच अब कुछेक लोग ही बचे हैं जिन्होंने उस काल खंड को जिया और उससे प्रेरित होकर उनमें भी ऐसी प्रवृत्ति का प्रादुर्भाव हुआ और उन्होंने अपनी ज्ञान की सीमाओं में और स्वाध्याय से इस परंपरा को पुष्पित और पल्लवित किया। इस सुदीर्घ यात्रा के विहंगावलोकन के लिए हमें अतीत में जाना होगा। हिंदी और हिंदीतर भाषाओं में विज्ञान साहित्य के निर्माण के प्रयास 19वीं शताब्दी के अवसान और 20वीं शती के उन्मेष काल से ही आरंभ हो चुके थे और 20वीं शती के साठादि-सत्तरादि तक इस दिशा में अभूतपूर्व प्रयास हुए लेकिन अस्सी आदि तक आते-आते यह परंपरा शनैः शनैः अवसान को प्राप्त होने लगी। ऐसा क्यों कर हुआ, उसकी चर्चा हम आगे करेंगे।

हिंदी में विज्ञान साहित्य के पुरोधा स्वामी डॉ.सत्य प्रकाश सरस्वती एक स्थल (अगस्त,1937) पर 1855 में आगरे से छपी पंडित कुंज बिहारी लाल की किताब 'लघु त्रिकोणमिति' को आधुनिक विज्ञान का प्रथम ग्रंथ सूचित करते हैं लेकिन इसके पूर्व ओंकार भट्ट 'ज्योतिष चंद्रिका' 1840 में ही प्रस्तुत कर चुके थे। बहरहाल, इसके बाद वापूदेव शास्त्री कृत संस्कृत में लिखी 'त्रिकोणमिति' का वेणीशंकर झा कृत हिंदी अनुवाद 1859 में प्रकाशित हुआ। फिर 1860 में आरा से बलदेव झा ने अंग्रेजी पुस्तक 'पापुलर नेचुरल फिलासफी' का 'सरल विज्ञान विटप' नाम से हिंदी अनुवाद प्रकाशित किया। 1859-60 में पादरी शोरिंग द्वारा संपादित 'विद्यासागर' नामक विज्ञान पुस्तक माला मिर्जापुर से प्रकाशित हुई। सरकार की ओर से 1861 में 'मैन' से लेसन्स इन जनरल केमिस्ट्री' का मथुरा प्रसाद मिश्र कृत हिंदी अनुवाद छपा। नाम था- 'बाह्य प्रपंच दर्पण'। 1860 में वंशीधर, मोहनलाल और कृष्ण दत्त द्वारा अनुवादित ग्रंथ 'सिद्ध पदार्थ विज्ञान' (यंत्र शास्त्र का ग्रंथ) प्रकाशित हुआ। 1860 में ही प्रयाग से बाल कृष्ण शास्त्री खंडरकर की ज्योतिष का 'खगोल' नाम से हिंदी अनुवाद हुआ।

1867 में जयपुर के राजवैद्य कालिन एस. वैलेन्टाइन ने 'वायु की उत्पत्ति' और रसायन विद्या की 'संक्षेप पाठ' नामक किताब छपवायी। आगरा निवासी बद्री लाल ने एक अंग्रेजी किताब का अनुवाद किया 'रसायन प्रकाश' नाम से, जो कलकत्ते के बैपटिस्ट मिशन प्रेस ने छापा। इसी किताब का दूसरा संस्करण 1883 में लखनऊ के नवल किशोर प्रेस ने छापा। 1887 में वंशीधर की पुस्तक 'चित्रकारी सार' छपी।

1870 से 1880 के बीच रूड़की इंजीनियरिंग कॉलेज के अध्यापक जगमोहन लाल ने कई पुस्तकें कॉलेज के छात्रों के लिए लिखीं। इसी समय 1875 में काशी के मिश्र बंधुओं- लक्ष्मीशंकर, प्रभाशंकर और रमाशंकर ने 'पदार्थ विज्ञान विटप', 'त्रिकोणमिति', 'प्रकृति विज्ञान विटप', 'गति विद्या', 'स्थिति विद्या' और 'गणित कौमुदी' पुस्तकें लिखीं। 1882 में लाहौर के नवीन चंद्र राय ने पंजाब विश्वविद्यालय में पढ़ाई के लिए 'स्थिति तत्व' और 'गणित तत्व' पुस्तकें छपवायीं। इसी वर्ष लखनऊ के नवल किशोर प्रेस ने 'सृष्टि का वर्णन' पुस्तक छापी।

1883 में इलाहाबाद जिले के निवासी काशी नाथ खत्री द्वारा अनुवादित कृषि की पहली पुस्तक 'खेती की विद्या के मुख्य सिद्धांत' शाहजहाँपुर के आर्य दर्पण प्रेस में छपी। 1885 में काशी के पंडित सुधाकर द्विवेदी ने गणित की उच्चकोटि की किताबें 'चलन कलन' और 'चल राशि कलन' प्रकाशित कीं। पंडित सुधाकर द्विवेदी ने वराहमिहिर कृत 'पंच सिद्धांतिका' की टीका 1889 में प्रकाशित की और 1902 में 'गणतरंगिणी' लिखी। प्रायः इसी समय उदय नारायण सिंह ने 'सूर्य सिद्धांत' की टीका प्रस्तुत की (1903) और बलदेव प्रसाद मिश्र ने 1906 में इसी ग्रंथ की टीका लिखी। उदयनारायण सिंह वर्मा ने प्रख्यात गणितज्ञ आर्यभट (5वीं शती) के 'आर्यभटीयम्' नामक ग्रंथ का हिंदी अनुवाद 1906 में प्रकशित किया। पंडित सुधाकर द्विवेदी ने 'गणित का इतिहास' (1910) लिखकर इसका पूर्ण परिपाक कर दिया। डॉ.

विभूति भूषण दत्त और अवधेश नारायण सिंह प्रणीत 'हिस्ट्री ऑफ हिंदू मैथेमेटिक्स' का हिंदी अनुवाद 'हिंदू गणित शास्त्र का इतिहास' (भाग 1, अनु. डॉ. कृपा शंकर शुक्ल, हिंदी समिति, लखनऊ,1954) भी इस विधा का गंभीर और प्रामाणिक अध्ययन है। इसी परंपरा में डॉ. ब्रज मोहन कृत 'गणित का इतिहास' (हिंदी समिति, लखनऊ, 1965) , डॉ. गोरख प्रसाद कृत 'भारतीय ज्योतिष का इतिहास', 'नीहारिकाएं', 'सौर परिवार' और 'चंद्र सारिणी' आदि ज्योतिष और खगोल के अप्रतिम ग्रंथ हैं। डॉ. गोरख प्रसाद ने मेधावी खगोलज्ञ फ्रेड हॉयल की 'फ्रंटियर्स ऑफ एस्ट्रोनॉमी' का 'ज्योतिष की पहुंच' शीर्षक से उत्कृष्ट हिंदी अनुवाद भी किया। इसी तरह पैट्रिक मूर कृत 'दि प्लेनेट्स' का 'ग्रह और उपग्रह' शीर्षक से (अनु. पवन कुमार जैन, सी.एस.टी.टी., 1968) और वी. फेडिंस्की कृत 'मीटिऑर्स' का हिंदी अनुवाद 'उल्काएं (अनु. पवन कुमार जैन, सी.एस.टी.टी., 1964) शीर्षक से प्रायः उसी काल में पाठकों की जिज्ञासाओं के शमन के लिए सामने आयीं। इसके पहले ही 'सूर्य सिद्धांत' का विज्ञान भाष्य (दो खंडों में, भाष्यकार महावीर प्रसाद श्रीवास्तव) विज्ञान परिषद, प्रयाग ने दिसंबर 1940 में ही प्रकाशित करके ज्योतिष (सिद्धांत) में अभिरुचि रखने वाले पाठकों की उत्कंठाओं का शमन कर दिया था। आगे चलकर पांचवीं सदी के प्रख्यात खगोलज्ञ आर्यभट के अपूर्व ग्रंथ 'आर्यभटीयम्' (रचना काल ई. सन् 499) का हिंदी अनुवाद 'इन्सा' ने भी आर्यभट की पंद्रहवीं जन्मशती के अवसर पर 1976 में प्रस्तुत किया। अनुवाद राम निवास राय ने किया था।

अब विज्ञानेतिहास पर दृष्टिपातः प्राचीन भारतीय विज्ञानों पर गवेषणापरक ग्रंथों की रचना की परंपरा आचार्य प्रफुल्ल चंद्र राय प्रणीत 'हिस्ट्री ऑफ हिंदू केमिस्ट्री' (दो खंड, प्रकाशन क्रमशः 1902, 1908) से आरंभ होती है। इन ग्रंथों के अवलोकन से, प्राचीन भारत में रसायन की महनीय परंपराओं से परिचित होकर पाश्चात्य जगत विस्मित और विमूढ़ रह गया। इस परंपरा को आगे बढ़ाया इलाहाबाद विश्वविद्यालय में रसायन विभाग के आचार्य डॉ. सत्य प्रकाश (आगे चलकर स्वामी डॉ. सत्य प्रकाश सरस्वती) ने। डॉ. सत्य प्रकाश प्रणीत 'प्राचीन भारत में रसायन का विकास' (प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग, उ.प्र.,1960) आचार्य राय की ही परंपरा का गौरव वर्धन है। डॉ. सत्य प्रकाश प्रणीत 'वैज्ञानिक विकास की भरतीय परंपरा' (बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, 1959) और 'फाउंडर्स ऑफ साइंसेज इन एन्शेंट इंडिया' (1965) प्राचीन भारत की गौरवमयी विज्ञानीय परंपराओं के गहन अनुशीलन और अध्ययन की परिणतियां हैं। उक्त ग्रंथ का 'भारतीय विज्ञान के कर्णधार' नामक शीर्षक से हिंदी अनुवाद मूल प्रकाशक रिसर्च इंस्टीट्यूट ऑफ एन्शेंट साइंटिफिक स्टडीज, नई दिल्ली ने 1967 में प्रकाशित किया जो आज भी उपलब्ध है। इसी क्रम में उनका एक और ग्रंथ 'क्वायनेज एन एन्शेंट इंडिया' भी उल्लेखनीय है। वैदिक ज्यामिति (वैदिक काल में गणित की उद्भावना नहीं हुई थी) और प्राचीन भारतीय गणित पर उन्होंने दो और ग्रंथों -'द शुल्ब सूत्राज' (1979) और 'द भक्षाली मैनुस्क्रिप्ट' (1979) की रचना की है। प्रथम ग्रंथ में इस तथ्य का रहस्योद्घाटन है कि कथित पाइथोगोरस प्रमेय पाइथागोरस की न होकर बौधायन, आपस्तंब और कात्यायन आदि भारतीय ऋषियों के 'शुल्ब सूत्र' की परिणति है जबकि दूसरे ग्रंथ में प्राचीन भारत में 'शून्य' के आविष्कार पर प्रकाश डाला गया है।

विगत शती के आरंभ में पेशावर के भक्षाली गांव में शारदा लिपि में भोज पत्र पर लिखी हुई पुरानी गणित की एक पुस्तक मिली जिसको पढ़ने से ज्ञात हुआ कि यह लिपि दसवीं शती की है। कुछ विद्वानों की धारणा है कि उक्त पांडुलिपि (भक्षाली हस्तलिपि) तीसरी-चौथी शती की मूल कृति की प्रतिलिपि है। इस हस्तलिपि में 1 से 10 तक के अंक संकेत स्पष्टतः अंकित हैं, जिसमें शून्य ने बिंदी का आकार ग्रहण किया है। इन साक्ष्यों का यही निष्कर्ष है कि शून्य प्रणाली का आविष्कार प्राचीन भारत में पहली शती में ही हो चुका था जिसे जन-मानस की पद्धति बनने में कम से कम 10 शतियां व्यतीत हो गईं।

ऊपर हमने जो विवृति प्रस्तुति की, उसका मंतव्य यही है कि अनेक विद्वानों, विज्ञानाचार्यों और विज्ञान के अनुरागियों ने भारत की महनीय विज्ञान परपंराओं की सुसम्बद्ध विचार सारणियां निर्मित की फलस्वरूप भावी पीढ़ियों के लेखकों के लिए एक उर्वर भाव भूमि निर्मित हुई और आजादी के बाद ही हिंदी-विज्ञान की ऐसी धूम मची कि लगा कि हिंदी अब आई कि तब आई। केंद्रीय हिंदी निदेशालय और वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग की स्थापना और लाखों तकनीकी शब्दों का निर्माण, प्रादेशिक हिंदी ग्रथ अकादमियों की स्थापनाएं, विज्ञान के मौलिक ग्रंथों की रचना और प्रख्यात कृतियों के हिंदी अनुवाद की प्रक्रिया जिस उत्साह और उमंग के आरंभ हुई, उसकी धार अस्सी आदि तक आते-आते मंद पड़ चुकी थी। आइए, इन कारणों की पड़ताल करें।

स्वाधीनता के उपरांत विज्ञान साहित्य के नाम पर हिंदी में जो कुछ लिखा गया, उसका अधिकांश अनुवाद की बैसाखियों पर निर्मित हुआ है, मौलिक और आधिकारिक लेखन तो अल्पांश है और यही वह मूल कारण है कि कुछ अंगुलिगण्य लोगों के तमाम व्यक्ति निष्ठ प्रयासों के बाद भी हिंदी-विज्ञान लेखन को वह त्वरा नहीं मिल सकी जो वांछनीय थी।

वैज्ञानिक विषयों के पठन-पाठन या लेखन में माध्यम उतनी बड़ी

बाधा नहीं है जितनी कि तकनीकी शब्दों की जटिलता। तकनीकी शब्दों की जटिलता में विद्यार्थी उलझ कर रह जाता है और पाठ्य सामग्री उसकी समझ के परे हो जाती है। एक अरसे तक डॉ. रघुवीर का कोश ही तकनीकी पुस्तकों के अनुवाद और हिंदी में मौलिक लेखन का आधार रहा है। डॉ. रघुवीर के कोश

के आधार पर जो किताबें लिखी गईं, उनकी भाषा इतनी गरिष्ठ होती थी कि वे कभी बोधगम्य बन ही नहीं सकीं। उस समय की शब्दावली की एक झलक आपको निम्नलिखित उदाहरणों से मिलेगीः

प्रलंब जिह्वा शुकपरी	(माउंटेन केमेलियन)
छद्म मूर्च्छालु	(ओपोसम)
मक्षिका-बंधनी	(वीनस फ्लाई ट्रैप)
प्याली-पाशीय	(बटरवर्ट)
ओषजन	(ऑक्सीजन)
नत्रजन	(नाइट्रोजन)
मत्स्यगोधिका या मीन सरट	(इक्थ्योसॉर)
सिंधुगोधिका या सिंधु सरट	(प्लेसियोसॉर)
महागोधिका या दानव सरट	(डाइनोसॉर)
पृष्ठ-कंटकी	(डिमेट्रोड्रोन)

इन उदाहरणों से आप समझ सकते हैं कि प्रारंभिक शब्दावली में लोकप्रियता के कितने आसार थे। ऐसी जटिल शब्दावली न तो चल सकती थी और न चली ही।

शब्दावली निर्माण की भी अपनी विसंगतियां हैं। शब्दों में बोधगम्यता, सहजता के साथ ही अर्थ-बोध भी होना चाहिए जिससे कि वे प्रचलन में आ सकें। तकनीकी शब्दों की जटिलता इस मार्ग में भारी अवरोध है। जिन लेखकों ने डिग्री स्तर की विज्ञान-विषयक पुस्तकें लिखी हैं, उन्हीं को फिर से पढ़ने को वही पुस्तकें दी जाएं तो उन्हें अपना ही लिखा हुआ समझने के लिए पारिभाषिक शब्दों के मूल अंग्रेजी शब्द देखने होंगे। वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग ने आयुर्विज्ञान, भौतिकी, रसायन, प्राणिविज्ञान, वनस्पतिविज्ञान, कम्प्यूटर विज्ञान विषयक शब्दावलियों का निर्माण कर लिया है। फिर भी इनमें भी परिष्कार की व्यापक संभावनाएं हैं। कुछेक हिंदी पुस्तकों से, जो इन्हीं के आधार पर लिखी गई हैं अथवा अनूदित हुई हैं, कुछ अंश उद्धृत हैं, जो इस धारणा की पुष्टि करते हैं : 'प्रकाश-संश्लेषी पटलिकाओं के सतह पर फाइकोइरिथ्रिन युक्त गोलाकार तथा फाइकोसियानिन युक्त चकती आकार फाइको बीलीसोम अनुरेखीय रूप से व्यवस्थित होते हैं। हरिताणु परिवर्धन की प्रारंभिक अवस्थाओं में प्रथम थाइलेक्वायड हरिताणु के अतिरिक्त घटक के अंतर्वेशन के रूप में उत्पन्न होता है, जबकि अनुगामी थाइलेक्वायड प्रथम निर्मित थाइलेक्वायडों के अंतर्वेशन से निर्मित प्रतीत होते हैं।' (शैवाल परिचय, उ.प्र. हिंदी संस्थान, लखनऊ, 1974 पृ.92) एक अन्य पुस्तक (अनूदित) का अंश देखिए (यह अंश पेंटोक्सिलेलिज अध्याय के परिचय के रूप में दिया गया है) : 'जीवश्म पौधे, वृद्धिज प्रकृति अज्ञात, किंतु संभवतः क्षुप अथवा अत्यंत छोटे वृक्ष। प्ररोह लंबे अथवा छोटे, छोटे प्ररोहों पर, सर्पिल विन्यास में पर्ण, तथा शीर्ष पर जननांग स्थित। स्तंभ बहुरंगी। काष्ठ अरें एक-प्रतिबद्ध। पर्ण मोटे, सरल एवं मालाकार। शिराविन्यास मुक्तांत (शाखा-मिलन बहुत विरल)। मादा अंग सवृंत शहतूत-सम, बीज अवृंत, अध्यावरण के बाहरी गूदेदार परत से लग्न। नर अंग एक चक्र में स्थित, अनेक शाखित बीजाणुधानीधर, जो आधार पर संयोजित होकर चक्रिका बनाते थे।' (अनावृतबीजी की आकारिकी, ले. स्पोर्न, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, पृष्ठ 75)।

स्वाभाविक है कि ऐसी बोझिल पुस्तकों को विद्यार्थी नकार देगा। परिणाम है कि हिंदी में मौलिक/अनूदित प्रभूत रचनाओं के बाद भी आज महाविद्यालयों/विश्वविद्यालयों में हिंदी माध्यम से पठन-पाठन का वातावरण नहीं निर्मित हो सका। शोधपत्रों के लेखन की बात तो न के बराबर है।

खेद है कि हमारी पूर्ववर्ती पीढ़ी ने जो संपदा हमें अर्पित की थी, उस गौरवशाली सुदीर्घ परपंरा को हम अक्षुण्ण नहीं रख सके। तमाम सारे सरकारी-गैर सरकारी प्रयासों के बावजूद भी उसको हम संवेग और दिशा-बोध नहीं दे सके। कमोवेश ऐसी ही प्रवृत्ति लोक विज्ञान साहित्य की भी है। लोक विज्ञान (पापुलर साइंस) के नाम पर जो परोसा जा रहा है, उसमें गुणवत्ता, गांभीर्य, गवेषणा की प्रवृत्ति का सर्वथा अभाव है। रातों रात सितारा बन जाने और मीडिया पर छा जाने की उमंग तो है, लेकिन उसकी तैयारी अधकचरी है, विषय की पारंगतता नहीं है, विज्ञान बोध तो कतई नहीं है। लोक विज्ञान के क्षेत्र में ऐसे तमाम सारे लोग प्रवृत्त हैं जिन्होंने विज्ञान की किसी भी विधा का अध्ययन ही नहीं किया है। छपास की व्याधि से ग्रस्त लोग छप भी रहे हैं लेकिन उनकी नकेल कसने वाली आचार्य परपंरा का ही लोप हो गया है। जो अवशेष भी हैं, वे समय से भी तेज भागती दुनिया में कदाचित अप्रासंगिक हो चले हैं, उनकी भला सुनता ही कौन है? अपनी ढपली, अपना राग। और हिंदी में विज्ञान साहित्य के अधोपतन के यही मूल कारण भी हैं। हिंदी-विज्ञान की प्रगति के मार्ग में एक बार पुनः संक्रमणकालीन बेला आसन्न है, इस पर गंभीरता से विमर्श आरंभ हो जाना चाहिए और निष्ठ प्रयास भी तभी इसका मार्ग प्रशस्त होगा, अन्यथा हम इसकी शोकांतिका ही पढ़ते रहेंगे।

sdprasad24oct@gmail.com

विज्ञान लोकप्रियकरण, वैज्ञानिक सोच का विकास और हिन्दी

डॉ. नरेन्द्र सहगल

यदि हम केवल जन संचार माध्यमों द्वारा हमारे मन में बैठाई–बसाई जाने वाली विज्ञान की छवि तक सीमित रहें, तो इस छवि में निम्न प्रबल अंश अवश्य दिखाई पड़ेगेः विज्ञान कठिन है, या आसान नहीं है; यह सभी के लिये भी नहीं है। यह पाया जाता है, बड़ी–बडी प्रयोगशालाओं/संस्थानों में जो झिलमिलाती, जलती–बुझती, लाल, पीली और हरी बत्तियों से सुसज्जित उपकरणों, संयन्त्रों, कम्प्यूटरों, से लैस होती हैं, और जिनमें सफेद कोट, या सूटबूट पहने, सर्वदा व्यस्त दिखने वाले वैज्ञानिक काम करते हैं।

विज्ञान लोकप्रियकरण को लेकर इस आलेख में मैं जिस 'विज्ञान' शब्द का प्रयोग करूंगा उसे पारिभाषित करना आवश्यक है। इसलिये कि विभिन्न लोगों के लिये इस शब्द के भिन्न 2 अर्थ हो सकते हैं। ज़रा सोचिये, 'विज्ञान' शब्द कहते ही आपके मन में कैसी छवि उभरती है? कैसे चित्र, या चलचित्र बनते हैं? निस्सन्देह, हर व्यक्ति के मन में बनने वाली छवि अलग ही होगी। हां, अलग–अलग छवियों में कुछ समान और मिलते जुलते पुट हो सकते हैं।

किसी व्यक्ति के मन में 'विज्ञान' की यह छवि कैसे और किस आधार पर बनती है? कारकों की सूची लम्बी हो सकती हैं। इन में सम्मिलित हैं, विज्ञान के साथ वैयक्तिक अनुभव, विद्यार्थी जीवन के अनुभव, रोजमर्रा के जीवन में विज्ञान के विभिन्न पहलुओं से पाला, जन संचार माध्यमों (जैसे समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, रेडियो, टेलीविजन, इन्टरनेट, इत्यादि) द्वारा प्रचारित–प्रसारित विज्ञान के विभिन्न पहलुओं का चित्रांकन ओर रेखांकन। 'विज्ञान' शब्द से आपके मन–मस्तिष्क में बनने वाली छवि निर्भर करेगी इस बात पर कि पूर्व उल्लेखित (या तथा अन्य) कारकों में से उसमें किसका कितना योगदान हो पाता है। स्पष्ट है कि, यह हर व्यक्ति के लिये भिन्न होगा, और हर छवि भिन्न होगी।

अधिक बारीकी में न जाकर, यदि हम केवल जन संचार माध्यमों द्वारा हमारे मन में बैठाई–बसाई जाने वाली विज्ञान की छवि तक सीमित रहें, तो इस छवि में निम्न प्रबल अंश अवश्य दिखाई पड़ेंगेः विज्ञान कठिन है, या आसान नहीं है; यह सभी के लिये भी नहीं है। यह पाया जाता है, बड़ी–बड़ी प्रयोगशालाओं/संस्थानों में जो झिलमिलाती, जलती–बुझती, लाल, पीली और हरी बत्तियों से सुसज्जित उपकरणों, संयन्त्रों, कम्प्यूटरों, से लैस होती हैं, और जिनमें सफेद कोट, या सूटबूट पहने, सर्वदा व्यस्त दिखने वाले वैज्ञानिक काम करते हैं; विदेशी विश्वविद्यालयों, प्रयोगशालाओं में जहां से नई–नई विज्ञान की खोजों, आविष्कारों, और नये नये हथियारों के सृजन और अचम्भित कर देने वाली उपयोगिताओं, इत्यादि के समाचार प्रायः प्राप्त होते हैं; और कि विज्ञान की नई–नई खोजें और आविष्कार विदेशों (यानि, अमेरिका, यूरोप या जापान) ही में होते हैं, और इनके साथ किसी भारतीय या भारतीय मूल के वैज्ञानिक का नाम कभी आ भी जाता है, तो वह किसी विदेशी संस्थान ही में कार्यरत होता है। अन्तरिक्ष क्षेत्र के सिवाय, जन–संचार माध्यमों में प्रचारित और प्रसारित समाचारों और सूचनाओं के आधार पर तो यही परिणाम निकाला जा सकता है, कि भारतीय संस्थानों, विश्वविद्यालयों ओर प्रयोगशालाओं में विज्ञान विषयों पर ऐसा कुछ नहीं हो रहा,

वैसे भी, विश्व की विज्ञान पर बढ़ती हुई निर्भरता, और रोज़मर्रा के जीवन में विज्ञान के लगातार बढ़ते हुए प्रभाव और दख़ल को ध्यान में रखते हुए, भारत में ही नहीं, विश्व भर में हर नागरिक के लिये आवश्यक है कि वह वैज्ञानिक रूप से साक्षर हो। ठीक उसी प्रकार जैसे, कहीं भी, किसी स्वाभिमानी नागरिक के लिये पढ़ना, लिखना, और मूल गणना करना, आना – यानि व्यावहारिक 'साक्षरता' – आवश्यक है।

जो बताने या दिखाने योग्य हो ।

यहां पर यह उल्लेख करना भी आवश्यक है कि संचार माध्यम जिन वस्तुओं, पदार्थों, घटनाओं, समाचारों इत्यादि का सहारा लेकर आपके/हमारे मन-मस्तिष्क में 'विज्ञान' की छवि रचते हैं, उनमें विज्ञान और उस के सिद्धांत कम, तकनीक, प्रौद्योगिकी, यानि टैक्नॉलोजी, में दक्षता और उनके सृजनात्मक पहलु अधिक दिखाई पड़ते हैं। 'विज्ञान' की ऐसी छवि लेकर भारतीयों में विज्ञान को लोकप्रिय बनाना टेढ़ी खीर हो सकता है। यदि भारतीय संचार माध्यमों ने विज्ञान के क्षेत्र में देशवासियों की परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुकूल, अपनी समझ और विवेक का उपयोग करके इस ओर प्रयास किये होते, तो हमारे मन में 'विज्ञान' की एक अलग ही छवि उभर कर आती। विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के लिये, हम भारतीयों और हमारी ज़मीनी परिस्थितियों के अनुकूल और वास्तविकता के कहीं अधिक करीब - विज्ञान की निम्न छवि होतीः

विज्ञान कठिन नहीं है; विज्ञान हर जगह हैः घर में; कार्यस्थल, खेत और खलिहान में, ज़मीन पर, आकाश में, हवा में, जल में, रसोई में, इत्यादि। कोई भी इच्छुक, विज्ञान को जान सकता है, सीख सकता है, और कर सकता है, यानि विज्ञान सब के लिये है। विज्ञान को कहीं भी किया जा सकता है; हमारे आस-पास का पूरा वातावरण एक विशाल प्रयोगशाला है। हमारे दो नेत्र, दो हाथ, और दिमाग, सर्वोत्तम उपकरण हैं, विज्ञान को स्वयं कर के देखने के लिये; और कोई भी पोशाक पहन कर 'विज्ञान' किया जा सकता है। कोई भी कहीं कुछ नया कर सकता है, हम भारतीय उस जैसा ही क्यों, उससे बेहतर कर सकते हैं। स्वयं और अपनी कार्यक्षमता में हमे पूर्ण विश्वास होना आवश्यक है। उदाहरणः अन्तरिक्ष विज्ञान में हमने कर दिखाया है।

यदि अधिकतर जन-संचार माध्यम 'विज्ञान' की अधिक उपयुक्त और इस अधिक वास्तविक छवि को संचारित एवं प्रचारित करने का प्रयत्न करें, तो विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के प्रयासों को बेहतर सफलता मिल सकती है, और वे अधिक प्रभावी सिद्ध हो सकते हैं।

इस आलेख के लिये 'विज्ञान' को पारिभाषित करने से पूर्व, विज्ञान की छवि पर चर्चा आवश्यक थी। लोकप्रियकरण के संदर्भ में 'विज्ञान' शब्द का उपयोग, विभिन्न रूपों में इसकी सभी अभिव्यक्तियों, जैसे प्रौद्योगिकी के रूप में इसके उपयोगों, उपलब्धियों, उपकरणों, इत्यादि, तथा इसके सिद्धांतों और काम करने की विधि, को इसमें समाहित मान कर किया जायेगा।

विज्ञान लोकप्रियकरण : क्यों और कैसे ?

आम आदमी समेत हम सभी भारतीयों में विज्ञान को लोकप्रिय बनाना चाहते हैं। इस से देश और नागरिकों को लाभ होगा। अन्य के अलावा, विज्ञान लोकप्रियकरण सेः लोगों में वैज्ञानिक जागरूकता बढ़ेगी। इससे लोग, वैज्ञानिक पहलुओं वाली समस्याओं और मुद्दों के सकारात्मक और नकारात्मक पक्षों का बेहतर विश्लेषण करने की स्थिति में होंगे; विज्ञान (और प्रौद्योगिकी) सम्बन्धी मुद्दों पर विवादों में बेहतर भागीदारी सम्भव हो सकेगी; लगातार अग्रगमण करती हुई प्रौद्योगिकी (यानि, टेक्नॉलॉजी) के महत्व की बेहतर समझ द्वारा उससे लाभ उठा सकेंगे; हर प्रकार के दावों को यूं ही सच मान लेने की प्रवृत्ति कम होगी; जिज्ञासा और कौतूहल बढ़ेंगे और प्रश्न पूछने की आदत प्रबल होती जायेगी, अन्धविश्वासों और चमत्कारों से कम प्रभावित होंगे; तथ्यों और कल्पनाओं में बेहतर भेद कर सकेंगे; किसी महत्वपूर्ण मुद्दे पर अपना पक्ष बेहतर प्रस्तुत कर सकेंगे; चर्चाओं के दौरान, आत्मविश्वास बना रहेगा और अधिक आश्वस्त अनुभव कर सकेंगे, इत्यादि।

वैसे भी, विश्व की विज्ञान पर बढ़ती हुई निर्भरता, और रोज़मर्रा के जीवन में विज्ञान के लगातार बढ़ते हुए प्रभाव और दख़ल को ध्यान में रखते हुए, भारत में ही नहीं, विश्व भर में हर नागरिक के लिये आवश्यक है कि वह वैज्ञानिक रूप से साक्षर हो। ठीक उसी प्रकार जैसे, कहीं भी, किसी स्वाभिमानी नागरिक के लिये पढ़ना, लिखना, और मूल गणना करना, आना - यानि व्यावहारिक 'साक्षरता' - आवश्यक है।

मेरा यह मानना है कि कहीं भी पैदा होने वाला, हर स्वस्थ बच्चा जिज्ञासा, कौतुहल और प्रश्न पूछने की प्रवृत्तियों को साथ लेकर ही इस दुनिया में आता है। लेकिन, घर में अनुकूल वातावरण न होने के कारण, बहुत से बच्चों में, स्कूल पहुंचने तक इन प्रवृत्तियों का पचास, प्रतिशत से अधिक ह्रास हो चुका होता है। बाकी की कसर, स्कूल में शिक्षा के दौरान, पूरी हो जाती है। यानि, ये प्रवृत्तियां या तो पूरी तरह लुप्त हो जाती हैं, या उन का लेश मात्र ही बच्चे में बचा रह पाता है।

एक बात और। चूंकि हमारी शिक्षा प्रणाली में, दसवीं श्रेणी तक सभी छात्रों के लिये विज्ञान अनिवार्य है, तर्क तो यही कहता है कि दसवीं तक पढ़े सभी बच्चों में विज्ञान तो पहले ही से लोकप्रिय होना चाहिए। लेकिन, क्या ऐसा होता या हो पाता है? ऐसा लगता तो बिलकुल नहीं है। एक प्रमाण तो यही है कि, स्कूल की पढ़ाई के बाद, कॉलेज में विज्ञान विषयों में प्रवेश पाने के इच्छुक विद्यार्थियों की संख्या हर वर्ष घट रही

है। तो क्या यह समझा जाये कि बच्चों को विज्ञान विषयों से डराने या दूर करने में स्कूली विज्ञान शिक्षा या शिक्षकों का हाथ है। यानि, यदि किसी विषय में शिक्षा ही छात्रों में रुचि बढ़ा नहीं सकती तो शिक्षा, शिक्षकों पर सवाल उठना स्वभाविक है। एक निष्कर्ष और भी निकलता है : विज्ञान शिक्षा प्राप्त, सभी लोगों को विज्ञान लोकप्रियकरण हेतु लक्षित वर्गों से बाहर नहीं रखा जा सकता। और आगे बढ़ने से पहले वैज्ञानिक सोच और हम सभी के लिये इसकी आवश्यकता पर ध्यान दिया जाये। किसी की भी सोच, जागृत क्षणों में, सर्वदा सक्रिय रहती है। मन-मस्तिष्क में कुछ न कुछ चलता ही रहता है। कुछ देखने, सुनने, पूछे जाने या कल्पना करने से सोच उसी वस्तु या विषय पर केन्द्रित हो जाती है क्योंकि हमारी सोच भी हमारे स्वयं के कार्य करने के तरीके पर आधारित होती है, इसे वैज्ञानिक बनाने और इसकी आवश्यकता भी उन्हीं लक्ष्यों से प्रेरित है, जो हम विज्ञान लोकप्रियकरण द्वारा प्राप्त करना चाहते हैं। इनका उल्लेख हम पहले ही (ऊपर) कर चुके हैं।

विज्ञान लोकप्रियकरण हेतु किए जाने वाले प्रयासों द्वारा विज्ञान विधि का लोगों द्वारा आत्मसात् किया जाना संभव नहीं है। ठीक, वैसे ही, जैसे सायकल चलाना सीखने के लिए, इस विषय पर व्याख्यान सुनने, वीडियो फिल्म देखने, या किसी और को ऐसा करते हुए देखने मात्र से, यह कौशल प्राप्त नहीं हो सकता। इसके लिए, आपको स्वयं सायकल पर सवार होकर उसे चलाने का कौशल स्वयं (या किसी की सहायता से) सीखना होगा। प्रयास करते समय शायद एकाध बार ज़मीन पर गिरना भी पड़ सकता है। चलाना सीख जाने के पश्चात्, अभ्यास करने से, आप इस कौशल में बेहतर और पूर्णतयः दक्ष हो सकेंगे।

वैज्ञानिक सोच का विकास

वैज्ञानिक सोच के विकास के लिये आवश्यक है कि लोगों द्वारा विज्ञान-विधि को आत्मसात् किया जाये। बिल्कुल ऐसे ही जैसे दो पहिया सायकल को चलाना सीखने के पश्चात यह आत्मसात् होकर हमारा अभिन्न अंग बन जाता है, और उसे हमसे कोई अलग नहीं कर सकता। 'विज्ञान-विधि' का भी हमारे अंदर सायकल चलाने के कौशल की तरह, घर कर जाना, आवश्यक है जिससे वह हमारा स्वयं का काम करने का तरीका बन जाए।

मात्र विज्ञान लोकप्रियकरण हेतु किए जाने वाले प्रयासों द्वारा विज्ञान विधि का लोगों द्वारा आत्मसात् किया जाना संभव नहीं है। ठीक, वैसे ही, जैसे सायकल चलाना सीखने के लिए, इस विषय पर व्याख्यान सुनने, वीडियो फिल्म देखने, या किसी और को ऐसा करते हुए देखने मात्र से, यह कौशल प्राप्त नहीं हो सकता। इसके लिए, आपको स्वयं सायकल पर सवार होकर उसे चलाने का कौशल स्वयं (या किसी की सहायता से) सीखना होगा। प्रयास करते समय शायद एकाध बार ज़मीन पर गिरना भी पड़ सकता है। चलाना सीख जाने के पश्चात्, अभ्यास करने से, आप इस कौशल में बेहतर और पूर्णतयः दक्ष हो सकेंगे। यही कुछ, कार चलाने के कौशल पर भी लागू होता है।

विज्ञान विधि को आत्मसात् करके, इसे अपने काम करने का तरीका बनाने के लिए भी आपको 'स्वयं करके' सीखना पड़ेगा और अधिक अभ्यास से आप इस में बेहतर दक्षता प्राप्त कर सकेंगे।

विज्ञान विधि

इस आलेख के संदर्भ में, विभिन्न विज्ञान क्षेत्रों में, विषय-वस्तु से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है, विज्ञान की विधि, यानि सभी विज्ञान क्षेत्रों में काम करने का विशिष्ट तरीका। वैज्ञानिक सोच, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, वैज्ञानिक मिज़ाज, अलग-अलग अर्थ वाले शब्द हो सकते हैं, लेकिन इन सब को परस्पर जोड़ने वाली सांझी कड़ी है, विज्ञान-विधि। यदि कहा जाए कि इन सब - यानि वैज्ञानिक सोच, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और वैज्ञानिक मिज़ाज - को विकसित करने और बढ़ावा देने के लिए लोगों द्वारा 'विज्ञान-विधि' को स्वयं में समाहित या आत्मसात करना आवश्यक हैं, तो अतिश्योक्ति न होगी। चलो देखें, यह विज्ञान-विधि है क्या!

विज्ञान-विधि में सम्मिलित हैं: जिज्ञासा, कौतूहल, प्रश्न पूछना और उनके उत्तर ढूंढ़ना; सभी उपलब्ध संबंद्ध तथ्यों, जानकारियों और प्रमाणों का संज्ञान लेना, यदि कुछ सामने न आता प्रतीत हो, उसे ढूंढ़ या खोज निकालना; सभी (कही और अनकही) मान्यताओं की जांच-पड़ताल करना, दावों का प्रयोगात्मक सत्यापन करना और इन सभी के आधार पर ही किसी निर्णय, परिणाम या निष्कर्ष तक पहुंचना।

ऐसा भी नहीं है कि, इस तरीके/विधि का उपयोग अन्य लोगों/संस्थाओं द्वारा अपने काम में बिल्कुल नहीं किया जाता, या नहीं किया जा रहा। वास्तव में, सभी लोग, हम और आप समेत, अपनी सुविधानुसार इसका उपयोग करते रहते हैं, घर में, अपने व्यवसाय में, निजि जीवन में, और अन्य हर जगह भी। अन्तर मात्र इतना है, कि विज्ञान के सभी क्षेत्रों में काम करने के लिये इस विधि का शतप्रतिशत अपनाया जाना, बिना किसी अपवाद के, अनिवार्य है। जबकि अन्य क्षेत्रों में काम के लिये, यह शतप्रतिशत अनिवार्य नहीं है। मेरी मानो तो हर क्षेत्र में, लगभग हर काम के लिये इस विधि का अनिवार्य न होना, या अनिवार्य न समझा जाना, ही हमारे समक्ष अधिकांश अनसुलझी

समस्याओं को अभी तक सुलझा न पाने का एक मुख्य कारण है। कुछ उदाहरणों से, बात अधिक स्पष्ट हो जायेगी और विज्ञान विधि के बारे में सही धारणा बनाने में सहायता मिलेगी। समाज में इसका सर्वोत्तम उदाहरण है, चोरी और हत्या जैसी घटनाओं के बाद, अपराधियों को खोजने और सच्चाई तक पहुंचने के लिये अपनाई जाने वाली कार्यविधि। यह विज्ञान विधि ही तो है। सभी, शायद, हेमराज-आरुषी हत्याकांड की यादें भूले नहीं होंगे। वास्तव में, इस मामले में, घटना के उजागर होने के तुरन्त बाद लापरवाही के कारण, बहुत से सम्भव प्रमाण और प्रमाण-सूत्र नष्ट हो जाने के कारण, विज्ञान-विधि का सही उपयोग नहीं हुआ। रोज़मर्रा के जीवन में, खरीदारी करते समय, गुणवत्ता और मूल्यों के मामले में; निवेश करते समय, कम्पनी के रिकार्ड, उसकी आर्थिक सेहत, काम-काज करने के ढंग, जैसे कई कारकों की जांच करते समय; निवेश के लिये उपलब्ध नकदी से होने वाले वांछित लघु या लम्बी अविध से आशातीत लाभ प्राप्त करने के मामले में; अपनी बेटी के लिये योग्य और हर प्रकार के उपयुक्त वर ढूंढने के मामले में, इत्यादि, विज्ञान-विधि का ही उपयोग तो करते हैं, सभी लोग।
यह आवश्यक नहीं कि हर मामले में विज्ञान-विधि के सभी पहलुओं और तत्वों का प्रयोग करना पड़े। बहुत बार, मात्र जिज्ञासा और प्रश्न पूछने और उनके उत्तर प्राप्त करने की प्रक्रिया में ही काम बन जाता है।
इसके विपरीत, ऐसे भी बहुत से उदाहरण हैं, जहां हम विज्ञान विधि का उपयोग न करते हुए, धोखेबाज़ी और धोखेबाज़ों की बातों में आकर उनके शिकार बन जाते हैं। जैसे, पैसा और गहनों को दो गुणा करने के लालच में; बैंकों में सामान्यतः उपलब्ध अधिकतम ब्याज दर से कहीं अधिक ब्याज दर पाने के लालच में, इत्यादि। इन सभी उदाहरणों में, पढ़े-लिखे लोग भी पीड़ितों में सम्मिलित पाये जाते हैं।
उदाहरण और भी बहुत हैं। यह तो स्पष्ट है कि विज्ञान-विधि काम करने की एक विधि/तरीका भर है। विज्ञान से जोड़ कर, इसे मात्र इसलिये प्रस्तुत किया जाता है, क्योंकि दुनिया भर में विज्ञान के सभी क्षेत्रों में, और सभी वैज्ञानिकों द्वारा, अपने काम में इसका सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है। अन्यथा, काम-काज करने के तरीके या एक विधि के रूप में, इसका विज्ञान से कुछ लेन-देन आवश्यक नहीं हैं जैसा कि ऊपर उल्लेख भी किया जा चुका है, नाममात्र, कम या अधिक, हर कोई इसका उपयोग, अपनी आवश्यकतानुसार करता रहा है, और कर रहा है। इस सब का एक और अर्थ भी निकलता हैः वैज्ञानिक सोच हम सभी में जन्म से ही होती है, लेकिन प्रत्येक व्यक्ति में इसका विकास, उस व्यक्ति द्वारा अपने जीवन, काम-काज में, उसके उपयोग पर निर्भर करता है।
भारत में, 'विज्ञान लोकप्रियकरण तथा वैज्ञानिक सोच के विकास' हेतु किये जा रहे प्रयासों पर चर्चा और कुछ उदाहरण प्रस्तुत करने से पहले इन सब कार्यों में हिन्दी की भूमिका पर ध्यान देना आवश्यक है। 'हिन्दी की भूमिका' विषय कुछ प्रश्न उठाता है। यह विषय, प्रौद्योगिकी, रेडियो, टेलीविज़न, लोक-कथाओं, लोक संगीत, कथा-कहानी, जादू..... इत्यादि की भूमिका जैसा विषय तो निश्चित रूप से नहीं है। हां, यह पंजाबी, मराठी, तमिल, गुजराती..... इत्यादि अन्य भारतीय भाषाओं की भूमिका, जैसा समानान्तर विषय अवश्य है। यानि, किसी भी भाषा की भूमिका सम्बन्धी प्रश्नों के उत्तरों की रूपरेखा लगभग एक जैसी ही होनी चाहिये। अतः, इस दसवें विश्व हिन्दी सम्मेलन के संदर्भ में, मैं निम्नलिखित में, इससे अलग प्रश्न पूछना चाहूंगा। उस के उत्तर ढूंढना, सुझाना या जुटाना शायद अधिक लाभकारी सिद्ध हो सकता है।

हिन्दी : विज्ञान की भाषा?

भारत और विश्व भर में हिन्दी भाषियों - यानि हिन्दी बोलने, पढ़ने, लिखने और समझ सकने वालो - की संख्या इतनी अधिक है कि विज्ञान लोकप्रियकरण और वैज्ञानिक सोच के विकास हेतु, समस्त प्रयासों में हिन्दी का उपयोग किया जाना अत्यावश्यक है। भारत में ऐसा करने का प्रयत्न भी किया गया है। लेकिन, यह स्वीकार करना पड़ेगा कि वर्तमान में इस प्रकार के प्रयासों में, हिन्दी का उपयोग, मात्रात्मक एवं गुणात्मक दृष्टियों से, आवश्यकता के अनुकूल बिल्कुल भी नहीं है। ऐसा इसलिये है कि अभी तक, स्वतन्त्रता के इतने वर्षों के बाद भी, हम हिन्दी को 'विज्ञान की भाषा' नहीं बना सके हैं। क्या हिन्दी विज्ञान की भाषा बन सकती है? यदि हां, तो क्या निकट भविष्य में ऐसा हो सकता है?
वैसे, असम्भव तो कुछ भी नहीं होता। लेकिन, हिन्दी को विज्ञान की भाषा बनने, या बनाने, के लिये जिन-जिन स्थितियों और परिस्थितियों का होना आवश्यक है, दूर-दूर तक भी, किसी क्षितिज पर दिखाई नहीं पड़तीं। शुरू से अन्त तक विज्ञान विषयों में शिक्षा के लिये अच्छे शिक्षक, मूल रूप से हिन्दी में रचयित, सभी आवश्यक पाठ्य पुस्तकें, संदर्भ पुस्तकें, तरह तरह की अभ्यास पुस्तकें, सहायक, पूरक और अन्य सम्बद्ध पुस्तकें सहजता से प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होनी आवश्यक हैं। हर श्रेणी के लिये, हर विज्ञान विषय में, पाठ्य और अन्य सभी प्रकार की

विज्ञान-विधि काम करने की एक विधि/तरीका भर है। विज्ञान से जोड़ कर, इसे मात्र इसलिये प्रस्तुत किया जाता है, क्योंकि दुनिया भर में विज्ञान के सभी क्षेत्रों में, और सभी वैज्ञानिकों द्वारा, अपने काम में इसका सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है। अन्यथा, काम-काज करने के तरीके या एक विधि के रूप में, इसका विज्ञान से कुछ लेन-देन आवश्यक नहीं हैं।

पुस्तकों के हिन्दी में ही कई सारे अच्छे विकल्पों का उपलब्ध होना भी आवश्यक है। इस सब के बीच ऐसी स्थिति उत्पन्न होनी चाहिये कि, अन्य विकल्प होते हुए भी, बहुत से माता-पिता अपने बच्चों को विज्ञान शिक्षा हिन्दी में दिलाने के इच्छुक प्रतीत हों।

ऐसी स्थिति तब उत्पन्न हो सकेगी, जब अनुसंधानकार्यों में हिन्दी का उपयोग होगा, और शोध पत्रिकाओं में उच्च कोटि के उपयोगी आलेख, सर्व प्रथम हिन्दी ही में प्रकाशित होना आरम्भ हो जायेंगे। इनमें से बहुत से शोध पत्र ऐसे होने होंगे जिनकी विषय वस्तु की उपयोगिता, नयेपन और सम्भावनाओं के कारण, विश्व में अन्य शोधकर्ता इन आलेखों को पढ़ना चाहेंगे और पढ़ कर लाभ उठाना चाहेंगे। यदि इस प्रकार के शोध साहित्य में गुणात्मक और मात्रात्मक वृद्धि इतनी हो जाये कि अन्य देशों के शोधकर्ता, हमारे हिन्दी शोध-पत्रों से लाभ उठाने हेतु, हिन्दी सीखने या हमारे शोध पत्रों का नियमित रूप से अनुवाद करवाने के लिये विवश हो जायें, तो उस स्थिति में हिन्दी विज्ञान की भाषा बन जायेगी। तो, संक्षेप में, हिन्दी विज्ञान की भाषा तब बनेगी, जब किसी विज्ञान विषय, या विषयों, पर मात्र हिन्दी में नियमित रूप से प्रकाशित सामग्रियों में, अहिन्दी भाषियों को कुछ ऐसा लाभकारी प्राप्त होता दिखे, जो उन्हें कहीं और से प्राप्य ही न हो, और जिसकी उन्हें अत्यन्त आवश्यकता हो। ये प्रकाशित सामग्रियां कैसी विषय वस्तु लिये हो सकती हैं? किसी जटिल वैज्ञानिक समस्या से सम्बंध महत्वपूर्ण शोध के परिणाम हो सकते हैं। किसी बिल्कुल नये खोजे गये 'पदार्थ' की उपयोगिताओं के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी हो सकती है और आगे के शोध के बारे में छिपे संकेत प्राप्त हो सकते हैं। इत्यादि, इत्यादि। यानि ऐसा कुछ भी, जिसमें अन्य लोगों को किसी प्रकार का यथेष्ठ लाभ दिखाई पड़े। अब आते हैं भारत में 'विज्ञान लोकप्रियकरण और वैज्ञानिक सोच के विकास' हेतु किये जा रहे प्रयासों की चर्चा पर और प्रस्तुत करते हैं उनसे कुछ महत्वपूर्ण उदाहरण।

प्रयास एवं उदाहरण

विज्ञान को लोकप्रिय बनाने हेतु विश्वभर में बहुत विभिन्न तरीके अपनाये जाते हैं। इनमें कुछ प्रमुख हैं, विज्ञान संग्रहालय, बड़े और छोटे विज्ञान केन्द्र, विज्ञान नगर, तारामण्डल, विज्ञान प्रदर्शनियां, दृश्य-श्रव्य प्रदर्शन, चलती-फिरती प्रयोगशालायें, विज्ञान खेल-खिलौने, स्वयं-कर-के-देखने और सीखने वाले किट्स और प्रयोग; विज्ञान विषयों/प्रयोगों पर पोस्टर सेट्स, सीडीज़, चलचित्र, विज्ञान पहेलियां, विज्ञान पुस्तकें, विज्ञान समाचार पत्र-पत्रिकायें, विज्ञान कवितायें, विज्ञान नाटक-नाटिकायें, विज्ञान रेडियो और टेलिविज़न धारावाहिक, विज्ञान चर्चायें, सम्वाद और वाद-विवाद; विज्ञान गल्प कथायें, विज्ञान मोबाईल फोन संदेश, इत्यादि इत्यादि। इन सब का प्रयोग भारत में भी किया जा रहा है, वर्षों से। इनमें कुछ तो बहुत पुराने और परम्परागत तरीके हैं; कुछ का आधुनिकीकरण किया गया है; कुछ नये और अपरम्परागत तरीके भी हैं, जो कहीं से आरम्भ होकर, अन्य जगहों पर भी अपना लिये गये हैं।

लेकिन, अस्सी दशक के प्रथम पांच वर्षों के दौरान, 'विज्ञान लोकप्रियकरण और वैज्ञानिक सोच को उजागर करने और बढ़ावा देने के लिये', जो प्रयास भारत में आरम्भ किया और चलाया गया, वह स्वयं में एक अनोखा उदाहरण है। ढूंढने पर भी, विश्व में बहुत कम ऐसे उदाहरण मिलेंगे। इस योजनाबद्ध प्रयास में, (1) लोगों को 'विज्ञान' के पास लाने की बजाय, 'विज्ञान' को लोगों तक उनकी अपनी भाषा में पहुंचाने और (2) विज्ञान-विधि को अधिकाधिक लोगों द्वारा अधिकाधिक प्रयोग में लाने, को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई थी।

इस प्रयास के अन्तर्गत, बहुत सराहे गये, विश्व प्रसिद्ध कार्यक्रमों को अन्जाम दिया गया। कुछ उदाहरण हैं:

''भारत जन विज्ञान जत्था'' (1987) : उस समय यह विश्व का सबसे बड़ा विज्ञान-संचार प्रयोग था, जिसके अन्तर्गत देश भर में 'विज्ञान' के साथ 70-80 लाख लोगों तक सीधे, और उससे कई गुणा तक, जन संचार माध्यमों द्वारा, अप्रत्यक्ष रूप से पहुंचा गया। लगभग 25,000 कि.मी. के सफर के दौरान, 500 पड़ावों पर, हर राज्य से होते हुए, विशेष रूप से तैयार की गई संचार सामग्री के उपयोग से, जत्था पूर्व, जत्था के दौरान और उसके पश्चात् लोगों के साथ उन्हीं की भाषा में विभिन्न विज्ञान संचार कार्यक्रमों में उनकी भागीदारी सुनिश्चित की गई थी।

'विज्ञान-विधि' : 13 भाग का एक रेडियों धारावाहिक जो हिन्दी सहित, 16 भारतीय भाषाओं में बनाया और जून से सितम्बर 1989, के बीच हर रविवार प्रातः 8 से 9 बजे के बीच, आकाशवाणी के लगभग सभी केन्द्रो से प्रसारित किया गया। प्रसारण से पूर्व, 140000 प्रतिबद्ध श्रोताओं के रूप में 10-14 वर्ष को आयु वाले बच्चों का पंजीकरण किया गया था, विभिन्न आकाशवाणी केन्द्रों द्वारा। हर जगह बच्चों ने इसे अपनी भाषा में सुना। प्रसारण के दौरान हर पंजीकृत बच्चे को उसकी अपनी भाषा में विशेष रूप से तैयार किये गये चार पोस्टरों और दो विज्ञान किट्स का एक सेट उपलब्ध कराया गया था। पोस्टर और किट्स के साथ संलग्न निर्देश भी 16 भाषाओं में छापे गये थे। इस धारावाहिक की

संक्षेप में, हिन्दी विज्ञान की भाषा तब बनेगी, जब किसी विज्ञान विषय, या विषयों, पर मात्र हिन्दी में नियमित रूप से प्रकाशित सामग्रियों में, अहिन्दी भाषियों को कुछ ऐसा लाभकारी प्राप्त होता दिखे, जो उन्हें कहीं और से प्राप्य ही न हो, और जिसकी उन्हें अत्यन्त आवश्यकता हो।

प्रत्येक कड़ी, मानव-उत्पत्ति में हुए किसी न किसी युगप्रवर्तक पल या घटना पर केंद्रित थी। किट्स में सुझाये या तथा दर्शाये प्रयोगों या क्रिया कलापों में विज्ञान विधि का प्रयोग आवश्यक था।

'मानव का विकास' : 144-भाग का एक रेडियो धारावाहिक, जो 'विज्ञान-विधि' की तर्ज़ पर ही विभिन्न भाषाओं में बनाया गया और जून 1991 से फरवरी 1994 के बीच आकाशवाणी के लगभग सभी केन्द्रो से स्थानीय भाषा में प्रसारित किया गया। इसके साथ भी 100,000 बच्चों (10-14 वर्षीय) और 10000 स्कूलों का, प्रतिबद्ध श्रोताओं के रूप में, पंजीकरण किया गया था। पंजीकृत बच्चों और स्कूलों को विशेष रूप से तैयार किये गये पोस्टर तथा विज्ञान किट्स उपलब्ध कराये गये थे।

'भारत जन-ज्ञान विज्ञान जत्था' (1992) : 'भारत जन विज्ञान जत्था (1987)' की तर्ज़ पर लेकिन कहीं अधिक बड़े स्तर पर, इसे अन्जाम दिया गया था। इसमें विज्ञान के साथ साक्षरता विषय को भी लिया गया था।

'राष्ट्रीय विज्ञान दिवस' : वर्ष 1987 में आरम्भ हुआ, एक सप्ताह से एक मास तक चलने वाले कार्यक्रमों के साथ मनाया जाता है। विभिन्न गति-विधियां, 28 फरवरी से शुरू की जाती हैं, या उस दिन उनका समापन होता है। यह देश भर में मनाया जाता है और इस दिन विज्ञान लोक प्रियकरण से सम्बद्ध राष्ट्रीय पुरस्कार भी प्रदान किये जाते हैं।

'राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस' : वर्ष 1993 में आरम्भ की गई थी। हर वर्ष 27-31 दिसम्बर के दौरान, एक पूर्व निर्धारित केन्द्रीय विषय पर इसका आयोजन किया जाता है। इसमें (10-14) और 14 से बड़े और 17 वर्ष तक की आयु के बच्चे भाग ले सकते हैं। इसे क्रमशः जिला, प्रदेश और राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित किया जाता है। बच्चे कम से कम 2 और अधिक से अधिक 5 के समूह में भाग ले सकते हैं भाग लेने के लिये, हर समूह या टीम को केन्द्रीय विषय से सम्बद्ध एक प्रोजेक्ट का अपने शिक्षक गाईड और 'क्रियाकलाप मार्गदर्शिका' (यानि एक्टिविटी गाईड) की सहायता से चयन कर उसे अंजाम देना होता है। हर प्रौजेक्ट में 'विज्ञान-विधि' का उपयोग और वैज्ञानिक क्रिया-कलापों, जैसे आकंड़े जुटाना, कोई प्रयोग करना, अपने हाथों और दिमाग समेत सरल उपकरणों का उपयोग, विभिन्न परिस्थितियों में प्रयोग को दोहराना, इत्यादि सम्मिलित हो सकते हैं। प्रोजेक्ट पर काम करने के बाद उस पर रिपोर्ट तैयार कर, उसे क्रिया विधि, एकत्रित आकंड़ो और पहुंचे गये परिणामों या निष्कर्षों समेत, पहले, ज़िला बाल विज्ञान कांग्रेस में प्रस्तुत करना होता है। चयन किये जाने पर इस प्रोजेक्ट को अगले स्तर, यानि प्रदेश या/तथा राष्ट्रीय स्तर, पर प्रस्तुति का अवसर प्राप्त हो सकता है। हर वर्ष, देश भर से इसमें लाखों की संख्या में बच्चें भाग लेते हैं।

'खग्रास-1995' : पूर्ण सूर्य ग्रहण से सम्बद्ध, इस एक वर्ष की अवधि वाले कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य था, खग्रास को लेकर सदियों से चले आ रहे मिथकों और अन्धविश्वासों को लोगों के मन-मस्तिष्क से हटाकर, खग्रास की वैज्ञानिक व्याखा और सच से उनका परिचय कराना। प्रकृति द्वारा प्रस्तुत, यह एक सुनहरा अवसर था, विज्ञान संचारकों के लिये; आम लोगों में खग्रास के प्रति जिज्ञासा और कौतूहल का उपयोग कर उनमें खगोल सम्बन्धी विज्ञान को प्रचारित करने और उनमें खगोल विज्ञान के प्रति रुचि पैदा करने हेतु। खग्रास-1995 कार्यक्रम के अन्तर्गत कई पुस्तक-पुस्तिकायें, फिल्में, एक रंगीन चार्ट तथा एक गतिविधि किट (10-17 वर्ष की आयु वाले) बच्चों के लिये, विकसित किये गये। इस किट में स्वयं-करके-देखने वाले प्रयोगों, क्रिया-कलापों और खग्रास को पूर्ण सुरक्षा सहित, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से देखने के उपाय (एक सूर्य छननक सहित) सम्मिलित थे। इस कार्यक्रम के परिणामस्वरूप, देश भर में लाखों, करोड़ों लोगों ने, अपनी शंकाओं और मन में भयों का त्याग कर, प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से, 24 अक्टूबर 1995 की प्रातः आठ बजे के करीब होने वाले, पूर्ण सूर्यग्रहण को देखकर इस अनूठी घटना का आनन्द उठाया।

चमत्कारों के प्रदर्शन एवं व्याख्या का प्रशिक्षण

स्कूली विज्ञान शिक्षकों एवं स्वयं सेवी संस्थाओं के विज्ञान संचारक सदस्यों के लिये देश भर में प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये गये। इनमें पूरे देश से एकत्रित किये गये लगभग 100 चमत्कारों के प्रदर्शन एवं व्याखा के लिये एक किट तैयार की गई। ये चमत्कार प्रायः बाबाओं एवं स्वयं को भगवान के दूत, या अवतार, बताने वाले पाखण्डियों द्वारा लोगों को दिखाकर उन्हें अपने शिष्य या भक्त बनाने के लिए प्रयोग किय जाते हैं। पहले उनका विश्वास जीत कर बाद में उन्हें और अन्य लोगों को लूटने का काम किया जाता है। देश में ऐसे बाबाओं की भरमार है जिन के आश्रम में विभिन्न प्रकार के धन्धे चलाये जाते हैं। ये प्रशिक्षण कार्यशालायें बहुत लोकप्रिय और सफल रहीं। विज्ञान-विधि के उपयोग/प्रयोग हेतु भी ये प्रशिक्षण कार्यक्रम लाभकारी सिद्ध हुए।

'भारत की छाप' (1989) : 16 मि.मी. फिल्म पर बनाया गया, 50-55 मिनट के 13 भागों वाला, भारतीय उपमहाद्वीप में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इतिहास पर हिन्दी धारावाहिक। इसे दूरदर्शन पर अप्रैल 1989 के अन्त से हर रविवार, प्रातः प्रसारित किया गया। हर प्रमुख समाचार पत्र और जानी मानी पत्रिकाओं में इसकी प्रशंसा भरी समीक्षायें प्रकाशित हुईं। प्रसिद्ध पत्रकार, श्री निखिल चक्रवर्ती द्वारा इस धारावाहिक को, अन्य के अलावा, हर सांसद के लिये देखना आवश्यक बताया गया था। उदाहरण और भी बहुत हैं, लेकिन समय/स्थान अभाव के कारण, सभी का उल्लेख सम्भव नहीं हो पायेगा।

enkays@yahoo.com

हिंदी में विज्ञान संचार और रक्षा विज्ञान

डॉ. सुभाषचंद्र लखेड़ा

आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी को आत्मसात किए बिना कोई भी भाषा राष्ट्र की संपूर्ण जरूरतों को पूरा नहीं कर सकती है। केंद्र सरकार ने इस बात को समझते हुए हिंदी में वैज्ञानिक और तकनीकी शब्द मुहैय्या करवाने के लिए 'वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग' का गठन किया। आज आयोग द्वारा किए गए परिश्रम के बदौलत हिंदी में ऐसे शब्दों का विपुल भंडार उपलब्ध है। सभी जानते हैं कि इन शब्दों का उपयोग वैज्ञानिक और तकनीकी लेखन में होना है ताकि विज्ञान का प्रसार आमजन तक किया जा सके।

राष्ट्र की प्रगति के लिए विज्ञान का सृजन और उसका संचार, दोनों ही बेहद जरूरी हैं। बहरहाल, भारत में विज्ञान संचार सरकारी हाथों में है। यहाँ निजी क्षेत्र की भागेदारी नहीं के बराबर है। कुछ निजी क्षेत्र के उद्योग धंधों में अनुसंधान के नाम पर कुछ काम अवश्य होता है किन्तु उसका संबंध विज्ञान संचार से नहीं है। अब सवाल उठता है कि सरकारी क्षेत्र विज्ञान संचार में कितना प्रभावी है? विशेषकर, आजादी के बाद इस क्षेत्र में कितना कार्य हुआ और उसका हमारे समाज की दशा और दिशा को सुधारने में क्या भूमिका रही है? इन सवालों का जवाब खोजने के लिए जरूरी है कि हम ऐसे सभी सरकारी विभागों के बारे में पहले संक्षेप में चर्चा कर लें जिनसे विज्ञान संचार की अपेक्षा की जाती है। इनमें सर्वोपरी स्थान भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय का है। यूं देश में कोई ऐसा मंत्रालय या विभाग नहीं है जिसका रिश्ता कहीं न कहीं विज्ञान के संचार और प्रचार-प्रसार से न हो किन्तु ऐसे मंत्रालयों की संख्या भी कम नहीं है जिनका संबंध सीधे तौर पर विज्ञान के सृजन और उसके संचार से है। नवीन एवं अक्षय ऊर्जा मंत्रालय, ऊर्जा मंत्रालय, मानव संसाधन विकास और दूरसंचार एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय, कृषि मंत्रालय, खाद्य प्रसंस्करण मंत्रालय, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्रालय, भू विज्ञान मंत्रालय, जल संसाधन मंत्रालय, रक्षा मंत्रालय, वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, खेल एवं युवा मंत्रालय, शिक्षा मंत्रालय, सांख्यिकी एवं कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय और सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय को इस सूची में शामिल कर सकते है। इसके अलावा परमाणु ऊर्जा विभाग एवं अंतरिक्ष विभाग का संबंध भी विज्ञान संचार से है। इन सभी मंत्रालयों एवं विभागों के तहत अनेक ऐसी संस्थाएं एवं प्रयोगशालाएं हैं जिनका कार्य विज्ञान का सृजन एवं संचार करना है। उदहारण के लिए रक्षा मंत्रालय का 'रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन', कृषि मंत्रालय का 'भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्', स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय से संबंधित 'भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद्', और भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा पोषित 'वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्' ऐसे प्रमुख वैज्ञानिक संगठन हैं जिनसे यह अपेक्षा की जाती है की वे सतत रूप से विज्ञान संचार करते रहेंगे।

यद्यपि ऐसे सभी संगठन आजादी से पहले भी हमारे यहाँ किसी न किसी रूप में मौजूद थे किन्तु आजादी के बाद देश की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए इन सभी में व्यापक रद्दोबदल किये गए ताकि ये भारत को वैज्ञानक और प्रौद्योगिकी दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने में मददगार हो सकें। रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन की स्थापना वर्ष 1958 में हुई। सम्प्रति इसके अंतर्गत 51 प्रयोगशालाओं का एक नेटवर्क है जो देश की रक्षा जरूरतों के मुताबिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी से जुड़े विभिन्न विषयों पर अनुसंधान एवं विकास के कार्यों में लगी हैं। भारतीय कृषि

संगठन ने अपने गठन के साथ ही वैज्ञानिक सूचनाओं के एकीकृत स्रोत हेतु 'साइंटिफिक इंफॉर्मेशन ब्यूरो' की स्थापना की। सन् 1967 में इस ब्यूरो के द्वारा किये जाने वाले कार्यों में बढ़ोतरी करते हुए इसे 'डिफेंस साइंटिफिक इनफार्मेशन एंड डॉक्यूमेंटेशन सेंटर' (डेसीडॉक) यानी 'रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केंद्र' नाम दिया गया। सन् 1970 से यह केंद्र एक प्रयोगशाला में तब्दील हुआ। यह प्रयोगशाला अपने पुस्तकालय की सहायता से विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबंधित सूचनाएं उपलब्ध कराने में तत्पर है।

अनुसंधान परिषद् के अंतर्गत 97 संस्थान और 53 कृषि विश्वविद्यालय हैं। भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसन्धान परिषद् की स्थापना वर्ष 1949 में हुई और इस समय इसके तहत 21 स्थाई शोध संस्थान और 6 क्षेत्रीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान केंद्र हैं। जहां तक वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् का सवाल है, इसकी 39 प्रयोगशालाएं एवं 50 फील्ड स्टेशन हैं। इसको विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विभिन्न क्षेत्रों में अनुप्रयुक्त अनुसंधान तथा उसके परिणामों के उपयोग पर बल देते हुए अनुसंधान एवं विकास परियोजनाएं शुरू करने की जिम्मेदारी सौंपी गई है। इन संस्थानों /संगठनों के अलावा हमारी सरकार ने अलग से भी कुछ संस्थान बनाये हैं जिनका कार्य प्रत्यक्ष रूप से विज्ञान का संचार करना तो नहीं है किन्तु इस कार्य में सहायता पहुंचना है। हम सभी जानते हैं कि आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी को आत्मसात किए बिना कोई भी भाषा राष्ट्र की संपूर्ण जरूरतों को पूरा नहीं कर सकती है। केंद्र सरकार ने इस बात को समझते हुए हिंदी में वैज्ञानिक और तकनीकी शब्द मुहैय्या करवाने के लिए 'वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग' का गठन किया। आज आयोग द्वारा किए गए परिश्रम के बदौलत हिंदी में ऐसे शब्दों का विपुल भंडार उपलब्ध है। सभी जानते हैं कि इन शब्दों का उपयोग वैज्ञानिक और तकनीकी लेखन में होना है ताकि विज्ञान का प्रसार आमजन तक किया जा सके। इतना ही नहीं, हमारे सरकारी वैज्ञानिक संगठनों ने कुछ ऐसे स्वतंत्र संस्थान भी बनाये हैं जिनका कार्य सिर्फ और सिर्फ विज्ञान संचार करना है। ऐसी प्रमुख संस्थाओं में राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, विज्ञान प्रसार, राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं सूचना संसाधन संस्थान, राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद् और नेहरू तारामंडल जैसे संस्थान/इकाइयां शामिल हैं। जहां तक रक्षा विज्ञान के संचार का सवाल है, भारत में रक्षा विज्ञान से संबंधित अनुसंधान कार्य 'रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन' यानी डीआरडीओ द्वारा किया जाता है। इस संगठन की स्थापना सन् 1958 में हुई। तब इस संगठन के अंतर्गत 10 प्रयोगशालाएं थी। आज डीआरडीओ 51 सुदृढ़ प्रयोगशालाओं एवं स्थापनाओं का एक ऐसा संगठन है जो वैमानिकी, समाघात प्रणालियों, प्रक्षेपास्त्र प्रणालियों, युद्धक वाहन, अभियांत्रिकी, उन्नत संगणन, इलेक्ट्रॉनिक्स, जैव विज्ञान तथा नौसैनिक प्रणालियों से सम्बंधित अनुसंधान तथा विकास में संलग्न है।

संगठन ने अपने गठन के साथ ही वैज्ञानिक सूचनाओं के एकीकृत स्रोत हेतु 'साइंटिफिक इंफॉर्मेशन ब्यूरो' की स्थापना की। सन् 1967 में इस ब्यूरो के द्वारा किये जाने वाले कार्यों में बढ़ोतरी करते हुए इसे 'डिफेंस साइंटिफिक इनफार्मेशन एंड डॉक्यूमेंटेशन सेंटर' (डेसीडॉक) यानी 'रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केंद्र' नाम दिया गया। सन् 1970 से यह केंद्र एक प्रयोगशाला में तब्दील हुआ। यह प्रयोगशाला अपने पुस्तकालय की सहायता से विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबंधित सूचनाएं उपलब्ध कराने में तत्पर है। डेसीडॉक डीआरडीओ संबंधी सूचनाओं के लिए उत्तरदायी है। इसके नियमित प्रकाशनों के नाम हैं रूडिफेंस साइंस जर्नल (द्वय मासिक अनुसंधान पत्रिका), टेक्नॉलॉजी फोकस (डीआरडीओ संबंधित प्रौद्योगिकिओं, उत्पादों, प्रक्रमों और प्रणालियों के ऊपर केंद्रित एक द्वय मासिक प्रकाशन), डीआरडीओ न्यूज़ लेटर (डीआरडीओ के क्रियाकलापों से संबंधित मासिक प्रकाशन), डीआरडीओ समाचार पत्र (न्यूज़ लैटर का हिंदी संस्करण) और डेसीडॉक बुलेटिन ऑफ़ इंफॉर्मेशन टेक्नॉलॉजी (पुस्तकालय और सूचना प्रौद्योगिकी में हो रहे विकास संबंधी एक द्वय मासिक प्रकाशन)।

रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन राष्ट्र की आंतरिक और बाह्य सुरक्षा आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विभिन्न उच्च प्रौद्योगिकी और उच्च प्राथमिकताओं वाली परियोजनाओं को कार्यान्वित करता है। इन परियोजनाओं के सफल कार्यान्वयन हेतु परियोजना में कार्यरत वैज्ञानिकों को संबंधित परियोजना के लिए वांछित सूचनाओं को समय पर उपलब्ध कराना नितांत आवश्यक है। इसके लिए रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केंद्र (डेसीडॉक), दिल्ली ने 'सामरिक सूचना सेवा' नामक सेवा शुरू की है। इसके अंतर्गत रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन की विभिन्न प्रयोगशालाओं में चल रही उच्च प्राथमिकता वाली परियोजनाओं के लिए सूचना उपलब्ध कराने हेतु एक प्रणाली/तंत्र का रूपांकन, संरचना एवं विकास किया गया है। इस प्रणाली के अंतर्गत वैज्ञानिकों की सूचना आवश्यकताओं को समझते हुए उन्हें उपयुक्त सूचना उपलब्ध कराई जाती है। जहां तक रक्षा अनुसंधान एवं युद्ध विज्ञान से संबंधित विज्ञान लेखन का सवाल है, रक्षा मंत्रालय से जुड़े विभिन्न संगठन इस कार्य से लंबे समय से जुड़े हुए हैं। यह हर्ष का विषय है कि पिछले पैंतीस वर्षों में इस कार्य में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। उल्लेखनीय है कि डेसीडॉक अपने संसधानों से विभिन्न वैज्ञानिक विषयों पर हिंदी में पुस्तकें भी प्रकाशित करता है।

मैं यहां अपनी बात सिर्फ हिंदी में किये जाने वाले लोकप्रिय विज्ञान लेखन तक सीमित रखना चाहूंगा क्योंकि उन प्रमुख पक्षों में से एक है जो देश में वैज्ञानिक वातावरण तैयार करने में अहम भूमिका निभा सकते हैं । रक्षा मंत्रालय का प्रारंभ से यह प्रयास रहा है कि रक्षा अनुसंधान एवं युद्ध विज्ञान से संबंधित विज्ञान लेखन को बढ़ावा दिया जाए। इसके लिए सन् 1982 में 'रक्षा मंत्रालय पुरस्कार योजना' शुरू की गयी। इस योजना के परिणाम आशाजनक रहे और रक्षा अनुसंधान एवं युद्ध विज्ञान से संबंधित अनेक पुस्तकें सामने आईं। सन् 1985 से डीआरडीओ के 'राजभाषा और संगठन पद्धति निदेशालय' ने हिंदी में विज्ञान लेखन को बढ़ावा देने के लिए 'रक्षा अनुसंधान एवं विकास राजभाषा पुरस्कार' प्रारंभ किया। यह पुरस्कार प्रति वर्ष विज्ञान और प्रौद्योगिकी की दो शाखाओं नामतरू अनुप्रयुक्त विज्ञान तथा मूल विज्ञान (जिसमें इंजीनियरी और मैनेजमेंट शामिल हैं) में अलग-अलग दिए जाते हैं। कोई भी भारतीय लेखक इस योजना में भाग ले सकता है। इस योजना के अंतर्गत विज्ञान के कई लेखकों की पुस्तकें पुरस्कृत हुई।

प्रयोगशालाओं के स्तर पर विज्ञान लेखन को बढ़ावा देने के लिए भी डीआरडीओ ने सक्रिय भूमिका निभायी है। सम्प्रति डीआरडीओ प्रयोगशालाओं से 45 गृह पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। इन पत्रिकाओं में संबंधित प्रयोगशालाओं में हो रहे वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी विषयक कार्यों संबंधी लेख पर्याप्त संख्या में छपते हैं। इसके अतिरिक्त सशस्त्र सेना चिकित्सा सेवा महानिदेशालय, गुणता आश्वासन महानिदेशालय, नौसेना तथा वायु सेना के अंतर्गत कार्य कर रहे विभिन्न संस्थाओं और प्रतिष्ठानों से प्रकाशित होने वाली गृह पत्रिकाओं में विज्ञान संबंधी रचनाएं प्रकाशित होती हैं। रक्षा मंत्रालय की विभिन्न आयुध इकाइयों से भी जो गृह पत्रिकाएं प्रकाशित होती हैं, उनमें भी ऐसी रचनाओं का समावेश रहता है। इन गृह पत्रिकाओं को पल्लवित-पुष्पित करने हेतु रक्षा मंत्रालय ने सन् 1989 में 'रक्षा मंत्रालय गृह पत्रिका पुरस्कार योजना' को आरंभ किया। यह योजना रक्षा मंत्रालय के अंतर्गत आने वाले सभी विभागों से जुड़े संस्थानों, स्थापनाओं और प्रतिष्ठानों के लिए है।

विज्ञान लेखन को बढ़ावा देने के लिए भी डीआरडीओ ने सक्रिय भूमिका निभायी है। सम्प्रति डीआरडीओ प्रयोगशालाओं से 45 गृह पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। इन पत्रिकाओं में संबंधित प्रयोगशालाओं में हो रहे वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी विषयक कार्यों संबंधी लेख पर्याप्त संख्या में छपते हैं। इसके अतिरिक्त सशस्त्र सेना चिकित्सा सेवा महानिदेशालय, गुणता आश्वासन महानिदेशालय, नौसेना तथा वायु सेना के अंतर्गत कार्य कर रहे विभिन्न संस्थाओं और प्रतिष्ठानों से प्रकाशित होने वाली गृह पत्रिकाओं में विज्ञान संबंधी रचनाएं प्रकाशित होती हैं।

रक्षा मंत्रालय से जुड़े वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीविद् राष्ट्रीय और स्थानीय स्तर पर छापने वाली पत्र-पत्रिकाओं में विगत कई दशकों से विज्ञान लेखन कर रहे हैं। विज्ञान, विज्ञान प्रगति, विज्ञान गरिमा सिंधु, आविष्कार, इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए, वैज्ञानिक और भारत सरकार के प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित की जाने वाली पत्रिकाओं के साथ-साथ हिंदुस्तान, नवभारत टाइम्स, राष्ट्रीय सहारा, जनसत्ता, दैनिक जागरण, पंजाब केसरी, दैनिक ट्रिब्यून, अमर उजाला, दैनिक भास्कर आदि अखबारों में जब तब रक्षा अनुसंधान एवं युद्ध विज्ञान से संबंधित लेख पढ़ने में आते हैं। कुल मिलाकर, यह एक शोध का विषय है कि अब तक रक्षा अनुसंधान एवं युद्ध विज्ञान से संबंधित कितना विज्ञान लेखन हुआ है और क्या वह हमारी आवश्यकताओं के अनुरूप है? यदि नहीं तो फिर हमें इस स्थिति में बदलाव लाने के लिए क्या कुछ करना होगा? खोजी प्रवृति रखने वाले विज्ञान लेखकों और पत्रकारों के लिए इस संपूर्ण परिदृश्य का ऑकलन करना एक रोचक और उपयोगी विषय होगा।

बहरहाल, यह भी सच है कि सारे तामझाम के बावजूद हम आमजन में विज्ञान का उतना संचार नहीं कर पाए हैं जितना किया जाना चाहिए था। यहां मैं विज्ञान परिषद् प्रयाग, इलाहाबाद की चर्चा करना चाहूंगा। वर्ष 1913 में स्थापित इस संस्था ने विज्ञान की जानकारी को आमजन तक पहुंचाने के लिए अब तक जितना कार्य किया है, वह सरकारी विभागों और मंत्रालयों के लिए सबक हो सकता है। सरकारी विभागों ने विज्ञान संचार के कार्य को उसी तरह से किया जैसे कोई सरकारी बाबू पानी अथवा बिजली के बिल जमा करता है। दरअसल, विज्ञान सृजन की तरह विज्ञान संचार का काम भी एक मिशन के रूप में लिया जाना चाहिए। हमारे सरकारी संस्थानों ने विज्ञान प्रसार संबंधी पुस्तकें छापी तो हैं किन्तु वे छपने के बाद आम जनता को नहीं पहुंचाई गयी। सरकारी क्षेत्र में आज तक जो लोकप्रिय विज्ञान पत्रिकाएं छप रही हैं, उनका वितरण किसी ऐसे अधिकारी के हाथ में होता है जिसका पत्रिका के प्रकाशन से कोई तालुक नहीं होता है। फलस्वरूप, पत्रिकाएं छपने के बाद गोदामों में पड़ी रहती हैं । विभिन्न मंत्रालयों से जुड़े वैज्ञानिक संगठनों के तहत आने वाली सभी प्रयोगशालाएं जो गृह पत्रिकाएं छापती हैं, उनमें विज्ञान संबंधी सामग्री अपेक्षा से कम होती है। जो थोड़ी बहुत विज्ञान संबंधी सामग्री उनमें मौजूद रहती है, अक्सर उसे देखकर यही लगता है कि लिखने वाले ने उसे शायद मजबूरी में या किसी दबाव में लिखा है। यदि कोई उत्कृष्ट विज्ञान लेख उसमें छपा भी हो तो उसके लेखक को कहीं से कोई ऐसा प्रोत्साहन नहीं मिलता है जिससे उसमें वह भावना बलवती हो जो किसी वैज्ञानिक को लोकप्रिय विज्ञान लेखन के लिए प्रेरित करती है।

मैं अपने दीर्घकालिक अनुभव के आधार पर यह निःसंकोच कह सकता हूँ कि हमारे देश में मौजूद सैकड़ों प्रयोगशालाओं में अपवाद स्वरुप एक या दो ऐसी प्रयोगशालाएं हो सकती हैं जहां इस बात पर गंभीरता से विचार होता हो कि विज्ञान का संचार कैसे किया जाये ? घड़ी देख कर नौकरी करने वाले लोगों से इस तरह की आशा रखना व्यर्थ है। यूं आपको इन वैज्ञानिकों के बीच कुछ ऐसे लोग भी मिल जायेंगे जो घड़ी देख कर नौकरी नहीं करते हैं किन्तु ऐसा वे विज्ञान के सृजन या संचार के लिए नहीं अपितु अपने प्रचार–प्रसार के लिए करते हैं ताकि वे समय से पहले प्रोन्नति पाते रहें। ऐसे लोग देश और समाज का अपेक्षाकृत अधिक नुकसान करते हैं। ये अक्सर समाज को गलत जानकारी परोसते हैं; आंकड़ों से खिलवाड़ कर अपने वरिष्ठ अधिकारियों को गुमराह करते हैं और कई बार तो पूरे देश को गुमराह करते हैं।

मैं अपने दीर्घकालिक अनुभव के आधार पर यह निस्संकोच कह सकता हूं कि हमारे देश में मौजूद सैकड़ों प्रयोगशालाओं में अपवाद स्वरूप एक या दो ऐसी प्रयोगशालाएं हो सकती हैं जहां इस बात पर गंभीरता से विचार होता हो कि विज्ञान का संचार कैसे किया जाये? घड़ी देख कर नौकरी करने वाले लोगों से इस तरह की आशा रखना व्यर्थ है। यूं आपको इन वैज्ञानिकों के बीच कुछ ऐसे लोग भी मिल जायेंगे जो घड़ी देख कर नौकरी नहीं करते हैं किन्तु ऐसा वे विज्ञान के सृजन या संचार के लिए नहीं अपितु अपने प्रचार- प्रसार के लिए करते हैं ताकि वे समय से पहले प्रोन्नति पाते रहे। ऐसे लोग देश और समाज का अपेक्षाकृत अधिक नुकसान करते हैं। ये अक्सर समाज को गलत जानकारी परोसते हैं; आंकड़ों से खिलवाड़ कर अपने वरिष्ठ अधिकारियों को गुमराह करते हैं और कई बार तो पूरे देश को गुमराह करते हैं। गौरतलब है कि हमारे सभी नेता जिस वैज्ञानिक चेतना की बात करते हैं, वह तभी संभव है जब सरकारी और गैर सरकारी, दोनों स्तरों पर विज्ञान की जानकारी उस आम आदमी तक पहुंचे जिसके आंसू पोंछने का स्वप्न बापू ने देखा था। दरअसल, विज्ञान की मदद से हम गरीबी से निज़ात पा सकते हैं और एक ऐसे भारत का निर्माण कर सकते हैं जिसकी सोच आधुनिक और प्रगतिशील हो। यह खेद की बात है की हमारे वैज्ञानिक जिस भाषा में बात करते हैं, वह आम भारतीयों की भाषा नहीं होती और वे स्वदेश के बजाए विदेशी जर्नलों में अपने कार्यों का विवरण छपवाना चाहते हैं। वे सिर्फ एक ही बात दोहराते मिलेंगे, 'हमारे जर्नल अंतरराष्ट्रीय स्तर के नहीं हैं।'

ऐसे लोग क्या यह बताने की कृपा करेंगे कि हमारे जर्नलों का स्तर कैसे बेहतर हो सकता है? अगर हमारे देश को तरक्की करनी है तो उसके लिए किसी विदेशी को नहीं अपितु हमें ही कठिन परिश्रम करना होगा। अगर हमें अपने जर्नलों को बेहतर बनाना है तो हमें अपने अच्छे शोध पत्र और रिव्यू आलेख उनमें छापने होंगे। हम इस तथ्य से परिचित हैं कि विदेशी जर्नल महंगे होने के कारण हमारे विद्यालयों के पुस्तकालयों तक नहीं पहुँच पाते हैं। फलस्वरूप, हमारे छात्र विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हो रहे नवीनतम कार्यों से परिचित नहीं हो पाते हैं। सरकार को अब अविलम्ब ऐसे सभी कदम उठाने होंगे जो विज्ञान संचार और उसके प्रसार के कार्य को वह गति प्रदान कर सकें जो वर्ष 2020 में न सही, वर्ष 2030 तक हमें एक विकसित राष्ट्र का दर्जा दिलाने में सहायक हो सकते हैं।

अंत में यहां यह जरूर कहना चाहूंगा की अगर हमें विज्ञान संचार करना है तो उसमें हमारे मीडिया की भूमिका भी सकारात्मक होनी चाहिए। हमारा प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया विज्ञान संचार के बजाए अंधविश्वासों पर आधारित सामग्री को परोसने में रूचि रखता है। वे वैज्ञानिकों के बजाए पोंगा पंडितों और कठमुल्लाओं को वरीयता देते हैं। कुछ पाखंडी बाबाओं और माताओं की चर्चा से समाज और देश का कोई भला नहीं होने वाला है। हमारे मीडिया में जादू-टोने के विज्ञापन जिस बेशर्मी से छापे और दिखाए जाते है ,उसे देखकर यह कतई महसूस नहीं होता है कि हम इक्कीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक के पांचवे वर्ष में प्रवेश कर चुके हैं !

subhash.surendra@gmail.com

हिंदी में विज्ञान लेखन क्यों और कैसे

देवेन्द्र मेवाड़ी

विज्ञान लेखन का क्षेत्र बहुत विशाल है। आप अनेक माध्यमों के लिए विविध प्रकार का लेखन कर सकते हैं और विज्ञान लेखक बन सकते हैं। कोई भी व्यक्ति विज्ञान लेखक इसलिए बनना चाहेगा कि वह लोगों को विज्ञान के विविध क्षेत्रों की जानकारी दे सके। अगर आप मुझसे पूछें कि मैं विज्ञान लेखन क्यों करता हूं तो मेरा उत्तर है कि मुझे अपनी दुनिया, अपनी प्रकृति और इस विशाल ब्रह्मांड के बारे में जो कुछ पता लगे उसे मैं आपको और दूसरों को भी बता सकूं। बता सकूं कि हर रोज सूरज क्यों निकलता है, क्यों डूबता है, क्यों शीतल चांद निकलता है, तारे क्यों टिमटिमाते हैं, आकाश में कहीं कोई तारा क्यों टूटता है, आकाश इतना अनंत क्यों है?पौधे क्यों उगते हैं, क्या उनमें भी प्राण हैं, फूल क्यों खिलते हैं, मनुष्य कहां आया, चिड़ियां क्यों उड़ती हैं, पशु-पक्षी कहां से आए, कीड़े-मकोड़े कहां से आए, जुगनू क्यों चमकते हैं, मछलियां पानी में कैसे सांस लेती हैं, नदियां क्यों बहती हैं, सागर कैसे बनते हैं, बादल क्यों बनते हैं, वर्षा क्यों होती है, क्यों बर्फ गिरती है। और भी न जाने कितना कुछ।

किसके लिए लिखें?

यह जानना बहुत जरूरी है कि हम किसके लिए लिखें। हमारे पाठक, हमारे श्रोता और दर्शक कौन हैं? मैं समझता हूं, हम लोगों के आसपास, समाज में कम-से कम तीन तरह के पाठक, श्रोता, दर्शक तो हो ही- वैज्ञानिक, छात्र व शिक्षक और जन सामान्य। इनमें से हमारा लक्ष्य वर्ग कौन है?मतलब हम इनमें से किस पाठक, श्रोता या दर्शक वर्ग के लिए लिखना चाहते हैं?लेखन के लक्ष्य वेध के लिए लक्ष्य को जानना निहायत ही जरूरी है। पहले लक्ष्य वर्ग में वैज्ञानिक हैं, जो वैज्ञानिक भाषा में लिखते हो और अन्य वैज्ञानिक उस भाषा को समझते हैं।

दूसरा लक्ष्य वर्ग है- शिक्षक व छात्र। इनके लिए वैज्ञानिक पाठ्य पुस्तकें तथा वैज्ञानिक लेख लिखे जाते हो जिनमें अर्द्ध तकनीकी भाषा का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार का वैज्ञानिक लेखन शिक्षकों के 'लेक्चर नोट्स' या 'क्लासरूम नोट्स' की लीक पर चलता है। छात्र उसी अर्द्ध तकनीकी भाषा को पढ़ते-पढ़ते स्नातक स्तर पर वैज्ञानिकों की तकनीकी भाषा समझने में समर्थ होने लगते हैं।

तीसरे वर्ग में करोड़ों लोग हैं। इनमें घर और घर से बाहर काम करते लोग हैं, गृहणियां हैं, खेत-खलिहानों में काम करने वाले किसान हैं, कार्यालयों में काम करने वाले कर्मचारी, कल-कारखानों में काम करने वाले मजदूर हैं। और हां, इनमें प्रयोगशाला से घर लौटे वैज्ञानिक तथा कक्षाओं से लौटे छात्र भी हैं। इन करोड़ों लोगों को अपने खाली वक्त में पढ़ने, सुनने और देखने के लिए जानकारी चाहिए। वे तरह-तरह की जानकारी चाहते हैं। हम इस विशाल वर्ग को विज्ञान की जानकारी देकर इनमें वैज्ञानिक चेतना जगा सकते हैं। यह हमारी सामाजिक जिम्मेदारी है।

हम समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करने में मदद कर सकते हैं। समाज में कैसा सोच पनप रहा है, किस प्रकार की परंपराएं जन्म ले रही हैं- यह मुख्यरूप से इसी वर्ग पर निर्भर करता है। यही कारण है कि वैज्ञानिक जानकारी के अभाव में इसी वर्ग में भूत-प्रेत और चुड़ैलों की आवाजाही चलती रहती है, मूर्तियों के दूध पीने की खबर जंगल की आग की तरह फैल जाती है, रातों को पत्थर बरसते हैं और गरीब असहाय औरतें डायन मान कर मार दी जाती हैं। केवल लड़कियों को जन्म देने पर औरत की जिंदगी नरक बना दी जाती है। हर होनी-अनहोनी को दैवी इच्छा मान लिया जाता है।

खूब पढ़िए

आप जितना ही 'बहु श्रुत, बहु पठित होंगे उतना ही अच्छा लिखेंगे इसलिए विज्ञान के विविध क्षेत्रों की अधिक से अधिक पुस्तकें और लेख तथा समाचार पढ़ते रहिए। आप विज्ञान के बारे में जितना अधिक सुनेंगे, जितना अधिक पढ़ेंगे- उतनी ही अच्छी तरह विज्ञान की बातें अपने पाठकों और श्रोताओं को समझा सकेंगे।

मेरे विचार से विज्ञान का विद्यार्थी होने या न होने से ज्यादा जरूरी यह है कि आप में विज्ञान के प्रति रूचि हो, विज्ञान की बातें बताने में रूचि हो और विज्ञान को समझने का धैर्य हो। आप विज्ञान की कई बातें आसानी से समझ लेंगे और समझा सकेंगे। अगर आप विज्ञान के विद्यार्थी नहीं रहे हैं तो अब बन जाइए। स्वयं के बलबूते पर विज्ञान पढ़िए। इस तरह स्वाध्याय से विज्ञान समझिए और समझाइए।

किस माध्यम के लिए क्या लिखें

विज्ञान लेखन पहले केवल लेख, पुस्तकें और वार्त्ता तक ही सीमित था। समाचार-पत्रों तथा पत्रिकाओं के लिए लेख लिखे जाते थे। रेडियो पर वार्त्ता दी जाती थी। लेकिन आज विज्ञान लेखक के लिखने के लिए अपार संभावनाएं हैं। वह कई माध्यमों या मीडिया के लिए लिख सकता है। विविध प्रकार का लेखन कर सकता है। इनमें से कुछ माध्यम अर्थात् मीडिया तथा लेखन के प्रकार हैं:

प्रिंट मीडिया

समाचार पत्र- लेख, फीचर, व्यंग्य, नियमित कालम, विज्ञान कथाएं, साक्षात्कार

पत्रिकाएं - लेख, कविताएं, नाटक, व्यंग्य, परिचर्चा, नियमित कालम, विज्ञान कथाएं

पुस्तिकाएं, पत्रक, पोस्टर, पुस्तके, समीक्षाएं, अनुवाद

कॉमिक्स तथा चित्रकथाएं

इलेक्ट्रानिक मीडिया

रेडियो-वार्त्ता, परिचर्चा, साक्षात्कार, फीचर, विज्ञान पत्रिका, विज्ञान समाचार

रेडियो नाटक, झलकी, रूपक

फोन-इन कार्यक्रम, ब्रिज-इन कार्यक्रम, स्पांसर्ड कार्यक्रम

दूरदर्शन : विज्ञान कार्यक्रम प्रस्तुतीकरण, विज्ञान समाचार, साक्षात्कार, विज्ञान विषयक धारावाहिक (पटकथा), विज्ञान वृत्त चित्र, विज्ञान पत्रिका कार्यक्रम, नाटक, झलकियां

फिल्म : वृत्त चित्र, फीचर फिल्म

आडियो/वीडियो कैसेट/सी डी : विज्ञान धारावाहिक, विज्ञान के रोचक कार्यक्रम, वैज्ञानिक गतिविधियां, वैज्ञानिकों की जीवनी

विज्ञान प्रदर्शनी : संकल्पना तथा आलेख, कमेंट्र, पत्रक, पुस्तिकाएं, पोस्टर

कठपुतली प्रदर्शनी, नाट्य आलेख

जादू प्रदर्शनी : अंध विश्वासों, चमत्कारों को दूर करने के लिए कार्यक्रम संकल्पना व आलेख

मौखिक माध्यम : आलेख इत्यादि

कैसे लिखें

हर माध्यम के लिए विविध प्रकार के लेखन का स्वरूप और शैली अलग-अलग होती है। हर माध्यम की जरूरत अलग-अलग होती है। विविध माध्यमों के लिए विज्ञान लेखन और उसकी वि ोशताएं इस प्रकार हैं:

विज्ञान समाचार: विज्ञान की हर घटना, दुर्घटना, खोज, आविष्कार तथा संभावना समाचार है। इनका संबंध विज्ञान के किसी भी विषय, प्रयोगशालाओं, वैज्ञानिकों आदि से हो सकता है। विज्ञान समाचार को सरल तथा सहज भाषा में लिखा जाना चाहिए ताकि विज्ञान की सामान्य जानकारी रखने वाला या विज्ञान से अनभिज्ञ आम पाठक तथा श्रोता उसे आसानी से समझ सके। विज्ञान समाचार तथ्यों पर आधारित होते हैं इसलिए इनमें इधर-उधर की बातें नहीं की जा सकती। समाचार का शीर्षक सटीक और पैना होना चाहिए। शीर्षक कभी भी भ्रामक नहीं होना चाहिए। उसे अर्थपूर्ण और संभव हो तो मुहावरेदार होना चाहिए। अगर आप विज्ञान समाचार का सार मान कर संक्षिप्त शीर्षक लिखेंगे तो वह सटीक ही होगा। महत्वपूर्ण समाचारों का संक्षिप्त 'इंट्रो' भी लिखिए ताकि उसे पढ़ कर पाठक को समाचार के बारे में मुख्य जानकारी मिल जाय। विज्ञान समाचारों के शेष भाग या बॉडी में अन्य जानकारी दे सकते हैं।

फीचर तथा लेख: फीचर समाचार का विस्तार है। समाचार पढ़ने के बाद पाठक के मन में जो जिज्ञासा पैदा होती है उसे फीचर पूरा कर सकता है। फीचर उसी विषय पर सटीक जानकारी देने वाली विस्तृत टिप्पणी है। उसमें इधर-उधर के संदर्भ या विवरण देने के बजाय समाचार में चर्चित वैज्ञानिक विषय की और अधिक जानकारी सरल, सहज भाषा और रोचकता के साथ दे सकते हैं। अतिशयोक्तियां डाल कर उसे उथला या हल्का बनाने की भूल भी मत कीजिए। 'चांद पर मानव के कदम' ही काफी है उसे 'तीनों लोकों को नापेगा मानव' लिख कर ज्यादा मत नाप दीजिए। 'अब सारे काम संभाल लेंगे रोबोट' में भी थोड़ा धैर्य रखिए, उन्हें आने तो दीजिए। विश्वास कीजिए, वे सारे काम नहीं संभालेंगे। रोबोटिक्स के वैज्ञानिक उन्हें जो काम सिखा रहे हैं फिलहाल वही करने दीजिए। फीचर में आंकड़े नहीं भरने हैं अन्यथा वे जानकारी के सहज प्रवाह को रोकेंगे और सरस स्वाद में कंकड़ों की तरह किरकिराएंगे। फीचर को शुरू के आखिर तक रोचक बनाए रखिए।

लेख: आपने संक्षेप में सारतत्व देकर समाचार लिखा। पाठक की जिज्ञासा को पूरा करने के लिए रोचकता के साथ मुहावरेदार, मजेदार भाषा में उसके लिए फीचर लिखा। लेकिन, विषय पर और

भी बहुत बातें हो सकती हैं। विषय का आमूलचूल वर्णन कर सकते हैं। अब आप विषय के आकाश में उड़ सकते हैं। उस पर ऊंचाई से विहंगम दृष्टि डाल सकते हैं। लेख के पूरे स्वरूप की योजना बना कर, यहां-वहां उड़ान भर कर भरपूर जानकारी जुटा सकते हैं। प्रथम वयस्क स्तनपोषी प्राणी भेड़ का क्लोन पैदा हुआ और आपने *समाचार लिखा*- 'भेड़ के प्रथम मानव निर्मित क्लोन ने जन्म लिया- डॉली एक हकीकत'।

इस समाचार को पढ़ते ही अनेक भाषाओं के विज्ञान लेखक तुरंत हरकत में आए। जिसने इस विषय की खोजों का जितना पीछा किया है, मतलब फॉलोअप करता रहा है वह उतनी ही तेजी से बाजी मार लेगा। उसने तत्काल समाचार का विस्तार किया और फीचर लिखा कि डॉली कौन है, किन वैज्ञानिकों ने किस विधि से उसे तैयार किया और इस विधि की भावी संभावनाएं क्या हैं।

लेकिन, क्लोन कथा तो बहुत लंबी है। इस विषय पर वैज्ञानिक बहुत पहले से अनुसंधान कर रहे हैं। कुछ लेखकों को क्लोन की कल्पना के बीज मांस पिंड से कौरवों के जन्म में भी दिखाई दिए। कुछ विज्ञान लेखकों को याद आया कि विज्ञान कथाओं में तो क्लोन बहुत पहले पैदा हो चुके हैं। माइकेल क्रिख्टन ने जुरैसिक पार्क में डायनोसौरों को जन्म दिलाया जिन्हें प्रख्यात निर्देशक स्टीवन स्पीलबर्ग ने फिल्म में साकार कर दिखाया। और हां, वर्षों पहले डेविड रोरविक ने अपनी 'इन हिज ओन इमेज' पुस्तक में यह घोषणा की थी कि एक उद्योगपति का क्लोन जन्म ले चुका है। तथ्यों पर ध्यान देने वाले विज्ञान लेखकों को सर जान गर्डन के टेडपोलों की कोशिकाओं से मेंढक बनाने के प्रयोग याद आए, कार्ल इल्मेंसी और पीटर होप की क्लोन चुहिया याद आई, जैरी हाल और राबर्ट स्टिलमैन की मानव भ्रूण से क्लोन बनाने की संभावना का स्मरण हो आया और विश्व भर में छिड़ी बहस भी याद आई। तभी इस घोषणा से विश्व भर में खलबली मच गयी कि मानव क्लोन 'ईव' का जन्म हो गया है। अरे एक क्लोन पर इतना कुछ?

इस विषय पर तो और भी बहुत कुछ लिखा जा सकता है। यानी अब आप 'लेख' लिखिए। सागर गागर में वहीं समाएगा। इतना कुछ फीचर में तो नहीं दिया जा सकता ना?लेकिन लेख में यह सब कुछ देकर आप शर्तिया अपना सिक्का जमा सकते हैं। आपका ज्ञान पाठकों के लिए प्रेरणा बनेगा कि बाप रे, कितना कुछ पढ़ा है इस बारे में। कितना-कुछ पता है इन्हें। लेख में आपको ज्ञान प्रदर्शित करने का मौका मिलता है, उसे मत चूकिए।

लेख लंबा बेशक हो, अगर नीरस न हो अन्यथा कौन पढ़ेगा उसे?पाठक पन्ने पलट देगा। इसलिए बड़े धैर्य के साथ लिखिए, मुहावरेदार भाषा और रोचक शैली अपनाइए और स्वयं पाठक बन कर लिखिए। अगर आप बोर हो रहे हो तो आपके लेख को पढ़ने वाले हजारों, लाखों पाठक भी बोर होंगे। क्या आप नहीं चाहते, लोग कहें- 'वह लेख इन्होंने लिखा है।' आपकी जिम्मेदारी बनती है। आप हजारों-लाखों पाठकों के प्रति जिम्मेदार हैं। इसलिए, बहुत सोच-समझ कर, जिम्मेदारी से लिखिए।

संपादकीयः अगर आप समाचारपत्र में काम करते हैं तो संपादक आपसे विज्ञान के किसी ज्वलंत या सामाजिक मुद्दे पर तत्काल संपादकीय लिखने की अपेक्षा कर सकते हैं। संपादकीय ऐसे मुद्दे पर महत्वपूर्ण टिप्पणी है। इससे समाचारपत्र द्वारा उस वैज्ञानिक विषय या घटना को दिए गए महत्व का भी पता लगता है। संपादकीय पृष्ठ पर प्रायः तीन या कभी-कभी दो संपादकीय दिए जाते हैं। कई बार ऐसी टिप्पणी या संपादकीय का राजनीतिक, सामाजिक या नैतिक पहलू भी हो सकता है, इसलिए संपादकीय लिखना बहुत जिम्मेदारी का काम है। इसे लिखते समय समाचारपत्र की नीति को भी ध्यान में रखना आवश्यक होता है क्योंकि संपादकीय को समाचारपत्र का वक्तव्य माना जाता है। क्लोनिंग या परमाणु परीक्षणों को ही लें। क्या मानव क्लोनिंग संबंधी प्रयोग किए जाने चाहिए?या इनका विरोध किया जाना चाहिए? देश की परमाणु नीति क्या होनी चाहिए? इसी से संपादकीय दृष्टि का पता लगेगा। इसीलिए संपादकीय में पहले विषय की चर्चा की जाती है, फिर उसका विश्लेषण किया जाता है और समापन संपादकीय दृष्टि से होता है।

व्यंग्यः वैज्ञानिक व्यंग्य का क्षेत्र अभी तक अछूता है। इस विधा में लिखने की बड़ी संभावनाएं हैं। बस, एक ही जरूरत है- थोड़ा वक्र और पैनी दृष्टि ताकि बात तीर की तरह चुभे भी और मर्म को छुए भी। यहां नोबेल पुरस्कार विजेता कृषि वैज्ञानिक डॉ. नार्मन बोरलाग के एक भाषण का समापन अंश बरबस याद आ रहा है। उन्होंने वैज्ञानिकों से कुछ यों कहा : होमोसेपिएंस मतलब आदमी की एक नई नस्ल का विकास करके हमारी सभ्यता की रक्षा कीजिए। उस नस्ल की आंतों में ऐसा एंजाइम हो जो फाइलों के कागजों और लाल फीते के पहाड़ों को पचा सके। उसमें साथी इंसानों के प्रति सहानुभूति व सहज बुद्धि का जीन होना चाहिए। एक जीन ऐसा भी हो जो संतानोत्पादन घटा सके क्योंकि इतिहास साक्षी है कि आदमी ने बार-बार आबादी बढ़ा कर कंगाली और अकाल आमंत्रित किए हैं।

स्तंभ/कालमः कुछ समाचार पत्र-पत्रिकाओं में विज्ञान के नियमित स्तंभ या कालम भी प्रकाशित होते हैं। ये समाचार पत्रिकाएं आपको विज्ञान का नियमित स्तंभ या कालम लिखने का अवसर भी दे सकती हैं। ऐसे स्तंभ प्रायः विज्ञान, स्वास्थ्य, कृषि आदि विषयों से संबंधित होते हैं। इन स्तंभों के संक्षिप्त नाम होते हो जैसे ज्ञान-विज्ञान, विज्ञान और जीवन, विज्ञान बिंदु, सर्च इंजन, आरोग्य, ओ पी डी, हरा कोना आदि। इनकी शब्द संख्या निर्धारित होती है। विज्ञान में रूचि रखने वाले पाठक बहुत रूचि के साथ इन स्तंभों को पढ़ते हैं। स्तंभ प्रायः सामयिक घटनाओं पर निर्धारित शब्द सीमा के भीतर रोचक शैली में लिखे जाते हैं ताकि पठनीयता बनी रहे।

भेंटवार्त्ता (इंटरव्यू): किसी वैज्ञानिक या वैज्ञानिक नीति निर्धारक से भेंट करके समाचार पत्र, पत्रिका या रेडियो व टेलीविजन के लिए वैज्ञानिक विषय पर भेंटवार्त्ता तैयार की जा सकती है। यह साक्षात्कार या इंटरव्यू भी कहलाता है। किसी वैज्ञानिक उपलब्धि या अनुसंधान के बारे में बात करने से पहले अपने-आप को उस विषय के बारे में प्रश्न पूछने के लिए तैयार कर लीजिए। उस बारे में हर संभव जानकारी का पता लगाइए। परमाणु विस्फोट पर प्रश्न पूछने हो तो देश के परमाणु अनुसंधान कार्यक्रम की यथासंभव जानकारी जरूर होनी चाहिए। अगर मात्र समाचार लिख रहे हैं तो सीमित लेकिन सार रूप में जानकारी का पता रहे। अगर किसी पत्रिका या समाचारपत्र के परिशिष्ट के लिए विचार लेना चाहते हैं तो बातचीत लंबी होगी। इस तरह 'समाचार' के लिए भेंटवार्त्ता हो सकती है और 'विचार' के लिए भी।

कुछ खास बातें जरूर ध्यान में रखिए: भेंट या इंटरव्यू के लिए समय पहले ले लीजिए, स्थान भी तय कर लीजिए, प्रश्नावली बना लीजिए, वैज्ञानिक के बारे में जितना पता लग सके लगा लीजिए, मिलने पर पहले बातचीत का माहौल बनाइए और उसी बहाव में प्रश्न भी पूछते जाइए। आप संक्षेप में पूछिए, वैज्ञानिक को बोलने दीजिए लेकिन विषय से उन्हें भी भटकने न दीजिए। इस विधा में लोकप्रिय विज्ञान लेखन की बड़ी संभावनाएं हैं।

विज्ञान नाटक: विज्ञान लेखन की यह एक महत्वपूर्ण विधा है जिसमें काफी लिखा जा सकता है। अब तक इस विधा में नाममात्र ही लिखा गया है। विगत कुछ वर्षों में वैज्ञानिक जागरूकता बढ़ाने के लिए वैज्ञानिक नुक्कड़ नाटक लिखे और खेले जाने लगे हैं। अंधविश्वासों की पोल खोलने के लिए नुक्कड़ नाटक काफी प्रभावशाली रहे हैं। अब नाट्य शैली में अनेक विज्ञान धारावाहिकों का प्रसारण भी हो रहा है।

प्रख्यात जर्मन नाटककार बर्तोल्ट ब्रेख्त का एक प्रसिद्ध नाटक है- गैलीलियो, जिसके माध्यम से रूढ़ियों और धर्मिक कट्टरता व अंधविश्वास पर चोट की गई है। भीष्म साहनी का 'हानूस' नाटक घड़ी के आविष्कारक कारीगर के संघर्ष को सामने रखता है। हिंदी के सुपरिचित नाटककार प्रताप सहगल ने प्राचीन भारतीय वैज्ञानिक आर्यभट प्रथम की खोजों को आधार बना कर 'अन्वेषक' नाटक की रचना की है। इधर रेडियो पर भी विज्ञान नाटकों का काफी प्रसारण हुआ है। मेरे एक रेडियो नाटक 'सभ्यता की खोज' का यह अंश देखिए :

शेखरः बबलू सो गया, मीना?

मीनाः हो सो गया। (आह भरकर) उसे क्या पता उसका पिता किस महायात्रा पर जाने वाला है....उसे इत्ता-सा छोड़कर।

शेखरः (शांत गंभीर स्वर) लेकिन जब वह बड़ा होगा और जानेगा कि इस सौरमंडल से बाहर आकाशगंगा के किसी और ग्रह में सभ्यता की तलाश में जाने वाला दुनिया का पहला आदमी उसका पिता है तो गर्व से उसका सीना फूल जाएगा...तुम जी क्यों छोटा करती हो। इस महायात्रा के लिए तुम भी गर्व करो....मेरा साहस बढ़ाओ, मीना।

मीनाः गर्व ही तो कर रही हूं शेखर..लेकिन जिस महायात्रा पर तुम जा रहे हो उसका कोई निश्चित परिणाम भी है? कैसे हो जाऊं पत्थर शेखर? ...कैसे भूल जाऊं यह कि तुम्हारे इस यात्री-५ अंतरिक्ष यान से पूर्व जो चार अंतरिक्ष यान इसी उद्देश्य से छोड़े गए वे 15 वर्षों की अनवरत यात्रा के बाद सौरमंडल से बाहर किसी खास बिंदु से लापता हो गए.....पृथ्वी से फिर उनका कोई संपर्क नहीं हो सका। तुम्हारा अंतरिक्ष यान भी। (सिसकी)

शेखरः नहीं मीना, इस तरह नहीं। इस तरह सोचो कि तुम्हारा यह शेखर इस रहस्य को सुलझा लेगा कि आखिर वे यान क्यों, कैसे और कहां लापता हो गए, पर्याप्त परमाणु ईंधन होने के बावजूद पृथ्वी से उनका संपर्क क्यों टूटा?जिस रहस्य को मशीनी मस्तिष्क नहीं सुलझा सके उसे मैं सुलझाऊंगा।

मीनाः और इसके लिए तुम पन्द्रह सालों तक अंतरिक्ष यान में उड़ते रहोगे।...पं...द्र....ह...साल।

(मीना की भारी-भारी सांसें सुनाई देती हैं)

शेखरः (हंसकर) हां, पंद्रह साल, मगर मेरे लिए वे शून्य होंगे। मैं तो पंद्रह साल हिम-समाधि में रहूंगा और ठीक उस बिंदु पर जागूंगा जहां से यान खिंचना शुरू होता है।

मीनाः (आश्चर्य) हिमसमाधि?

शेखर : दूर-दूर के ग्रहों की वर्षों लंबी यात्रा में अंतरिक्ष यात्री को दीर्घ निद्रा में सुलाने की यह एक सरल विधि है।

विज्ञान कथा: नई खोजों और नई तकनीकों से क्या-कुछ हो सकता है-यह सोच कर नए प्रकार की कथा-कहानियां लिखी जाने लगीं। इन्हें 'विज्ञान गल्प' अर्थात् 'साइंस फिक्शन' या विज्ञान-कथाएं कहा गया। यों समझ लीजिए कि 'कहानी की कला' टॉर्च का खोल है और उसमें बैटरी 'साइंस' है। जब दोनों मिल जाते हैं तो 'साइंस फिक्शन' या विज्ञान गल्प का प्रकाश पैदा होता है।

विज्ञान कथाकार में दुहरी योग्यता का होना आवश्यक है। एक ओर तो उसके पास संवेदनशील साहित्यकार का हृदय होना चाहिए और दूसरी ओर उसे विज्ञान की जानकारी भी होनी चाहिए। विज्ञान की पर्याप्त जानकारी न होने पर कथा केवल काल्पनिक तथ्यों पर आधारित होगी। उस कथा में तथा किसी परीकथा अथवा तिलिस्म-कथा में अंतर नहीं रह जाएगा। अगर साहित्य का ज्ञान

नहीं होगा, लेखकीय संवेदना नहीं होगी तथा केवल वैज्ञानिक जानकारी को कथा के रूप में संजोने की कोशिश की जाएगी तो वह मात्रा वैज्ञानिक तथ्यों का संकलन होगा। इसलिए इस अंतर को साफ और बहुत गहराई से अनुभव किया जाना चाहिए।

विज्ञान कथा लिखने के लिए कहानी के स्वरूप और उसकी सीमाओं का ज्ञान आवश्यक है क्योंकि विज्ञान कथाओं पर भी साहित्यिक कहानी और उपन्यास के ही नियम लागू होते हैं। कथानक, पात्र और उनका चरित्र चित्रण, भाषा-शैली और उद्देश्य कथा के प्रमुख तत्व हैं। विज्ञान कथा लिखते समय यह जरूर ध्यान में रखा जाना चाहिए कि वह 'कथा' हो, रोचक शैली में लिखा हुआ सरस वैज्ञानिक लेख नहीं इसलिए इस क्षेत्र में लेखन की बड़ी संभावनाएं हैं। जूल्स वर्न, एच. जी. वेल्स, आइजैक असीमोव, आर्थर क्लार्क, रे ब्रेडबरी आदि अनेक प्रख्यात विदेशी विज्ञान कथाकार हैं।

कॉमिक्सः बच्चों और किशोरों को विज्ञान की जानकारी देने का एक प्रभावशाली तरीका 'विज्ञान कॉमिक्स' है लेकिन दुर्भाग्य से हिंदी में अभी यह महज कल्पना ही है। विज्ञान कथा को चित्रों और संवादों के माध्यम से 'कॉमिक्स' में बड़े रोचक रूप में दिया जा सकता है। इसलिए विज्ञान लेखकों को इस विधा में गंभीरतापूर्वक लिखना चाहिए। इसमें विज्ञान कथा लेखकों और विज्ञान-कथा चित्रकारों के लिए बहुत संभावनाएं हैं। विज्ञान कथाओं के अतिरिक्त वैज्ञानिकों की जीवनियों और रोचक वैज्ञानिक तथ्यों पर भी कॉमिक्स तैयार किए जा सकते हैं।

मौलिक पुस्तकें: आप विज्ञान लेखक बनना चाहते हो तो हमारा सुझाव है कि अपनी रूचि के वैज्ञानिक विषयों पर लोकप्रिय विज्ञान की पुस्तकें लिखने की योजना जरूर बनाइए। पुस्तकों का स्थाई महत्व होता है और वे वर्षों तक पढ़ी जाती हैं। इसलिए विज्ञान के किसी भी विषय पर पुस्तक लिखिए- पेड़-पौधों, कीट-पतंगों, पशु-पक्षियों के बारे में। स्वयं अपने बारे में। धरती और आकाश के बारे में। आसपास के विज्ञान को विषय बनाइए। वैज्ञानिक खोजों, आविष्कारों पर लिखिए।

प्रिंट मीडिया अर्थात् समाचार पत्र-पत्रिकाओं आदि के लिए उपर्युक्त विधाओं के अतिरिक्त आप वैज्ञानिक पुस्तकों की समीक्षाएं भी लिख सकते हैं। वैज्ञानिक लेखों और विज्ञान कथाओं के अनुवाद कर सकते हैं। इससे आपका शब्द-सामर्थ्य तो बढ़ेगा ही, उन विषयों का ज्ञान भी बढ़ेगा। आप समाचार पत्र-पत्रिकाओं के लिए किसी वैज्ञानिक विषय या मुद्दे पर विभिन्न लोगों के विचार लेकर परिचर्चा भी लिख सकते हैं।

रेडियो : आकाशवाणी अर्थात् रेडियो के कार्यक्रम करोड़ों लोगों द्वारा सुने जाते हैं। शहरों में टी वी देखने वाले लोग समझते हो कि रेडियो की लोकप्रियता कम हो गई है, लेकिन ऐसी बात नहीं है। रेडियो की अपनी विशेषताएं हैं। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि दूसरा काम करते हुए भी आप रेडियो सुन सकते हैं। रेडियो एक अभिन्न साथी की तरह आप से जैसे बातें करता रहता है। आकाशवाणी प्रसारण केन्द्र देश भर में फैले हुए हैं। राष्ट्रीय चैनल भी हैं। एफ एम चैनल आ जाने के बाद इस माध्यम का और भी विस्तार हुआ है।

अपने नजदीकी रेडियो स्टेशन से सम्पर्क करके आप कार्यक्रमों में अपना योगदान दे सकते हैं। आप वैज्ञानिक विषयों पर वार्त्ताएं दे सकते हैं, परिचर्चा आयोजित कर सकते हैं, भेंटवार्त्ता दे सकते हैं, विज्ञान संबंधी फीचर तैयार कर सकते हैं, विज्ञान कथाओं का पाठ कर सकते हैं, वैज्ञानिक विषयों पर फोन-इन तथा ब्रिज-इन कार्यक्रमों में भाग ले सकते हैं, यहां तक कि वैज्ञानिक जानकारी देने वाले व्यावयायिक प्रायोजित कार्यक्रम भी लिख सकते हैं। आप विभिन्न श्रोता वर्ग के लिए प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों में भी लिख सकते हैं जैसे बच्चों के लिए, महिलाओं के लिए, किसानों के लिए, युवाओं के लिए।

रेडियो के लिए लिखते समय यह जरूर ध्यान में रखें कि आप 'लिख' नहीं 'कह' रहे हैं और ऐसे कह रहे हैं कि सुनने वाला अर्थात् श्रोता उसे आसानी से समझ सके। श्रोता अगर सुनने में रस ले रहा है तो समझिए रेडियो के लिए आप लिखने में सफल हो रहे हैं। ध्यान रहे, रेडियो के लिए छोटे वाक्यों में लिखिए तभी बोलने में रवानगी आएगी। लंबे और जटिल वाक्य साफ बता देते हो कि वार्त्ता पढ़ी जा रही है। यह वार्त्ता दोष नहीं आना चाहिए। रेडियो के लिए झलकी या नाटक लिखते समय भी यह ध्यान रखना आवश्यक है कि वह तमाम ध्वनि प्रभावों के साथ सुना जा रहा है श्रोता कुछ भी देख नहीं रहा है फिर भी नाटक का हर दृश्य उसे कानों से दिखाई दे रहा है। चित्रात्मकता रेडियो के लिए लेखन की महत्वपूर्ण विशेषता है।

टेलीविजन : टेलीविजन आज बेहद लोकप्रिय माध्यम है और इसके दर्शकों की संख्या भी करोड़ों में है। नगरों व बड़े शहरों में इस माध्यम की पैठ बढ़ती जा रही है। दूरदर्शन के अलावा अब टेलीविजन पर अनेक चैनल प्रसारित हो रहे हैं। इसके विभिन्न केन्द्रों से नियमित रूप से कृषि व ग्रामीण कार्यक्रम प्रसारित होते हैं। कई केन्द्र विज्ञान पर आधारित कार्यक्रम भी प्रसारित कर रहे हैं। इस माध्यम पर कृषि सहित विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों की जानकारी सरल-सहज भाषा और रोचक शैली में दी जा सकती है। विज्ञान लेखक इन विषयों पर बेहतर आलेख दे सकते हैं। महत्वपूर्ण वैज्ञानिक घटनाओं के अवसर पर आप दर्शकों को प्रामाणिक जानकारी देने के लिए वैज्ञानिकों के इंटरव्यू (भेंटवार्त्ता) कर सकते हैं। कृषि पर बेहद रोचक आउटडोर कार्यक्रम तैयार किए जा सकते हैं। वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में किए जा रहे अनुसंधान पर अच्छे कार्यक्रम लिखे और तैयार किए जा सकते हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थानों पर वृत्त चित्रों की पटकथाएं लिखी जा सकती हैं। स्वास्थ्य संबंधी कार्यक्रम बेहद लोकप्रिय होते हैं। ऐसे धारावाहिक कार्यक्रमों के आलेख लिखे जा सकते हैं। विज्ञान कथाओं पर आधारित धारावाहिकों और फिल्मों की संभावना और आवश्यकता तो है ही।

कहने का मतलब यह है कि इस माध्यम में भी लिखने की बहुत संभावनाएं हैं।

आडियो/वीडियो कैसेट/सी डी : रोचक और ज्ञानवर्द्धक विज्ञान कार्यक्रमों पर आडियो/वीडियो कैसेट तथा सी डी भी तैयार की जा सकती हैं। इनके लिए डॉक्यू -ड्रामा, झलकी, प्रहसन या नाटक की शैली में स्तरीय आलेख लिखे जा सकते हैं।

फिल्म : वैज्ञानिक विषयों पर वृत्त चित्र बनाए जाते हैं। आप इनके लिए आलेख या पटकथा लिख सकते हैं। ऐसे वृत्त चित्र टेलीविजन के लिए भी काफी तैयार किए जाते हैं। फिल्म प्रभाग (भारत सरकार) तथा स्वतंत्र निर्माताओं द्वारा प्रति वर्ष बड़ी संख्या में वृत्तचित्र बनाए जाते हैं। कुछ वर्ष पूर्व आकाश में हेल-बाप्प धूमकेतु देखा गया था। धूमकेतुओं के बारे में वैज्ञानिक जानकारी देने के लिए 'विज्ञान प्रसार' (विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार) द्वारा 'धूमकेतु' वृत्तचित्र तैयार कराया गया। इसकी पटकथा भारतीय पृष्ठभूमि में लिखी गई जिससे इसकी एक अलग पहचान बन सकी। ऐसे अनेक अवसर आ सकते हैं जब आप वृत्तचित्रों के लिए पटकथा लिख सकते हैं। हिंदी में विज्ञान कथाओं पर स्तरीय, तथ्यपरक और मनोरंजन फीचर फिल्मों का निर्माण तो अभी होना है। इसलिए इस दिशा में भी स्तरीय एवं 'प्रॉफेशनल' अर्थात् व्यावसायिक लेखन किया जाना चाहिए।

प्रदर्शनी : प्रदर्शनी के माध्यम से विज्ञान की जानकारी का प्रसार कम समय में प्रभावशाली तरीके से होता है। एक साथ बहुत बड़ी संख्या में लोग प्रदर्शनी देखते हैं। आप जैसे विज्ञान लेखक को वैज्ञानिक विषयों पर प्रदर्शनी की संकल्पना करके आलेख लिखने का अच्छा अवसर मिल सकता है। 'विज्ञान प्रसार' द्वारा 'विज्ञान रेल प्रदर्शनी' लगाई गई जो आज भी देश के विभिन्न राज्यों में विज्ञान जागरूकता फैला रही है।

प्रदर्शनियां गावों के स्तर से कस्बों, नगरों और महानगरों में लगती रहती हैं। जो विभाग और संस्थाएं वैज्ञानिक क्षेत्र से जुड़ी हो उन्हें प्रभावशाली तरीके से प्रदर्शनी लगाने के लिए बेहतर आलेख दिए जा सकते हैं। प्रदर्शनी के लिए मूल आलेख के अलावा आप कैप्शन, कमेंट्री, पत्रक, पुस्तिकाएं, पोस्टर आदि कई प्रकार का लेखन कर सकते हैं।

कठपुतली : यह एक लोकप्रिय परंपरागत माध्यम है। वैज्ञानिक जागरूकता बढ़ाने के लिए इस माध्यम का प्रयोग भी किया जा सकता है। राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद (एन सी एस टी सी), विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा इस माध्यम का उपयोग किया जा रहा है। कठपुतली शो के लिए रोचकता का होना बेहद जरूरी है क्योंकि लोग इसे मनोरंजन के लिए देखते हैं। इसलिए वैज्ञानिक जानकारी नाटक के ताने-बाने में बुन कर चुटीले संवादों और मनमोहक नृत्य आदि के साथ प्रस्तुत की जा सकती है। कठपुतली प्रदर्शन के लिए लिखते समय यह अच्छी तरह याद रहना चाहिए कि वैज्ञानिक जानकारी और मनोरंजन का मिश्रण इस तरह बनाया जाए कि दर्शक उसे सहज रूप में स्वीकार कर लें। अंधविश्वासों को दूर करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों के मेले, प्रदर्शनियों में इस माध्यम का भरपूर उपयोग किया जा सकता है।

जादू प्रदर्शन : जादू सुनते ही लोग इसकी ओर आकर्षित हो जाते हैं। यह भी परंपरागत माध्यम है। सामान्य वैज्ञानिक तथ्यों का सहारा लेकर आए दिन अनेक ढोंगी साधू, तांत्रिक और अन्य 'चमत्कारी' बाबा लोगों को बेवकूफ बना कर ठगते हैं। जादू के माध्यम से यह दिखाया जा सकता है कि जिसे लोग चमत्कार समझ रहे हो वह सामान्य वैज्ञानिक तथ्य है। उसमें चमत्कार की कोई बात नहीं है। जादू के शो के लिए वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित आलेख लिखे जा सकते हैं जिन्हें जादू दिखाने वाला कलाकार मंजे हुए तरीके से साक्षात दिखा सकता है।

मौखिक माध्यम : विज्ञान लोकप्रियकरण का एक सशक्त माध्यम है- मौखिक बातचीत, व्याख्यान या भाषण। प्रसिद्ध वैज्ञानिक माइकेल फैराडे ने बच्चों को विज्ञान की जानकारी देने के लिए इस माध्यम का खूब प्रयोग किया। वे कहते थे- हमें बच्चों के लिए लोकप्रिय विज्ञान के व्याख्यान देने चाहिए ताकि वे विज्ञान को अच्छी तरह समझ-बूझ सकें। उन्होंने ऐसे व्याख्यानों की परंपरा प्रारंभ की और अपना पहला व्याख्यान 'मोमबत्ती का रासायनिक इतिहास' विषय पर दिया। वे जटिल वैज्ञानिक विषय पर सरस भाषण देते थे।

आप स्कूल, कालेजों या विज्ञान क्लबों में इस तरह के व्याख्यान देने के लिए आलेख तैयार कर सकते हैं। स्वयं के लिए भी और दूसरे वक्ता के लिए भी। इससे आपका वैज्ञानिक ज्ञान बढ़ेगा और वैज्ञानिक जानकारी को समझ कर कहने की आदत बनेगी। विगत डेढ़ वर्षों के दौरान मैंने लगभग 5,000 विद्यार्थियों को इस तरह के व्याख्यान देकर उन्हें अपनी किस्सागोई में विज्ञान कथाएं सुनाई हैं और उन्हें सौरमंडल की सैर कराई है।

हां तो दोस्तो, इस तरह विज्ञान लेखन में लिखने की अपार संभावनाएं हैं। अच्छा लिखने के लिए लिखते रहना जरूरी है। आपके भीतर अगर लिखने का ऐसा जुनून है, और उसे आप बनाए रखते हैं तो आप जरूर सफल होंगे। एक दिन सफल विज्ञान लेखक बनेंगे।

E-mail: dmewari@yahoo.com

चिकित्सा विज्ञान में हिंदी की पढ़ाई कराने का प्रयास

प्रो.मोहनलाल छीपा

विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार 1989-2000 के बीच एम्स से स्नातक स्तर की शिक्षा ग्रहण किये चिकित्सकों में से 54 प्रतिशत भारत से बाहर है तथा जिनमें 85 प्रतिशत अमेरिका में बताये जाते हैं। अन्य चिकित्सा विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों से भी काफी संख्या में चिकित्सक भारत से शिक्षा ग्रहण कर अमेरिका, इंग्लैंड, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड जा रहे हैं तथा भारत की ग्रामीण जनता उनकी सेवाओं से उपेक्षित हैं।

भाषा केवल संवाद की ही नहीं अपितु संस्कृति एवं संस्कारों की भी संवाहिका है। भारत एक बहुभाषी देश हैं। सभी भारतीय भाषाएं समान रूप से हमारी राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक अस्मिता की अभिव्यक्ति करती है। यद्यपि बहुभाषी होना एक गुण है किन्तु मातृभाषा में शिक्षण वैज्ञानिक दृष्टि से व्यक्तित्व विकास के लिए आवश्यक है। मातृभाषा में शिक्षित विद्यार्थी दूसरी भाषाओं को भी सहज रूप से गहण कर सकता है। किसी देश में शिक्षण किसी विदेशी भाषा में करने पर जहाँ व्यक्ति अपने परिवेश, परम्परा, संस्कृति व भारतीय जीवन मूल्यों से कटता है, वहीं पूर्वजों से प्राप्त होने वाले ज्ञान, शास्त्र, साहित्य आदि से अनभिज्ञ रहकर अपनी पहचान खो देता है।

महामना मदनमोहन मालवीय, महात्मा गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, श्री माँ, डॉ. भीमराव अम्बेडकर, डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन जैसे मूर्धन्य चिंतकों से लेकर चंद्रशेखर वेंकट रमन, प्रफुल्लचंद्र राय, जगदीशचंद्र बसु जैसे वैज्ञानिकों, कई प्रमुख शिक्षाविदों तथा मनोवैज्ञानिकों ने मातृभाषा में शिक्षण को ही नैसर्गिक एवं वैज्ञानिक बताया है। समय-समय पर गठित शिक्षा आयोगों यथा राधाकृष्णन आयोग, कोठारी आयोग आदि ने भी मातृभाषा में ही शिक्षा देने की अनुशंसा की है। मातृभाषा के महत्व को समझते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी समस्त विश्व में 21 फरवरी को मातृभाषा दिवस के रूप में मनाने का निर्णय किया है।

परन्तु स्वतंत्रता के 68 वर्षो के बाद और संविधान में हिंदी राजभाषा घोषित होने के बावजूद भी हम चिकित्सा विषयों की शिक्षा हिंदी में प्रारंभ

इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए विश्वविद्यालय ने अब तक 225 के लगभग पाठ्यक्रमों का हिंदी में निर्माण कर लिया है। विज्ञान, कला, समाज विज्ञान, वाणिज्य, प्रबंधन, एवं विधि में प्रशिक्षण, पत्रोपाधि, स्नातक प्रतिष्ठा, स्नातकोत्तर, विद्यानिधि एवं विद्यावारिधि की पढ़ाई हिंदी माध्यम से प्रारंभ हो चुकी है। 2012-13 में 60 विद्यार्थियों से प्रारंभ हुए इस विश्वविद्यालय में 800 के लगभग विद्यार्थी अध्ययनरत हैं। परन्तु देश में आमधारणा यह है कि जब तक चिकित्सा और अभियांत्रिकी के क्षेत्र में अध्ययन, अध्यापन और शोध हिंदी माध्यम से प्रारंभ नहीं हो जाता तब तक हिंदी विश्वविद्यालय का कोई विशेष योगदान नहीं माना जायेगा।

नहीं कर सके। भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद-एम.सी.आई. (1934), भारतीय उपचर्या परिषद-आई. एन.सी. (1947) तथा भारतीय भेषज परिषद-पी.सी.आई. (1948) जिन पर एलौपेथी चिकित्सा शिक्षा का दायित्व है तथा जो द्वि-भाषी कार्य के लिए अधिकृत है, अभी तक हिंदी भाषा में चिकित्सा शिक्षा का कार्य प्रारंभ नहीं कर पाये।

देश में अंग्रेजी माध्यम की चिकित्सा शिक्षा के संबंध में कई शोध भी हुए हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार 1989-2000 के बीच एम्स से स्नातक स्तर की शिक्षा ग्रहण किये चिकित्सकों में से 54 प्रतिशत भारत से बाहर है तथा जिनमें 85 प्रतिशत अमेरिका में बताये जाते हैं। अन्य चिकित्सा विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों से भी काफी संख्या में चिकित्सक भारत से शिक्षा ग्रहण कर अमेरिका, इंग्लैंड, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड जा रहे हैं तथा भारत की ग्रामीण जनता उनकी सेवाओं से उपेक्षित हैं।

इसके अतिरिक्त अंग्रेजी माध्यम की चिकित्सा शिक्षा ग्रामीण परिवेश के विद्यार्थियों पर इतना तनाव उत्पन्न करती है कि वे आत्महत्या तक करने को मजबूर होते हैं, जब कि स्कूल स्तर पर वे सर्वोच्च स्थान पर होते हैं।

इन्ही तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय की स्थापना मध्यप्रदेश अधिनियम क्रमांक 34 के अंतर्गत दिनांक 19 दिसम्बर 2011 को की गई। इस विश्वविद्यालय का मुख्य उद्देश्य हिंदी भाषा को अध्यापन, प्रशिक्षण एवं ज्ञान की वृद्धि और प्रसार के लिए तथा विज्ञान साहित्य कला और अन्य विधाओं में उच्च स्तरीय गवेषणा के लिए शिक्षण का माध्यम बनाना है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए विश्वविद्यालय ने अब तक 225 के लगभग पाठ्यक्रमों का हिंदी में निर्माण कर लिया है। विज्ञान, कला, समाज विज्ञान, वाणिज्य, प्रबंधन, एवं विधि में प्रशिक्षण, पत्रोपाधि, स्नातक प्रतिष्ठा, स्नातकोत्तर, विद्यानिधि एवं विद्यावारिधि की पढ़ाई हिंदी माध्यम से प्रारंभ हो चुकी है। 2012-13 में 60 विद्यार्थियों से प्रारंभ हुए इस विश्वविद्यालय में 800 के लगभग विद्यार्थी अध्ययनरत हैं। परन्तु देश में आमधारणा यह है कि जब तक चिकित्सा और अभियांत्रिकी के क्षेत्र में अध्ययन, अध्यापन और शोध हिंदी माध्यम से प्रारंभ नहीं हो जाता तब तक हिंदी विश्वविद्यालय का कोई विशेष योगदान नहीं माना जायेगा। अतः चिकित्सा और अभियांत्रिकी में भी चिकित्सा पाठ्यक्रमों को प्राथमिकता देते हुए विश्वविद्यालय द्वारा निम्न कार्य किये गयेः-

चिकित्सा क्षेत्र की नियामक संस्थाओं से पत्राचार

चिकित्सा क्षेत्र में प्रमुख नियामक संस्थायें भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद, भारतीय नर्सिंग परिषद तथा भारतीय भेषज परिषद प्रमुख हैं। इन परिषदों को विश्वविद्यालय के उद्देश्यों को बताते हुए हिंदी माध्यम से चिकित्सा एवं नर्सिंग के पाठ्यक्रम हिंदी माध्यम से प्रारंभ करने के संबंध में स्वीकृति देने के लिए आग्रह किया गया था, परन्तु पत्रों के जबाव में भारतीय नर्सिंग परिषद ने 27 अक्टूबर 2013 को सूचित किया कि ''भारतीय उपचर्या परिषद का विश्वविद्यालय स्तर का कोई भी पाठ्यक्रम हिंदी माध्यम के अन्तर्गत नहीं आता है''। इसी तरह भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद ने विश्वविद्यालय के पत्र के जबाव में दिनांक 17-04-2013 को लिखा ''Medical Council of India is dealing with basic medical qualification ie. MBBS/MD/MS and super speciality courses and has not prescribed these courses in Hindi medium" .इस पत्र के उत्तर में विश्वविद्यालय ने पुनः भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद को पत्र लिखे 'कि यदि हम इन पाठ्यक्रमों को हिंदी में उपलब्ध करा दें तो हमें हिंदी माध्यम से चिकित्सा शिक्षा के पाठ्यक्रम प्रारंभ करने की स्वीकृति प्रदान कर दोगे? इसके बाद कई स्मरण पत्र देने तथा व्यक्तिगत रूप से संबंधित अधिकारियों से मिलने के बाद दिनांक 25-03-2015 के पत्र के जबाव में परिषद की शैक्षणिक समिति के निर्णय से अवगत कराया ''The Academic Committee observed that the Medical Council of India has time and again reiterated that in larger interest, the medium of instruction for the medical education under the ambit of Medical Council of India should be English in view of the availability of the abundant reading material in English and the mobility of the students and the teachers within the country and outside. The same is also desired in the context of the internationalization of medical education in global interests."

उक्त जबाव से यह निष्कर्ष निकलता है कि भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद जिसको पूरे देश की आवश्यकताओं के अनुसार चिकित्सा शिक्षा को आगे बढ़ाना है, वर्तमान स्थिति में अंग्रेजी माध्यम से विपुल साहित्य की उपलब्धता तथा चिकित्सा शिक्षा के अन्तरराष्ट्रीयकरण का तर्क के आधार पर हिंदी माध्यम से चिकित्सा शिक्षा प्रारंभ करने के आग्रह को टालना है।

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय से पत्राचार

भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद से चिकित्सा शिक्षा को हिंदी में प्रारंभ करने की दृष्टि से सकारात्मक उत्तर प्राप्त नहीं होने के बाद स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार से भी दिनांक 21.06.2014, 21.12.2014 एवं 09.02.2015 को पत्र लिखा गया, परन्तु अभी तक मंत्रालय से किसी प्रकार का जबाव प्राप्त नहीं हुआ। इससे यह लगता है कि हिंदी माध्यम से चिकित्सा शिक्षा को प्रारंभ करने में मंत्रालय एवं भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद दोनों की कोई रूचि नहीं है।

संगोष्ठी तथा एम.डी. के शोध ग्रंथ हिंदी में लिखने वालों का सम्मान

विश्वविद्यालय ने नियामक संस्थाओं तथा केन्द्र सरकार से पत्राचार करने के बाद यह उचित समझा कि चिकित्सकों के बीच जनजागरण किया जाना चाहिए और इस दृष्टि से 14 सितम्बर 2012 को ''चिकित्सा विज्ञान का शिक्षण, प्रशिक्षण एवं शोध का माध्यम हिंदी'' विषयक संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस संगोष्ठी में पीपुल्स विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो.जी.एस. दीक्षित सहित कई चिकित्सा शिक्षक उपस्थित हुए। इस संगोष्ठी में ऐसे तीन शिक्षकों की जानकारी कर उनका सम्मान किया गया, जिन्होंने देश में प्रथम बार हिंदी माध्यम से अपना स्नातकोत्तर (एम.डी.) का शोध ग्रंथ हिंदी में लिखा था। इनमें डॉ मुनीश्वर गुप्ता ने 1986-87 में आगरा के सरोजनी नायडू मेडिकल कालेज से एम.बी.बी.एस. एवं एम.डी. (रेडियोलोजी) में ''सिर एवं गले की कैंसर की सिकाई में अवटु ग्रंथी पर प्रभाव'' विषयक शोध ग्रंथ हिंदी में प्रस्तुत किया।

डॉ. सूर्यकांत त्रिपाठी ने 'क्षय रोग की अल्पावधि रसायन चिकित्सा में सह-औषधियों की भूमिका' विषयक शोध ग्रंथ एम.डी. उपाधि हेतु किंग जार्ज मेडिकल कालेज लखनऊ से लखनऊ विश्वविद्यालय को 1991 में हिंदी में प्रस्तुत किया। परन्तु इस शोध ग्रंथ को विभागाध्यक्ष तथा प्राचार्य ने मूल्यांकन के लिए जमा करने से मना कर दिया। डॉ. त्रिपाठी ने इसके विरूद्धसंघर्ष किया तथा प्राचार्य द्वारा कुलपति, कुलाधिपति के आदेशों की अवहेलना करने पर उत्तर प्रदेश के दोनों सदनों को शोध ग्रंथ जमा कर मूल्यांकन करने हेतु कठोर प्रस्ताव पास करना पड़ा। उपर्युक्त दोनो शोधार्थियों से प्रेरणा लेते हुए डॉ. मनोहर भंडारी ने 1992 में शरीर क्रिया विज्ञान विभाग, महात्मा गांधी स्मृति चिकित्सा महाविद्यालय इंदौर से एम.डी. की उपाधि हेतु 'पुलिस प्रशिक्षण विद्यालय, इंदौर के प्रशिक्षुओं में हीमोग्लोविन, रूधिरकोशिकामापी, सीरम लौह, कुल लौह बन्धन क्षमता एवं फुप्फुस क्रिया परीक्षणः एक अध्ययन' विषयक शोध ग्रंथ मध्यप्रदेश में पहली बार देवी अल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर को 1992 में प्रस्तुत किया।

हिंदी माध्यम से चिकित्सा शिक्षा प्रारंभ करने की प्रमुख चुनौती है। हिंदी भाषा में साहित्य की अनुपलब्धता तथा पाठ्यक्रमों का अंग्रेजी भाषा में होना प्रमुख है। विश्वविद्यालय ने इस कठिनाई को दूर करने के लिए पाठ्यक्रमों का निर्माण प्रारंभ करवाया। विश्वविद्यालय ने सर्वप्रथम स्नातक चिकित्सा (एम.बी.बी.एस.) को प्राथमिकता दी और हिंदी माध्यम से निम्न पाठ्यक्रमों को पूर्ण करवा लिया है। प्रथम एम.बी.बी.एस. के प्रथम सेमेस्टर से लेकर अन्तिम सेमेस्टर तक लगभग 18 प्रश्न-पत्र छात्रों को पढ़ने पड़ते हैं।

हिंदी में चिकित्सा पाठ्यक्रमों का निर्माण

विश्वविद्यालय की हिंदी माध्यम से चिकित्सा शिक्षा प्रारंभ करने की प्रमुख चुनौती है। हिंदी भाषा में साहित्य की अनुपलब्धता तथा पाठ्यक्रमों का अंग्रेजी भाषा में होना प्रमुख है। विश्वविद्यालय ने इस कठिनाई को दूर करने के लिए पाठ्यक्रमों का निर्माण प्रारंभ करवाया। विश्वविद्यालय ने सर्वप्रथम स्नातक चिकित्सा (एम.बी.बी.एस.) को प्राथमिकता दी और हिंदी माध्यम से निम्न पाठ्यक्रमों को पूर्ण करवा लिया है। प्रथम एम.बी.बी.एस. के प्रथम सेमेस्टर से लेकर अन्तिम सेमेस्टर तक लगभग 18 प्रश्न-पत्र छात्रों को पढ़ने पड़ते हैं। अतः विश्वविद्यालय ने शरीर रचना विज्ञान, जीवरसायनशास्त्र, शरीरक्रियाविज्ञान, न्याय संबंधी चिकित्साशास्त्र तथा जीवविष विज्ञान, सूक्ष्मजीवविज्ञान, विकृति विज्ञान, भेषजगुण विज्ञान, निश्चेतना विज्ञान, सामुदायिक चिकित्साशास्त्र, चर्मरोग तथा रतिजरोग विज्ञान, काय चिकित्सा, प्रसूति एवं स्त्रीरोग विज्ञान, नेत्र विज्ञान, अस्थि विज्ञान, नाक-कान-गला चिकित्सा विज्ञान, शिशुरोग विज्ञान, मनोरोग विज्ञान एवं शल्यचिकित्सा। इसके अतिरिक्त अस्पताल प्रबंधन, प्रयोगशाला तकनीक, चिकित्सा प्रयोगशाला तकनीशियन, डायलिसिस तकनीशियन, एक्सरे रेडियोग्राफर तकनीशियन तथा आपरेशन थियेटर तकनीशियन जैसे पत्रोपाधि पाठ्यक्रमों की रचना हो गयी है।

चिकित्सा एवं अभियांत्रिकी शिक्षा हिंदी माध्यम से पाठ्य पुस्तक लेखनविषयक संगोष्ठी

07 एवं 08 मार्च 2015 को दो दिवसीय चिकित्सा, अभियांत्रिकी शिक्षा हेतु हिंदी माध्यम से पुस्तक लेखन के संबंध में कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें प्रदेश के माननीय उच्च शिक्षा मंत्री श्री उमाशंकर गुप्ता, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग के अध्यक्ष डॉ. केशरीलाल वर्मा तथा हिंदी ग्रंथ अकादमी के अध्यक्ष डॉ.एस.बी. गोस्वामी के अतिरिक्त मध्यप्रदेश आयुर्विज्ञान विश्वविद्यालय, जबलपुर के कुलपति प्रो. डी.पी. लोकवानी, मौलाना आजाद राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्था के निदेशक डॉ. अप्पू कुट्टन एवं कई शिक्षक, विद्वान उपस्थित

1969–70 में हिंदी की पुस्तकें प्रकाशित करने के लिए हिंदी ग्रंथ अकादमियों की स्थापना की गयी। परन्तु विश्वविद्यालयों तथा सरकार द्वारा हिंदी माध्यम से परीक्षा देने की स्वीकृति न देने के कारण लेखकों की पुस्तकों की मांग नहीं बढ पाई। फिर भी कई शिक्षक है जिन्होंने हिंदी माध्यम से चिकित्सा लेखन करने की अपनी आदत नहीं छोड़ी। विश्वविद्यालय ने आज देश के विभिन्न प्रकाशकों से 300 के लगभग पुस्तकों का संकलन किया है, जो सभी हिंदी माध्यम से प्रकाशित हैं।

थे। दो दिन की इस कार्यशाला में चिकित्सा, अभियांत्रिकी क्षेत्र में पाठ्य पुस्तकों का मूल्यांकन, लेखन तथा अनुवाद प्रक्रिया पर विचार-विमर्श हुआ तथा कई शिक्षकों ने हिंदी में चिकित्सा से संबंधित पुस्तकें लिखने का आश्वासन दिया तथा कुछ ने कार्य भी प्रारंभ कर दिया है।

रोगों एवं मनोविकारों के समाधान के लिए मात्रभाषा हिंदी का प्रयोग

25 अप्रैल 2015 को विश्वविद्यालय में डॉ. अलोक पौराणिक का व्याख्यान का आयोजन किया गया जिसमें उन्होंने भाषा और मानव मस्तिष्क का अन्तर बताते हुए मात्रभाषा में शिक्षा को सर्वाधिक अनुकूल बताया। डॉ. पौराणिक ने वाचाघात (अफेजिया-बोली का लकवा) की चिकित्सा के लिए हिंदी को श्रेष्ठ बताया। इस दिशा में उन्होंने काफी शोध कार्य किया है।

हिंदी माध्यम से प्रकाशित चिकित्सा से संबंधित पुस्तकों का संकलन

हिंदी माध्यम से चिकित्सा शिक्षा के समक्ष प्रमुख चुनौती हिंदी भाषा में साहित्य की अनुपलब्धता ही है। परन्तु यह आश्चर्यजनक तथ्य है कि चिकित्सा महाविद्यालयों में अंग्रेजी माध्यम होने के बावजूद भी भारत में चिकित्सा क्षेत्र में हिंदी माध्यम से पुस्तक लेखन के लिए प्रयास 1962-63 में किये गये। 1969-70 में हिंदी की पुस्तकें प्रकाशित करने के लिए हिंदी ग्रंथ अकादमियों की स्थापना की गयी। परन्तु विश्वविद्यालयों तथा सरकार द्वारा हिंदी माध्यम से परीक्षा देने की स्वीकृति न देने के कारण लेखकों की पुस्तकों की मांग नहीं बढ पाई। फिर भी कई शिक्षक है जिन्होंने हिंदी माध्यम से चिकित्सा लेखन करने की अपनी आदत नहीं छोड़ी। विश्वविद्यालय ने आज देश के विभिन्न प्रकाशकों से 300 के लगभग पुस्तकों का संकलन किया है, जो सभी हिंदी माध्यम से प्रकाशित हैं। प्रारंभ में देश में हिंदी ग्रंथ अकादमी की स्थापना के साथ-साथ चिकित्सा के क्षेत्र में भी लेखन प्रारंभ हुआ। अब तक विभिन्न हिंदी ग्रंथ अकादमियों तथा निजी प्रकाशकों से निम्न पुस्तकों का संकलन किया है :

मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी संकलित पुस्तकों की संख्या 04, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी 16, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी 14, हरियाणा हिंदी ग्रंथ अकादमी 06, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान 07, छत्तीशगढ़ हिंदी ग्रंथ अकादमी 01, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास 22, विश्व स्वास्थ्य संगठन 07, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग 08, सुमित प्रकाशन, मेरठ 45, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 14, चौखंभा प्रकाशन, वाराणसी 118, जे.पी. ब्रदर्स, दिल्ली 26 कुल 297

हिंदी माध्यम से चिकित्सा शिक्षा के प्रसार में प्रवासी भारतीयों से सम्पर्क

हिंदी विश्वविद्यालय की स्थापना की सूचना मिलते ही अमेरिका निवासी डॉ. कलोल गुहा ने हिंदी माध्यम में चिकित्सा शिक्षा में रूचि प्रदर्शित की तथा वह विश्वविद्यालय में आये तथा छात्रों के समक्ष व्याख्यान दिया तथा उन्होंने हिंदी माध्यम से उत्तीर्ण छात्रों को सरकारी नौकरी में प्राथमिकता, 25 प्रतिशत अधिक वेतन, हिंदी माध्यम से स्थापित करने वाले महाविद्यालयों के संस्थापकों को कर रियायत देने की आवश्यकता बतायी जिससे प्रवासी भारतीय निवेश हेतु आकर्षित हो सके।

लोक स्वास्थ्य एवं वैकल्पिक चिकित्सा केन्द्र की स्थापना

विश्वविद्यालय ने अध्ययन एवं शोध के 10 विशेष केन्द्र खोलने का निर्णय लिया है जिसमें एक लोक स्वास्थ्य एवं वैकल्पिक चिकित्सा केन्द्र भी है। यह केन्द्र लोक स्वास्थ्य जागरूकता पाठ्यक्रमों का निर्माण करेगा जिसमें प्रत्येक विद्यार्थी को प्रमुख रोगों, औषधियों व रोकथाम की जानकारी दी जायेगी। यह केन्द्र लोक स्वास्थ्य परंपराओं के तार्किक आधार हेतु अध्ययन, अनुसंधान तथा समन्वय का कार्य करेगा। यह लोक उपचारकों को मुख्य धारा से जोड़नें हेतु उनको प्रशिक्षण भी देगा।

गर्भ संस्कार तपोवन केन्द्र की स्थापना

विश्वविद्यालय के कुछ सामाजिक दायित्व भी है। इन सामाजिक सरोकारों के अन्तर्गत चिकित्सा शिक्षा के शिशु विभाग से जुड़ा हुआ भारतीय संस्कार के प्रशिक्षण हेतु ''गर्भ संस्कार तपोवन केन्द्र'' की स्थापना 02 अक्टूबर 2014 को की गयी है जहॉ गर्भवती महिलाओं को निःशुल्क गर्भ में पल रहे भ्रूण को किस प्रकार संस्कारित किया जा सकता है, उस संबंध में प्रशिक्षण दिया जाता है। यह गतिविधि देश में काफी चर्चा का विषय बनी। विश्वविद्यालय ने गुजरात के 'बाल विश्वविद्यालय, गांधीनगर' से समझौता किया है, जिसमें केन्द्र के संचालन के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है। अभी तक इस केन्द्र में 9 माह का प्रशिक्षण पाठ्यक्रम तथा 6 माह का प्रशिक्षक पाठ्यक्रम बनाया गया है। केन्द्र में ३० से अधिक पंजीकरण हुआ है। गर्भ संस्कार से पूर्व नव-दम्पति प्रशिक्षण शिविर का भी आयोजन होता है।

हिंदी माध्यम से चिकित्सा शिक्षा

- *चिकित्सा क्षेत्र की नियामक संस्थाओं द्वारा सभी चिकित्सा परीक्षाओं में हिंदी माध्यम से लिखने की छूट।*
  केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारों को अपने अपने क्षेत्र में पीएमटी की तरह परीक्षा में उत्तर द्वि-भाषा में देने की छूट देनी चाहिए। अंग्रेजी शासन काल से अंग्रेजी माध्यम से चिकित्सा देने की परम्परा चल रही है जिसको अब तक निभाया जा रहा है। अतः शासन द्वारा एम.सी.आई. को द्वि-भाषा में परीक्षा करवाने के निर्देश देने चाहिए। जब विद्यार्थियों को हिंदी माध्यम से परीक्षा देने की छूट होगी तो प्रारंभ में पुस्तकों के उपलब्ध न होने के बावजूद भी विद्यार्थी अनुवाद कर परीक्षा में पूछे गये प्रश्न-पत्र उत्तर हिंदी भाषा में दे सकेगें। हिंदी भाषा में परीक्षा देने की छूट होने के बाद पुस्तक की मांग बढ़ जाएगी तथा लेखक भी हिंदी में लेखन के लिए प्रेरित होंगे।
- *चिकित्सा शिक्षण का द्वि-भाषी माध्यम से :* भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद से संपर्क करने पर विश्वविद्यालय ने यह जानने का प्रयत्न किया कि क्या विश्वविद्यालयों या चिकित्सा महाविद्यालयों द्वारा चिकित्सा शिक्षा अंग्रेजी भाषा में देने का प्रावधान है। परन्तु यह आश्चर्य की बात है कि अंग्रेजी की अनिवार्यता नहीं होने के बावजूद भी व्यवहार में केवल अंग्रेजी में ही अध्यापन एवं परीक्षा देने की व्यवस्था बनाई गई है। अतः शिक्षण का माध्यम द्वि-भाषी होना चाहिए।
- *हिंदी ग्रंथ अकादमियों को चिकित्सा शिक्षा की पाठ्य पुस्तकें हिंदी में प्रकाशित करने के लिए लक्ष्य एवं अनुदान :* देश की सभी हिंदी ग्रंथ अकादमियों, हिंदी संस्थानों तथा हिंदी प्रकोष्ठों को जो केन्द्र एवं राज्य सरकार से अनुदान प्राप्त करते हैं, के लिए प्रतिवर्ष हिंदी की पुस्तकों का प्रकाशन अनिवार्य किया जाना चाहिए। प्रत्येक अकादमी प्रतिवर्ष कम से कम 5 पुस्तकों का प्रकाशन करें।
- *चिकित्सा शब्दकोषों का निर्माण* : वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग ने यद्यपि अभी तक 5 चिकित्सा शब्दकोषों का हिंदी में निर्माण किया है परन्तु आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में प्रगति के कारण यह शब्दकोष अपर्याप्त हैं अतः आयोग को विभिन्न विषयों तथा रोगो के अनुसार शब्दकोष का निर्माण एक समय-सीमा में करना चाहिए।
- *विदेशी भाषा में श्रेष्ठ चिकित्सा पुस्तकों का हिंदी में अनुवाद* : आज सभी चिकित्सा विश्वविद्यालय एवं नियामक संस्थायें अंग्रेजी भाषा में विपुल चिकित्सा साहित्य उपलब्ध होने के कारण हिंदी में चिकित्सा शिक्षा को आगे बढ़ाने की वकालत नहीं करती। अतः यह आवश्यक है कि भारत सरकार का राष्ट्रीय अनुवाद मिशन मैसूर, केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो तथा मानव संसाधन विकास मंत्रालय को विभिन्न विदेशी भाषाओं में उपलब्ध चिकित्सा साहित्य का हिंदी में अनुवाद प्राथमिकता से करवाया जाना चाहिए।
- *चिकित्सा विषयों की पाण्डुलिपियां तैयार करने हेतु चिकित्सा विश्वविद्यालयों व महाविद्यालयों को दायित्व देने पर विचार* : हिंदी भाषी प्रांतों में कई सरकारी एवं निजी चिकित्सा विश्वविद्यालय है। इनके साथ 115 के लगभग चिकित्सा महाविद्यालय भी सम्बद्ध हैं परन्तु अभी तक किसी भी विश्वविद्यालय या महाविद्यालय ने एक भी चिकित्सा संबंधी पुस्तक हिंदी भाषा में लिखने का प्रयास नहीं किया। अतः यह आवश्यक है कि प्रत्येक विश्वविद्यालय स्नातक एवं स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों की प्रतिवर्ष 5-5 पुस्तकें हिंदी में प्रकाशित करवायें। इस लेखन कार्य के लिए मानव संसाधन विकास मंत्रालय या संबंधित राज्य सरकार विश्वविद्यालयों को आर्थिक अनुदान प्रदान करें।
- *चिकित्सा शिक्षा में पदोन्नति को लेखन से जोड़ना* : एम.सी.आई. तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को चिकित्सा शिक्षा को हिंदी माध्यम से आगे बढ़ाने की दृष्टि से यह प्रावधान करना चाहिए की वह प्रत्येक चिकित्सा शिक्षक पदोन्नति के लिए ३ वर्ष में कम से कम किसी चिकित्सा उपाधि पाठ्यक्रम के लिए चिकित्सा शिक्षा की एक पुस्तक हिंदी में अवश्य लिखे।
- *स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के स्तर पर लंबित पाण्डे समिति की अनुशंसाओं पर विचार* : भारत सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने प्रो. मुकुल चंद पाण्डे की अध्यक्षता में 'चिकित्सा और पराचिकित्सा शिक्षा हिंदी माध्यम समिति'' का 22 नवम्बर 1988 को गठन किया था जिसने 1990 में अपना प्रतिवेदन भी भारत सरकार को प्रस्तुत किया था। परन्तु आज तक उक्त समिति द्वारा की गई अनुसंशाओं पर कोई कार्यवाही नहीं की गई।
- *स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के अंतर्गत केन्द्रीय हिंदी चिकित्सा प्रकोष्ठ का गठन किया जाना :* भारत सरकार द्वारा स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के स्तर पर चिकित्सा संबंधी केन्दीय प्रकोष्ठ का गठन किया जाना चाहिए जो केवल हिंदी माध्यम से चिकित्सा शिक्षा के संवर्धन के लिए कार्य करेगा।
- *पारिश्रमिक दरों में संशोधन :* हिंदी ग्रंथ अकादमियों तथा हिंदी निदेशालयों को मौलिक लेखन तथा अनुवाद कार्य के लिए पारिश्रमिक दरों में संशोधन किया जाना चाहिए।
- *चिकित्सा शिक्षकों एवं लेखकों को हिंदी में प्रशिक्षण* : यद्यपि हिंदी भाषी प्रदेशों में कक्षाओं में 30-40 प्रतिशत अध्ययन हिंदी में होता है परन्तु परीक्षा में लेखन द्विभाषी न होने के कारण

हिंदी भाषी छात्रों को कष्ट होता है। अतः यह आवश्यक है कि चिकित्सा शिक्षकों को हिंदी भाषा के संबंध में प्रशिक्षण दिया जाए। उन्हें हिंदी भाषा में लिखने का भी प्रशिक्षण दिया जाए।

- *पुरस्कार एवं सम्मान :* चिकित्सा क्षेत्र में लेखन एवं शोध हिंदी में करने वालों का नगद पुरस्कार एवं छात्रवृत्तियॉं प्रदान की जाए। माध्यम परिवर्तन को गति देने के लिए हिंदी प्रदेशों के विश्वविद्यालय/महाविद्यालय में संगोष्ठियों का आयोजन किया जाए।
- *स्नातक चिकित्सा के वैकल्पिक पाठ्यक्रम की आवश्यकता पर विचार* : एम.बी.बी.एस. का वर्तमान पाठ्यक्रम जो साढे पांच वर्ष का है उसे छात्र भाषा व अन्य रूकावटों के कारण 8 से 15 वर्षो तक उत्तीर्ण करते देखे हैं। ऐसे विद्यार्थी व उनके अभिभावक बहुत तनावों में जीवन व्यतीत करते हैं जिससे अवसाद ग्रस्त मनः स्थिति के कारण आत्म हत्याओं के समाचार भी समाचार पत्रों में आते हैं। भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद ने 1934 में अपनी स्थापना के बाद 1956 में कुछ मौलिक बदलाव किये थे। उसके बाद आज तक देश की स्वास्थ्य समस्याओं व देश की आवश्यकताओं के अनुसार कोई सार्थक परिवर्तन नहीं किये गये। इसी कारण कुपोषण एवं क्षय रोग देश में चुनौती है। कम से कम 5 वर्षो में पाठ्यक्रमों में देश की आवश्यकताओं के अनुसार परिवर्तन होना चाहिए। विश्वविद्यालय ने इस पर विचार करने के लिए एक अध्ययन समूह का गठन किया है।
- *चिकित्सा लेखकीय संवर्ग (कैडर) का समानान्तर निर्माण :* चिकित्सा शिक्षा में लेखन हेतु शिक्षकों की भांति लेखकों के पदों का सृजन करना चाहिए। लेखकों व शिक्षकों की सेवा शर्ते समान होनी चाहिए। इस नीति के दूरगामी परिणाम होंगे। शिक्षकों की भांति कॉडर बनने से स्त्रोत लेखन व अनुवाद दोनों में वृद्धि होगी।
- *अति विशिष्ट क्षेत्रों के विशेषज्ञों के बाहर जाने पर यहां के छात्रों के लिए छात्रवृत्ति प्राप्त करना* : एम.सी.आई. की अकादमी परिषद ने चिकित्सा शिक्षा की गुणवत्ता तथा वैश्वीकरण के लिए हिंदी माध्यम का विरोध किया है। जबकि आज वैश्वीकरण के नाम पर भारतीय संसाधनों के आधार पर प्रशिक्षित चिकित्सक प्रायः विदेशों में चले जाते हैं जिनके ज्ञान का लाभ भारतीय जनता को नहीं हो पाता। यह देखा गया है कि हिंदी या अन्य भारतीय भाषा से प्रशिक्षित चिकित्सक की प्रवृत्ति भारत में रहकर सेवा देनी की होती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार 1989-2000 के बीच अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान से उत्तीर्ण 54 प्रतिशत छात्र विदेशों में चले गये जिनमें 85.4 प्रतिशत अमेरिका में हैं। अतः ऐसे चिकित्सकों से भारत में अध्ययनरत छात्रों के लिए छात्रवृत्ति प्राप्त की जानी चाहिए जिससे उन पर किये गये व्यय की कुछ सीमा तक क्षतिपूर्ति की जा सके।
- *एम.सी.आई. व अन्य नियामक संस्थाओं द्वारा सेवानिवृत्त डॉक्टरों व अन्य विषय विशेषज्ञों के लिए लेखन योजना* : सभी नियामक संस्थाओं द्वारा हजारो सेवानिवृत्त डॉक्टरों व विषय विशेषज्ञों के लिए लेखन योजना बनाकर उन्हें चिकित्सा शिक्षा के हित में लेखन के कार्य में लगाना चाहिए। कौंसिल इस कार्य हेतु एक समिति का गठन कर सकती है। अनुभवी शिक्षकों से पुस्तकें लिखवाने से गुणवत्ता में वृद्धि हो सकेगी। हमें ध्यान रखना चाहिए कि बोला हुआ शब्द समय के साथ भूला हुआ शब्द बन जाता है, परन्तु लिखा हुआ शब्द लकीर पर होता है जो लंबे समय तक जीता है तथा एक परम्परा बनाता है।
- *राष्ट्रीय उच्च चिकित्सा व तकनीकी शिक्षा लेखन मिशन की सीपना :* यह संस्थान देश की हिंदी ग्रंथ अकादमियों द्वारा हिंदी माध्यम से प्रकाशित चिकित्सा व तकनीकी विषयों की पुस्तकों की गुणवत्ता की जांच करे, उनके लिए संसाधनों की आपूर्ति करे तथा देश-विदेश में उनके प्रकाशनों की मांग व पूर्ति का समायोजन करें।
- *अनुवाद प्रौद्योगिकी के माध्यम से हिंदी चिकित्सा शिक्षण को बढावा :* आजकल शिक्षा के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी का निरंतर समावेश हो रहा है। चिकित्सा शिक्षण अंग्रेजी माध्यम से ही होता है। परन्तु अब ऐसे साफ्टवेयर विकसित हो गये हैं जो अंग्रेजी के भाषण को हिंदी में परिवर्तित कर देते हैं। ऐसा ही एक साफ्टवेयर सी-डैक, पूना ने बनाया है जिसका नाम 'वाचान्तर' है।इस प्रकार भारत सरकार, राज्य सरकारों तथा नियामक संस्थाओं द्वारा उपर्युक्त सुझावों पर ध्यान दिया जाता है तो हिंदी माध्यम से चिकित्सा शिक्षा कुछ ही वर्षो में अपने पावों पर खड़ी हो सकेगी तथा हिंदी में शोध प्रारंभ होने पर अंग्रेजी शिक्षा से प्रतियोगिता कर सकेगी।

abvbvbpl@gmail.com

हिंदी में विज्ञान लेखन की चुनौतियाँ

डॉ.सुबोध महंती

भारत में लोकप्रिय विज्ञान लेखन में मौलिकता, स्तर, उत्तरदायित्व या जवाबदेही की भावना की भारी कमी है और बहुधा पुनरावृत्ति से ग्रसित है। सही वैज्ञानिक जागरूकता फैलाने का उद्देश्य मात्र सामान्य लोकप्रिय विज्ञान लेखन से पूरा नहीं हो सकता। आज विषय विशेषज्ञों द्वारा विविध क्षेत्रों में विशिष्टतायुक्त विज्ञान लेखन को लोकप्रिय बनाने का तकाजा है। भारत में पत्र–पत्रिकाओं द्वारा विज्ञान साहित्य को वैसे ही नगण्य स्थान दिया जाता है, किन्तु खानापूर्ति के तौर पर विज्ञान को जो भी छोटा कोना मिल पाता है, उसे विज्ञान की सनसनीखेज, जादुई या नाटकीय और बहुधा छलावे के स्यूडो विज्ञान द्वारा भरने की ओर समझना है। विकासात्मक विज्ञान संबंधी पठनीय सामग्री को पाठकों को अरूचि अथवा कुछ नया न होने के बहाने टरका दिया जाता है, जबकि सही कारण ऐसे निर्णय लेने वालों में सही संदर्भ की कमी और व्यापारिक लाभ संबंधी अंधरूचि होता है।

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी को लोकप्रिय बनाने के लिए हिंदी में विज्ञान लेखन को बढ़ावा देना अति आवश्यक है। हमारे देश में हिंदी का बहुत बड़ा पाठक वर्ग है। उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, छत्तीसगढ़, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा और दिल्ली जैसे राज्यों में हिंदी प्रमुख भाषा है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह प्रयास दूसरे भारतीय भाषाओं में भी उतनी ही आवश्यक है। भारत के अधिकतर लोग हिंदी भाषा भाषी है। हिंदी में विज्ञान लेखन की परम्परा सौ वर्षों से अधिक पुरानी है जैसे कि हिंदी में विज्ञान प्रसार के प्रकाशन 'विज्ञान लेखन का प्रारंभिक प्रयास' तथा 'विज्ञान लेखन के सौ वर्ष (2 खंड)' से प्रतीत होता है। विज्ञान परिषद की मासिक विज्ञान पत्रिका 'विज्ञान' सन् १९१५ से निरंतर प्रकाशित हो रही है। स्वतंत्रता के बाद हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया एवं इसके प्रचार प्रसार के लिए भारत सरकार ने कई कदम उठाए। आज हिंदी में विज्ञान लेखन में बहुत कुछ हो रहा है। इस संदर्भ में विज्ञान प्रसार का प्रकाशन "हिंदी में विज्ञान लेखनः व्यक्तिगत एवं संस्थागत प्रयास" एक झलक प्रस्तुत करता है। इसके बावजूद मेरा मानना है कि हिंदी में विज्ञान लेखन की स्थिति संतोषजनक नहीं है। भारत में विज्ञान लोकप्रियकरण की एक अच्छी परम्परा रही है लेकिन अभी भी इस दिशा में सही कदम उठाने की जरूरत है। मीडिया से भी विज्ञान को उतना महत्व नहीं दिया जा रहा है जितना उससे अपेक्षित है। विज्ञान के नाम पर जो भी लिखा जा रहा है वह पूरी तरह लाभकारी सिद्ध नहीं हो रहा है। इस संदर्भ में वरिष्ठ लेखक रामचंद्र मिश्र को उद्धृत करना चाहूंगा। उन्होंने डॉ. राय अवधेश कुमार श्रीवास्तव द्वारा संपादित ''हिंदी में विज्ञान भावना'' नामक पुस्तक में लिखा हैः 'भारत में लोकप्रिय विज्ञान लेखन में मौलिकता, स्तर, उत्तरदायित्व या जवाबदेही की भावना की भारी कमी है और बहुधा पुनरावृत्ति से ग्रसित है। सही वैज्ञानिक जागरूकता फैलाने का उद्देश्य मात्र सामान्य लोकप्रिय विज्ञान लेखन से पूरा नहीं हो सकता। आज विषय विशेषज्ञों द्वारा विविध क्षेत्रों में विशिष्टतायुक्त विज्ञान लेखन को लोकप्रिय बनाने का तकाजा है। भारत में पत्र-पत्रिकाओं द्वारा विज्ञान साहित्य को वैसे ही नगण्य स्थान दिया जाता है, किन्तु खानापूर्ति के तौर पर विज्ञान को जो भी छोटा कोना मिल पाता है, उसे विज्ञान की सनसनीखेज, जादुई या नाटकीय और बहुधा छलावे के स्यूडो विज्ञान

द्वारा भरने की ओर समझना है। विकासात्मक विज्ञान संबंधी पठनीय सामग्री को पाठकों को अरूचि अथवा कुछ नया न होने के बहाने टरका दिया जाता है, जबकि सही कारण ऐसे निर्णय लेने वालों में सही संदर्भ की कमी और व्यापारिक लाभ संबंधी अंधरूचि होता है।' मैं मिश्र जी की टिप्पणियों से सहमत हूँ। इसमें कोई संदेह नहीं कि हाल के वर्षों में हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन में तेजी आयी है। कई सरकारी एवं गैरसरकारी संस्था तथा विज्ञान संचारक ने विज्ञान के प्रचार-प्रसार में अहम भूमिका निभा रहे हैं। हिंदी विज्ञान लेखकों के पास उपयुक्त एवं प्रामाणिक संदर्भ ग्रंथों का अभाव है। दूसरी बात यह भी है कि हिंदी विज्ञान लेखन में संदर्भ ग्रंथ का इस्तेमाल करने की परंपरा भी नहीं है। इसका मतलब थोड़े बहुत संदर्भ ग्रंथ हैं भी तो उसका इस्तेमाल नहीं हो रहा है। अंग्रेजी की तुलना में आज भी हिंदी में शब्दकोश एवं विश्वकोश का अभाव है। चैंबर्स की अंग्रेजी शब्दकोश में विज्ञान की तमाम विवरण तथा महत्वपूर्ण वैज्ञानिकों के बारे में जानकारी मिलेगी मगर चैंबर्स की ही हिंदी शब्दकोश में इस तरह की सूचना नहीं मिलेगी और यही बात दूसरे शब्दकोशों के बारे में भी सच है। आज हिंदी विज्ञान लेखन में दो प्रमुख समस्याएँ हैं : पारिभाषिक शब्दावली और शब्द परिभाषा कोश। भारत सरकार के वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग ने इस दिशा में काफी कुछ किया है मगर हम शब्दावली के मानकीकरण करने में अभी तक सफल नहीं हुए हैं। विज्ञान की पाठ्य पुस्तक तथा लेखों में शब्दों में एकरूपता होना अनिवार्य आवश्यकता है क्योंकि ऐसा न होने से विषय अधिगम में भ्रम पैदा होना स्वाभाविक है। पारिभाषिक शब्दावली के प्रयोग की व्यावहारिक कठिनाई तभी दूर हो सकेगी जब पारिभाषिक शब्द निर्माण के साथ-साथ राष्ट्रीय स्तर पर इसका मानकीकरण का कार्य भी किया जायेगा।

विज्ञान लेखन के लिए सबसे महत्वपूर्ण बात है कि वह सरल भाषा में हो अर्थात ऐसी भाषा में हो जो आम पाठक समझ सके एवं जो लिखा जा रहा है, वह पाठक के लिए उपयोगी या लाभकारी हो। इसके लिए विज्ञान लेखकों को यह समझना पड़ेगा कि आज की जरूरत क्या है। विज्ञान लेखकों का यह मान लेना गलत होगा कि उनके लेखन की समझ आम जनता में है। जहाँ जरूरत है, वहां पृष्ठभूमि जानकारी देना आवश्यक है।

समाज में फैले विभिन्न अंधविश्वासों तथा गलतफहमियों को दूर करने की भी जरूरत है। यह तभी संभव होगा, जब समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण पनपेगा। विज्ञान लेखन तथा लोकप्रियकरण की अन्य विधाओं का मुख्य उद्देश्य यही होना चाहिए कि समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित हो। विज्ञान लेखकों को इस बात का ध्यान रखना पड़ेगा कि विज्ञान लोकप्रियकरण का मुख्य उद्देश्य विज्ञान के बारे में न केवल जानकारी देना है, बल्कि विषय के प्रति उत्सुकता बढ़ाने के अतिरिक्त आम जनमानस में वैज्ञानिक सोच बढ़ाना भी है।

महान वैज्ञानिक चाहे वे भारतीय हों या विदेशी, उनकी जीवनियों के बारे में जानकारी देना भी बहुत आवश्यक है। ऐसी जीवनियां युवा पीढ़ी में प्रेरणा जागृत कर सकती हैं। अनेक व्यक्ति यह नहीं जानते कि न जाने कितने वैज्ञानिकों ने अपनी सुख-सुविधाओं का त्याग करके स्वयं को विज्ञान के प्रति समर्पित कर दिया। वैज्ञानिकों की जीवनियां जितनी संघर्षमयी, रोमांचक और पठनीय है, उतनी ही प्रेरणादायी भी है। वे केवल वैज्ञानिक बनने की ही प्रेरणा नहीं देती बल्कि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में संघर्ष करने और सफल होने का संदेश भी देती हैं।

महान वैज्ञानिक चाहे वे भारतीय हों या विदेशी, उनकी जीवनियों के बारे में जानकारी देना भी बहुत आवश्यक है। ऐसी जीवनियां युवा पीढ़ी में प्रेरणा जागृत कर सकती हैं। अनेक व्यक्ति यह नहीं जानते कि न जाने कितने वैज्ञानिकों ने अपनी सुख-सुविधाओं का त्याग करके स्वयं को विज्ञान के प्रति समर्पित कर दिया। वैज्ञानिकों की जीवनियां जितनी संघर्षमयी, रोमांचक और पठनीय है, उतनी ही प्रेरणादायी भी है। वे केवल वैज्ञानिक बनने की ही प्रेरणा नहीं देती बल्कि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में संघर्ष करने और सफल होने का संदेश भी देती हैं। आम जनता विज्ञान के बारे में जानने के लिए इच्छुक तो रहती है, किन्तु उसके पास संबंधित पठन सामग्री का काफी अभाव होता है और जो सामग्री उनके पास पहुँचती भी है, वह सभी रोचक और प्रामाणिक नहीं होती। सार्थक विज्ञान लेखक वही है जो विज्ञान की जटिल समस्याओं को एक कहानी के रूप में रोचक ढंग से प्रस्तुत करें। इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखक अपना कर्तव्य तभी निभा सकेगा जब सरकार, विज्ञान लेखक, वैज्ञानिक सभी एक होकर प्रयास करते रहे। विज्ञान अपनी गलती स्वीकार करने में झिझकता नहीं है। वास्तव में विज्ञान की कई धारणायें जिन्हें वैज्ञानिकों ने सत्य माना, बाद में वे गलत प्रमाणित हुईं।

छात्रों की रूचि विज्ञान के प्रति कम होती जा रही है। इसका मुख्य कारण है उनके सामने हम विज्ञान को ठीक तरह से पेश नहीं कर पाते। विज्ञान के विषयों को इस तरह प्रस्तुत किया जाता है कि विज्ञान संबंधी विभिन्न तथ्यों का जानना ही विज्ञान शिक्षा है। विज्ञान शिक्षा तभी सार्थक होगी जब विज्ञान के विधार्थी प्राकृतिक घटनाओं को समझने के साथ-साथ उसके ज्ञान को अपनी रोजमर्रा जिंदगी में इस्तेमाल करने में सक्षम होंगे। हम यह भूल जाते हैं कि तथ्यों को एकत्र कर देना मात्र ही विज्ञान नहीं हो सकता जैसे कि ईंटों के ढेर से मकान नहीं बनता है। विषय तब रूचिकर हो जाता है जब यह

बताया जाता है कि यह तथ्य कैसे खोजा गया है और उस खोज की प्रक्रिया कितनी रोचक एवं रोमांचक थी। मगर स्कूलों में पढ़ाई का इतना दबाव है कि वहां पाठ्यक्रम से हटकर कुछ सोचने और बताने के लिए शिक्षक एवं छात्र दोनों के पास समय नहीं है। ऐसी स्थिति में विज्ञान लेखकों की भूमिका अहम हो जाती है। अनेक वैज्ञानिकों ने यह स्वीकारा है कि विज्ञान के प्रति उनका लगाव लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकें पढ़कर ही हुआ। आज भी भारतीय भाषाओं में अच्छी एवं प्रेरक लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकों का अभाव है, विदेशी लेखकों की पुस्तकें उपलब्ध तो हैं किन्तु ये बहुत से छात्रों की पहुंच से बाहर हैं।

सरल भाषा में विज्ञान लिखने के दौरान पारिभाषिक शब्दों से एकदम बचा नहीं जा सकता इसलिए पारिभाषिक शब्दों का मानकीकरण करना आवश्यक है। अनुवाद कार्यों को बढ़ावा देना पड़ेगा और न केवल अंग्रेजी या विदेशी भाषाओं से भारतीय भाषाओं में अनुवाद, बल्कि भारतीय भाषाओं के बीच भी परस्पर अनुवाद, कार्य को बढ़ावा देना होगा। विज्ञान लेखक और संचारकों की संख्या देश में बढ़े इसके लिए इस क्षेत्र में प्रशिक्षण की भी आवश्यकता है।

बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में हमारे देश के कई महान वैज्ञानिक न केवल विज्ञान लोकप्रियकरण को महत्व देते थे बल्कि इस कार्य में उनका योगदान भी महत्वपूर्ण था। आज यह परम्परा कम होती जा रही है। आज जो ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक इस क्षेत्र में अपना योगदान दे रहे हैं, उनकी संख्या बहुत कम है एवं उनमें से ज्यादातर अंग्रेजी में लिखते हैं। अपनी भाषा में विज्ञान लिखने वाले विज्ञानियों की संख्या न के बराबर है। विज्ञान लेखन के सही विकास के लिए विज्ञान लेखकों को एकजुट होना पड़ेगा। एक दूसरे के काम को न केवल सराहना पड़ेगा बल्कि कमियों को उजागर भी करना पड़ेगा। इस संदर्भ में मैं वरिष्ठ विज्ञान लेखक डॉ. प्रदीप कुमार मुखर्जी को उद्धृत करना चाहूंगा (हिंदी में विज्ञान लेखन : व्यगितगत एवं संस्थागत प्रयास, विज्ञान प्रसार, 2011): 'विज्ञान लोकप्रिकरण ने आज एक बहुत बड़े व्यवसाय यानी प्रोफेशन का रूप धारण कर लिया है। लेकिन अन्य व्यवसायों की तरह यह व्यवसाय भी अब गुटबाजी से अछूता नहीं रहा। जरूरत है इस गुटबाजी और एक दूसरे को काटने की प्रवृत्ति से मुक्ति पाने की, ताकि मिल-जुल कर एकजुटता के साथ विज्ञान लोकप्रियकरण की विधा के उन्नयन के लिए कार्य किया जा सके। तभी इस विधा का भला होगा और इसका मतलब है हमारा अपना यानी विज्ञान लेखकों का भला।'

मैं सोचता हूँ कि यदि निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाए तो विज्ञान लेखन की स्थिति मजबूत होगी : आज देश में विज्ञान पत्रिकाओं की संख्या बहुत कम है और राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय स्तर पर ऐसी पत्रिकाओं की संख्या बढ़ानी होगी। हम सोचते हैं कि हर एक विज्ञान संस्था की गृह पत्रिका होनी चाहिए। कई संस्थाओं में ऐसी पत्रिकाएं हैं भी मगर इनकी उपयोगिता और प्रसार को बढ़ाना पड़ेगा। आज कई व्यक्ति लोकप्रिय विज्ञान लेखन करके अपनी जीविका का निर्वहन नहीं कर सकते। गुणाकर मुळे जी ने इस कार्य को करके दिखाया था। मगर उनका जीवन काफी संघर्षपूर्ण रहे। इस स्थिति को बदलना पड़ेगा, ताकि लोकप्रिय विज्ञान का प्रचार-प्रसार बढ़े। संवाद पत्र में विज्ञान का कवरेज बढ़ाना होगा और हर संवाद पत्र में विज्ञान डेस्क होना चाहिए। यह इसलिए कि आज का समाज न सिर्फ विज्ञान पर निर्भर है बल्कि इसका भविष्य भी विज्ञान पर आधारित होगा। उपयोगी विज्ञान शब्दकोश और विश्वकोश बनाने की दरकार है मगर यह व्यक्तिगत प्रयास न होकर संस्थागत प्रयास होना चाहिए क्योंकि शब्दकोश तथा विश्वकोश बनाना एक व्यक्ति का कार्य नहीं है। इसके साथ-साथ भारत में एक - दूसरी भाषाओं का तभी लाभ उठा पाएंगे जब उन भाषाओं में उचित शब्दकोश होंगे।

सरल भाषा में विज्ञान लिखने के दौरान पारिभाषिक शब्दों से एकदम बचा नहीं जा सकता इसलिए पारिभाषिक शब्दों का मानकीकरण करना आवश्यक है। अनुवाद कार्यों को बढ़ावा देना पड़ेगा और न केवल अंग्रेजी या विदेशी भाषाओं से भारतीय भाषाओं में अनुवाद, बल्कि भारतीय भाषाओं के बीच भी परस्पर अनुवाद, कार्य को बढ़ावा देना होगा। विज्ञान लेखक और संचारकों की संख्या देश में बढ़े इसके लिए इस क्षेत्र में प्रशिक्षण की भी आवश्यकता है। आज हिन्दी विज्ञान लेखन में कार्टून आधारित ड्रामा तथा कविताएं कम हैं। इन विधाओं पर भी जोर देना पड़ेगा। विज्ञान कथा विज्ञान लोकप्रियकरण में अहम भूमिका निभा सकती हैं। विज्ञान कथा न केवल विज्ञान को कहानी के रूप में प्रस्तुत करती है, बल्कि विज्ञान किस तरह से समाज को बदल रहा है तथा भविष्य का समाज किस तरह होगा, विज्ञान कथा इसे दर्शाता है। विज्ञान कथा विधा को प्रोत्साहन देना अति आवश्यक है।

भारत के संदर्भ में विज्ञान का प्रचार-प्रसार विशेष महत्व रखता है। अभी भी लाखों भारतीय दरिद्रता की सीमा के भीतर जीवनयापन कर रहे हैं, अन्य कारणों के साथ निरक्षरता और वैज्ञानिक मानसिकता का अभाव भी इसके लिए जिम्मेदार है। हमें इस बात को भी महसूस करना चाहिए कि केवल विज्ञान की सहायता से समाज आगे बढ़ सकता है। यह विज्ञान समाज के बाहर की कोई वस्तु नहीं है बल्कि मनुष्य की सोच की एक उपज है और प्रकृति ने मनुष्य को सही और गलत की समझ प्रदान की है। विज्ञान मनुष्य को प्रश्न करने के लिए प्रेरित करता है। विज्ञान व्यक्ति विशेष तक भी सीमित नहीं है।

subodhmahanti@gmail.com

हिन्दी बाल विज्ञान साहित्य की आवश्यकता

डॉ.दिनेश मणि

बीते कल की तुलना में आज के बच्चे के सामने मुश्किलें और चुनौतियाँ कहीं अधिक हैं और शायद इसीलिए आज बाल विज्ञान साहित्य की जरूरत कहीं अधिक है। बच्चों को सामयिक जानकारी और स्वस्थ मनोरंजन देने की सामाजिक जिम्मेदारी में हमने एक अक्षम्य लापरवाही बरती है। बचपन में पढ़ी किताबों और रचनाओं का प्रभाव किसी व्यक्ति के जीवन में बहुत गहरा होता है। प्रायः 16 वर्ष से कम आयु वाले बच्चों को ध्यान में रखकर जो विज्ञान लेखन किया जाता है वह बाल विज्ञान लेखन कहलाता है। 'बाल' शब्द के अन्तर्गत शिशु तथा किशोर दोनों ही आयु वर्ग सम्मिलित हैं- 5 से 8 वर्ष आयु वर्ग ''शिशु'' तथा उसके बाद 16 वर्ष तक का आयु वर्ग किशोर है। आज के बाल विज्ञान लेखक को बच्चों के लिये लिखते समय अपने बचपन को ध्यान में रखकर नहीं अपितु आज के अपने बच्चों या नाती, पोतों को ध्यान में रखकर उनकी मनः स्थिति और ग्रहण शक्ति को ध्यान में रखकर लिखना चाहिए। आज के इस सूचना-क्रांति के युग में बालक काफी जागृत हो चुका है और उसकी रूचियाँ भी परिष्कृत और उर्ध्वगामी हो चुकी हैं, अतः लेखक को बच्चों के लिए लिखने में काफी श्रम करने की आवश्यकता पड़ती है। यहाँ बाल विज्ञान लेखक स्व. दिलीप एम.साल्वी का कथन रेखांकित करना उपयुक्त होगा- आज 6 से 16 वर्ष की आयु के बच्चों को केवल वैज्ञानिक तथा तकनीकी ज्ञान देने की ही आवश्यकता नहीं है बल्कि उन्हें समाज और दैनिक जीवन में उनकी भूमिका से अवगत कराना भी जरुरी है। जो समाज विज्ञान और प्रौद्योगिकी का अत्याधिक उपयोग तो करता है परन्तु अपने नवयुवकों को विज्ञान और प्रौद्योगिकी तथा उसके विकास के प्रति जागरुक नहीं बनाता वह मानो आत्मविनाश की ओर अग्रसर हो रहा है। बच्चों और युवकों को पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए जिससे के स्कूलों में पढ़ाये जा रहे वैज्ञानिक विषयों और घर तथा बाहर उपयोग में लाये जा रहे प्रौद्योगिकीय उपकरणों एवं साधनों के बारे में भली-भाँति जान सकें और उनका समुचित उपयोग कर सकें।

विज्ञान की पुस्तकों के समालोचक मिलिमेंट ई. सेलसम का कहना है कि बच्चों के लिए विज्ञान के बारे में लिखने वाले व्यक्ति के लिए जरुरी है कि वह विज्ञान को जानें, बच्चों को यानी उनके स्वभाव को जाने एवं स्वयं लिखना जाने। लेखक का काम है पुस्तक को इस प्रकार लिखना कि उसे पढ़ने वाला बच्चा यह महसूस करे कि वह स्वयं एक प्रेक्षण की प्रक्रिया में भाग ले रहा है।

बच्चों की जिज्ञासा इतनी प्रबल और व्यापक होती है कि वे हर उस वस्तु को, जो उनके आस-पास होती है, अथवा उन्हें दृष्टिगोचर होती है, उससे तुरन्त ही जानने का प्रयास करते हैं और अनायास ही वे अपने माता-पिता अथवा इष्ट मित्रों से जो उनके सबसे निकट होते हैं, अपनी जिज्ञासा का समाधान खोजने के लिए प्रायः प्रश्न पूछ बैठते हैं, वह क्या है? ऐसा क्यों है? और वह कैसे होता है? बच्चों का प्रश्न पूछने का यह क्रम तब तक जारी रहता है जब तक उन्हें अपनी जिज्ञासा का कोई समुचित समाधान नहीं मिल जाता। विज्ञान और वैज्ञानिक घटनाओं के बारे में भी बच्चों की प्रतिक्रिया ऐसे प्रश्नों के दायरे में निरंतर होती रहती है। शायद ही कोई बालक ऐसा होगा जिसने कोई चीज

पहली बार देखी हो और उसके बारे में जानने की उसने जिज्ञासा न की हो।

विज्ञान और वैज्ञानिक घटनाओं के बारे में बच्चों की प्रतिक्रिया बहुत तीक्ष्ण होती है। बच्चों के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास हेतु इनकी जिज्ञासाओं का यथासमय समुचित समाधान होना अत्यंत आवश्यक है। स्मरण रहे, देश के सभी बच्चों का आयुवर्ग तो एक-सा हो सकता है लेकिन वे जिस आर्थिक तथा सामाजिक परिवेश में रहते हैं, उनके ज्ञान-विज्ञान की जिज्ञासा का विकास भी उसी परिवेश के अनुसार होता है, फिर भी बच्चों के लिए लेखन सामग्री का चयन करते समय उसे बच्चों के आर्थिक और सामाजिक परिवेश के अनुसार पृथक करना तो उचित नहीं होगा बल्कि सभी बच्चों के लिए एक जैसी मानक विषय-वस्तु का चयन करना होगा जो वर्तमान अथवा भविष्य दोनों ही परिस्थितियों में आज या कल के बच्चों की जिज्ञासा पूरी करने के लिए और उन्हें नए ज्ञान की ओर प्रेरित करने में सहायक हों। बाल विज्ञान साहित्य का मुख्य उद्देश्य है कि वह बालकों को विविध अवस्थाओं के लिए वांछित ज्ञान की सही-सही पूर्ति करे जिसे अर्जित कर वे अपने मन में उठने वाली जिज्ञासाओं का ठीक-ठीक समाधान ढूँढ सकें। इतना ही नहीं, यह साहित्य इससे भी ऊँचा काम कर सकता है। यह उनमें अधिकाधिक विश्लेषण करने की शक्ति दे सकता है, समस्याओं की पूर्ण विवेचना की नई सूझ दे सकता है, यही नहीं, बाल विज्ञान साहित्य उन अनेक अभिभावकों, नवसाक्षरों एवं प्रौढ़ों के लिए भी सूचनाप्रद एवं आवश्यक सामग्री प्रस्तुत कर सकता है जिन्होंने कभी विज्ञान का अध्ययन नहीं किया है।

विज्ञान और वैज्ञानिक घटनाओं के बारे में बच्चों की प्रतिक्रिया बहुत तीक्ष्ण होती है। बच्चों के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास हेतु इनकी जिज्ञासाओं का यथासमय समुचित समाधान होना अत्यंत आवश्यक है। स्मरण रहे, देश के सभी बच्चों का आयुवर्ग तो एक-सा हो सकता है लेकिन वे जिस आर्थिक तथा सामाजिक परिवेश में रहते हैं, उनके ज्ञान-विज्ञान की जिज्ञासा का विकास भी उसी परिवेश के अनुसार होता है, फिर भी बच्चों के लिए लेखन सामग्री का चयन करते समय उसे बच्चों के आर्थिक और सामाजिक परिवेश के अनुसार पृथक करना तो उचित नहीं होग।

बाल विज्ञान साहित्य समस्त बच्चों को पाठ्यक्रम के अतिरिक्त भी ज्ञान प्रदान करने में समर्थ रहता है। कक्षाओं में किसी भी विषय की जानकारी एक सीमित क्षेत्र में सीमित दृष्टि से दी जाती है। समय, बुद्धि तथा परीक्षा आदि को ध्यान में रखते हुए यह सम्भव नहीं हो पाता कि कक्षा में अनेक विषयों की विस्तृत जानकारी दी जा सके। इसीलिए बच्चों को अतिरिक्त ज्ञान अर्जित करने की आवश्यकता पर बल दिया जाता है। किन्तु यह कैसे पूरी हो? इसकी पूर्ति उपयोगी बाल विज्ञान साहित्य में से सही-सही चुनाव के द्वारा ही सम्भव है। इसीलिए न केवल ऐसे साहित्य के रचे जाने की आवश्यकता पर बल दिया जाना चाहिए वरन् बच्चों को ऐसे साहित्य में से अपने काम की चीजें छाँट लेने की स्वतंत्रता दी जानी चाहिए और इस दिशा में उन्हें प्रेरित भी किया जाना चाहिए। यह तभी सम्भव है जब सभी उम्र वाले बच्चों की ज्ञान-पिपासा को शान्त करने में समर्थ साहित्य की रचना को प्रोत्साहन दिया जाए अर्थात वह इतना विविध हो कि जिस चीज की भी आवश्यकता प्रतीत हो वह उपलब्ध हो।

हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली का सबसे बड़ा दोष यह है कि विज्ञान विषयक जितनी भी प्रारंभिक शिक्षा प्रदान की जाती है वह बड़ी विलक्षण होती है क्योंकि कभी-कभी शिक्षक स्वयं विज्ञान के उन तथ्यों से परिचित नहीं होते हैं जो बच्चों को बताये जाते हैं अथवा ज्ञान के नाम पर वे बच्चों को केवल भकोरा किताबी ज्ञान देने में समर्थ होते हैं। बच्चों के समक्ष वैज्ञानिक शिक्षा का अनिवार्य अंग-प्रयोग प्रदर्शित ही नहीं किए जाते। इसका कारण या तो आवश्यक उपकरणों का अभाव होता है अथवा शिक्षक की अनभिज्ञता या उसका आलस्य। वस्तुतः इस प्रवृत्ति के कारण हमारे देश की वैज्ञानिक प्रतिभाएं प्रकट हुए बिना ही रह गईं। काश! हम अब भी चेत जाते।

इसे एक विडम्बना ही कहा जाएगा कि विशाल पाठक वर्ग और लेखकों की पर्याप्त संख्या के बावजूद हिन्दी बाल विज्ञान साहित्य को अभी तक वह स्थान नहीं मिल पाया जा उसे वास्तव में मिलना चाहिए था। चूँकि हमारे दैनिक जीवन में विज्ञान का काफी दखल हो चुका है और बच्चों को विज्ञान की शिक्षा सरल व रोचक भाषा में देना बहुत जरुरी हो गया है।

इधर कुछ वर्षों में बाल विज्ञान साहित्य को लेकर थोड़ी जागृति आई है। बाल विज्ञान साहित्य और इससे जुड़े प्रश्नों और चिंताओं को लेकर विभिन्न स्तरों पर विचार-विमर्श भी शुरु हुआ है। यद्यपि यह पर्याप्त नहीं है, मगर शुरुआत के लिहाज से कुछ बुरा भी नहीं है।

बच्चों के लिए लिखना आसान नहीं है। जो लोग ऐसा समझते हैं कि बच्चों के लिए रचना नीचे के स्तर पर जाकर करनी होती है, वे बहुत बड़े भ्रम में हैं। वस्तुतः बाल-रचनाओं के लिए तो बहुत ऊँचा उठना पड़ता है और बालक बनना पड़ता है। निश्चित रूप से बच्चों की अपनी अलग एक पूरी दुनिया होती है। बच्चा इस दुनिया में पूरी तरह स्वतंत्र रहना चाहता है। इस स्वतंत्रता की रक्षा करते हुए बाल विज्ञान साहित्य में अनुशासन और रचनात्मक दिशा की सीख देना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। वास्तव में अनुशासन या नैतिकता के नाम पर सीधे-सीधे उपदेशात्मक शैली में बालक से कुछ कहने पर वह उतना ग्राह्य नहीं होगा। लेकिन उसके लिए आवश्यक मूल्यों को ध्यान में रखते हुए अगर हम रोचक कहानी, कविता या नाटक के

माध्यम से उनमें संस्कारों का बीजारोपण करेंगे तो सहज रुप में ही बालक के हृदय में समाहित होते चलेंगे। कहानी या कविता के धागे में पिरोते हुए अगर हम अनुशासन और रचनात्मकता की बात करते हैं तो कथ्य का सौन्दर्य भी बना रहता है और बालकों के अरुचि भी नहीं होती है।

प्रत्येक बच्चा अपने स्तर पर चिंतनशील होता है। वह बड़ों की तुलना में कमतर होता है, पर चेतना शून्य नहीं। लगभग तीन-चार वर्ष की उम्र के आस-पास बच्चों में साहित्य सृजन का अंकुर फूटने लगता है। यदि उसे अनुकूल अवसर अर्थात प्रोत्साहन और निर्देशन मिलता है तो बच्चा स्वयं अपने ढंग से साहित्य की रचना करने लगता है।

कोरी काल्पनिक, चमत्कारिक, भूत-प्रेत, जादुई कथाओं से भी बच्चों का मनोरंजन होता है परन्तु इस प्रकार के क्रिया-कलाप में पक्का विश्वास हो जाने पर उनके विकास में पत्थर अटकाने जैसे बात हो जाएगी और उनका मानवीय गुण स्वाभाविक रुप से कल्पना की उड़ानों के साथ उड़ने लगेगा, जिससे उनके स्वप्नद्रष्टा बनने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है।

बाल जीवन में मनोरंजन का भी बहुत अधिक स्थान है। प्राचीन गुरु गंभीर बाल साहित्य आज के बालक का मनोरंजन करने में असमर्थ हैं। बाल जीवन के चारों ओर मनोरंजन की परिस्थितियां हैं। आधुनिक बालक आधुनिक जीवन से ही मनोरंजन कर सकता है।

बच्चों में दुनिया को समझने और उनसे जुड़ने की एक ललक होती है, जिसकी पूर्ति हेतु वह बड़ों की नजरें बचाकर अपनी मनमर्जी से कुछ न कुछ काम करने की कोशिश करता है या कर डालता है। कभी-कभी वह अपने पाठ्यक्रम से हटकर बाहरी किताबों व पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ना चाहता है।

कोरी काल्पनिक, चमत्कारिक, भूत-प्रेत, जादुई कथाओं से भी बच्चों का मनोरंजन होता है परन्तु इस प्रकार के क्रिया-कलाप में पक्का विश्वास हो जाने पर उनके विकास में पत्थर अटकाने जैसे बात हो जाएगी और उनका मानवीय गुण स्वाभाविक रुप से कल्पना की उड़ानों के साथ उड़ने लगेगा, जिससे उनके स्वप्नद्रष्टा बनने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है। यह स्थिति सुखद नहीं और हमें एक सुखद स्थिति की जरुरत है, जिसे हमें लाना है और हर कीमत पर लाना है। निश्चित रूप से एक अच्छी, सार्थक किताब पढ़कर पढ़ने वाला बच्चा वह नहीं रह सकता है जो पढ़ने के पहले होता है।

निःसंदेह, इन दिनों बच्चों की जानकारियाँ बहुत बढ़ गई हैं। छोटी उम्र में ही दुनिया भर की जानकारियाँ। सिक्के का एक और पहलू भी- वह है बच्चों की जानकारी के अनुरूप ही उनकी जिज्ञासा का भी बढ़ना। उन्हें जितनी जानकारी मिलती है, उनके मन में उतने ही प्रश्न भी उठते हैं। स्पष्ट है उन्हें उन प्रश्नों के उत्तर भी चाहिए। यदि प्रश्नों का समाधान नहीं होता तो बचपन से ही बच्चों के मन में गांठें पड़ जाती हैं। कुंठाएं उत्पन्न होती हैं। इतना ही नहीं, माता-पिता और शिक्षक-शिक्षिकाओं से प्रश्नों के उत्तर नहीं मिलते तो बच्चे गलत संगत में पड़ जाते हैं।

वर्तमान पर दृष्टिपात करने से पता चलता है कि कल की तुलना में आज के बच्चे के सामने मुश्किलें कहीं अधिक हैं और शायद इसीलिए आज बाल विज्ञान साहित्य की जरुरत कहीं अधिक हैं। आज के बच्चों के नाजुक कंधों पर पढ़ाई और बस्ते का बोझ बहुत बढ़ गया हैं वास्तव में, बच्चों को स्वस्थ मनोरंजन देने की सामाजिक जिम्मेदारी में हमने एक अक्षम्य लापरवाही बरती है।

कई बच्चों में प्राकृतिक प्रतिभा रहती है। बाल विज्ञान साहित्यकार को उनकी प्रतिभा को ध्यान में रखकर उस प्रतिभा की परख करनी चाहिए। बच्चे बहुत प्राकृतिक होते हैं। जब तक उन्हें अच्छा संयोग व साथ नहीं मिलता, वे किसी की संवेदना को सीधे ग्रहण नहीं करते।

बच्चों में हर पल नई-नई बात सीखने-देखने की ललक होती है। वह बहुत जल्दी पुरानी चीजों से ऊब जाता है। और आज विज्ञान ने पूरी दुनिया की रफ्तार तेज कर दी है, हर पल कुछ न कुछ नया करने की होड़, मची हुई है। सूचना-क्रांति के चलते पूरी दुनिया सूचना पर आधारित होती जा रही है। शिक्षा के क्षेत्र में नए-नए प्रयोग हो रहे हैं, नई-नई तकनीकों का प्रयोग बढ़ रहा है। बच्चे के सामने टेलीविजन और इंटरनेट पर दुनिया भर का विस्तार है। बाजार की चकाचौंध है। शिक्षा और ज्ञान की बाजार के फार्मूले पर तैयार किया जाने लगा है।

आज का बच्चा हर क्षेत्र में अपनी सक्रिय भागीदारी के लिए तैयार है। उसमें अकूत रचनात्मकता है। वह अपने आस-पास की दुनिया को गौर से देखने और उस पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने वाला बच्चा है। वह अपनी जिज्ञासाओं का तुरंत समाधान चाहता है और उसकी जिज्ञासाएं सिर्फ किताबी नहीं हैं।

आज बच्चों की आवश्यकताओं, रचनात्मक क्षमता और सक्रियता को ध्यान में रखते हुए उनके पाठ्यक्रमों को अधिक से अधिक व्यावहारिक बनाने पर जोर दिया जा रहा है और अधिकांश पाठ्यक्रमों का स्वरूप भी बदला है।

आज हिन्दी विज्ञान पत्रिकाओं को अपने कलेवर, विषयवस्तु और प्रस्तुति को लेकर नए सिरे से विचार करने की जरुरत है। आज सबसे बड़ी आवश्यकता है कि पत्रिकाएं बच्चों को सिर्फ ज्ञान, आनंद और नैतिकता न दें, बल्कि उन्हें अपने साथ रचनात्मक रुप से सहभागी बनाएं।

बच्चों को किस हद तक वैज्ञानिक बातें जाननी चाहिए, इसके लिए प्रचुर शोध की आवश्यकता है। अभी तो इतना ही कहा जा सकता

है कि ज्यों-ज्यों बच्चे बढ़े, नूतन से नूतनतर तथ्यों से उन्हें परिचित कराया जाए। साथ ही यह भी अनुभव किया जाने लगा है कि आधुनिक युग में बच्चों को उन असामान्य वैज्ञानिक तथ्यों से भी परिचित होना आवश्यक है जो वर्तमान सभ्यता के अभिन्न अंग बन चुके हैं यथा- जैव प्रौद्योगिकी, सूचना-प्रौद्योगिकी, अंतरिक्ष-प्रौद्योगिकी, पर्यावरण-प्रदूषण इत्यादि। यद्यपि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाए तो इन सबके सम्बन्ध में बच्चों को जानकारी प्रदान करना आसान ही होगा क्योंकि वे इन वस्तुओं को देखते-सुनते या उपयोग में लाते हैं और इनके सम्बन्ध में बहुत-सी बातें जानना चाहते हैं।

वैज्ञानिक परिवेश तैयार करने तथा वैज्ञानिक मनोवृत्ति बढ़ाने में बाल विज्ञान साहित्य की विशेष भूमिका होती है। चूँकि आज के बच्चों का जीवन तथा उसका वातावरण प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से वैज्ञानिक सिद्धांतों, तत्संबंधी आविष्कारों और उपयोगी वस्तुओं से घिरा हुआ है, अतः आजकल बच्चों में विज्ञान के प्रति रुचि उत्पन्न एवं विकसित करने की आवश्यकता अनुभव की जा रही है वैज्ञानिक परिवेश की कोई सीमा नहीं है। चारों ओर जितनी भी चीजें हैं- प्राकृतिक या मानव-निर्मित, उन सबके सम्बन्ध में "क्यों" और "कैसे" प्रश्न करके आवश्यक बोधगम्य तथ्य बताये जाएं। ऐसा स्वीकार कर लेने पर यह स्वयंमेव निर्धारित हो जाता है कि या तो शिक्षक या घर कोई गुरुजन अपने शिष्य या परिवार के बच्चे से नित्य प्रति नए-नए प्रश्न करता रहे, उसके उत्तर सुने और फिर वास्तविकता का बोध कराए। वस्तुतः यह इतना गंभीर और गुरुतर कार्य है जो सबके बूते का नहीं। इसीलिए यह सुझाव ठीक ही होगा कि अनुभवी एवं अधिकारी विद्वान ही रोचक शैली में बाल विज्ञान साहित्य प्रस्तुत करें किन्तु प्राप्य साहित्य के विश्लेषण से पता चलता है कि वर्तमान स्थिति इसके सर्वथा विपरीत है। नए-नए लेखकों ने अपनी सूझ के अनुसार ही प्रयोग किए हैं, इसीलिए उन्हें विभिन्न सीमाओं तक सफलता प्राप्त हुई है जो बच्चों के स्वभाव से परिचित हैं और साथ ही वैज्ञानिक तथ्यों से, उनकी रचनाएं बेजोड़ रहीं हैं जबकि पढ़े-पढ़ाए ज्ञान के आधार पर लेखन के क्षेत्र में प्रयोग करने वालों की रचनाएं ऐसी नहीं सिद्ध हो पायीं।

उपलब्ध बाल विज्ञान साहित्य के दो प्रकार हैं- 1. मौलिक बाल विज्ञान साहित्य तथा, 2. अनूदित बाल विज्ञान साहित्य। मौलिक बाल विज्ञान साहित्य विभिन्न भाषाओं में मूल रूप से लिखा हुआ साहित्य है जबकि अनुदित साहित्य विशेष रूप से अंग्रेजी पुस्तकों से सम्बद्ध है। गुजराती, मराठी तथा बंगला से भी कुछ अनुवाद हुए हैं। बच्चों को कहानियाँ प्रिय है। उन्हें नाटक भी अच्छे लगते हैं। वे कविता भी गुनगुनाते हैं और उपन्यास भी पसन्द करते हैं। स्पष्ट है कि विद्वान लेखकों को अपनी शैली के लिए कहानी, नाटक, कविता, उपन्यास तथा निबंध का सहारा लेना पड़ता है। बाल विज्ञान लेखन में भाषा के प्रति भी सावधानी बरतनी पड़ती है। विज्ञान की भाषा में परिभाषित शब्दों के बिना काम नहीं चलता, अतः ऐसे शब्दों की व्याख्या आवश्यक हो जाती है। इसके लिए उपमा, रूपक जैसे साहित्यिक अलंकरणों का उपयोग आवश्यक है। चित्र भी सहायक बनते हैं किन्तु बच्चों को जिस स्तर का विज्ञान विषयक ज्ञान दिया जाय, वह निश्चित नहीं है। बच्चों में से कुछ मन्दबुद्धि के होते हैं तो कुछ प्रतिभाशाली होते हैं। वस्तुतः कोई भी साहित्य न तो सबके लिए होता है, न चुने लोगों के लिए। इसलिए बीच-बीच में प्रश्न ओर उत्तर शैली में कुछ बातें लिखी जा सकती है। कहानी के विषय में स्पष्टीकरण की आवश्यकता है-क्या कहानी में आत्मकथा हो, क्या कहानी के रूप में वार्ता (कथोपकथन) विवरण दिए जायें? या कि किसी विषय का इतिहास बढ़ाया जाय? अंग्रेजी में ''स्टोरीज फ्रॉम केमिस्ट्री, जैसी अनेक पुस्तकें हैं जो उस विषय के विविध पक्षों को विभिन्न स्तरों पर विविध शैलियों में प्रस्तुत करती हैं। इसी तरह 'मैथमेटिक्स फॉर फन', 'फिजिक्स फॉर इन्टरटेनमेंट' जैसी पुस्तकें भी हैं। इस कहानियों में कुछेक में आत्मकथा का रूप रहता है। बहुत-सा बाल विज्ञान साहित्य इसी विद्या में मिलता है। मैं हवा हूँ, मैं आग हूँ, मैं हूँ रोबोट, मैं हूँ चुम्बक, मैं हूँ बिजली आदि। सचमुच ही आत्मकथा के रूप में दिए गए विवरण बच्चों के लिए अधिक हृदयग्राही होते हैं। बच्चा तुरन्त ही ऐसी पुस्तकों को भरी-पूरी दुकान से छाँट लेता है, पढ़ता है, मुस्कराता है, गम्भीर बन जाता है और तब पाठ्य-पुस्तकों की सामग्री से मिलान करना चाहता है। बाल विज्ञान साहित्य बच्चे को उसके आसपास के परिवेश में, पर्यावरण से या कि प्रकृति से परिचित कराने के लिए रचा जाता है। इसीलिए पशु-पक्षियों के विषय में सूक्ष्म जानकारी, वृक्षों से जानकारी, आकाश से, पृथ्वी से, नक्षत्र से, नदी से जानकारी, नूतनतम विषय-नवीन अभियान तथा अंटार्कटिका की सैर, चन्द्रलोक की यात्रा, अपोलो अभियान, भास्कर, रोहिणी जैसे अभियान, वन्य जीव संरक्षण, आजोन परत की हिफाजत, पर्यावरण के विभिन्न घटकों जैसे मिट्टी, जल, वायु आदि का प्रदूषण, जैव विविधता, सूचना प्रौद्योगिकी के विभिन्न आयामों-कम्प्यूटर, इंटरनेट इत्यादि उन्हें जागरूक बनाने वाले विषय हैं। मूलभूत विज्ञानों-भौतिक, रसायन, वनस्पति, जीव विज्ञान के आधारभूत सिद्धान्तों की जानकारी भी बच्चों के लिए आवश्यक है जैसे-भौतिकी के रोचक तथ्य, रसायन की रोचक बातें, पृथ्वी की रोचक बातें, मानव की रोचक बातें, अंतरिक्ष की रोचक बातें, विकासवाद, वर्णसंकरता, रक्त वर्ग, जैव प्रौद्योगिकी, आनुवंशिक अभियांत्रिकी, ऊतक संवर्द्धन, क्लोनिंग, जीन चिकित्सा इत्यादि। सुदूर संवेदन, रॉकेट, उपग्रह आदि ऐसे सामाजिक विषय हैं जिन पर संक्षिप्त रोचक जानकारी दी जा सकती है। ऐसी सामग्री प्रायः विश्वकोशों में संकलित रहती है किन्तु बच्चों के लिए ऐसे सचित्र विश्वकोशों का अभाव है। आज का बालक कल का नागरिक होगा। अतः अभिभावकों को चाहिए कि वे बच्चों को उपयोगी एवं अच्छा

साहित्य चुनकर पढ़ने को दें और अपने आप उन्हें नई चीजें पढ़ते रहने की आदत बनाने में सहयोग दें। बिना सम्यक् जानकारी के कोई भी बच्चा आगे चलकर वैज्ञानिक नहीं बन सकता। वैज्ञानिक साहित्य में विविधता लाने के लिए सतत प्रयत्न होते रहने चाहिए। विख्यात वैज्ञानिकों एवं विज्ञान संचारकों की जीवनियां सचित्र छपनी चाहिए। पत्रिकाओं में ऐसी वैज्ञानिक कहानियां एवं उपन्यास क्रमबद्ध रूप से छपने चाहिए जो उपयोगी हों यदि पाठ्यक्रम की कुछ विस्तृत सचित्र सामग्री लगातार छपती रहे तो सभी बच्चे इन पत्रिकाओं को खरीदकर पढ़ेंगे। बाल विज्ञान साहित्य सृजन हेतु यह आवश्यक है कि विषय ऐसी रोचक शैली में प्रस्तुत किया जाए कि बच्चे स्वयं इसकी ओर आकर्षित हों, साथ ही भाषा इतनी सरल हो कि बच्चों को इनके अध्ययन से विज्ञान के गूढतम रहस्यों को समझने में कोई कठिनाई न हो, इन्हें पढ़ने से उनमें अधिक पढ़ने की रुचि पैदा हो, उनके नैसर्गिक कौतूहल में वृद्धि हो जिससे ऐसे कौतूहल और उसके समाधान के लिए स्वप्रयत्न उनके जीवन का एक अंग बन जाए।

मराठी, गुजराती, बंगला आदि भाषाओं के प्रायः सभी श्रेष्ठ साहित्यकारों ने बच्चों के लिए खूब लिखा है। यह भी निश्चित करना महत्वपूर्ण है कि बच्चों के लिए लिखे जाने वाले साहित्य का मुख्य आधार क्या हो-शिक्षा या मनोरंजन। आज हमारा समाज छोटे-छोटे परिवारों में सिमट कर रह गया है। कहीं-कहीं पर माता-पिता दोनों ही काम पर जाते हैं, उनके पास बच्चों को समझने का वक्त तक नहीं है। आज का बच्चा बचपन से ही तनावग्रस्त हो जाता है। छोटी कक्षाओं में ही उसको पाठ्य-पुस्तकों के रूप में ज्ञान का इतना बड़ा भंडार पकड़ा दिया जाता है कि वह असमंजस की स्थिति में आ जाता है। साथ ही कक्षा में श्रेष्ठ बने रहने की होड़ भी है। ऐसे में बच्चों को मनोरंजन आधारित साहित्य की अधिक आवश्यकता है, शिक्षा की कम। शिक्षा हो भी तो मनोरंजन के साथ। रोचक सामग्री के साथ विज्ञान के सिद्धांतों विषयों, तथ्यों को प्रस्तुत करके उत्सुकता पैदा की जा सकती है। मौलिक विज्ञान साहित्य के बिना कोई भाषा स्वयं में पूर्ण नहीं हो सकती। सूचना-प्रौद्योगिकी के इस युग में प्रामाणिक, रोचक एवं समसामयिक विज्ञान साहित्य का सृजन एक बड़ी आवश्यकता है और एक चुनौतीपूर्ण कार्य भी। ऐसे में बात यदि बच्चों के लिए रचे जाने वाले विज्ञान साहित्य की हो, तो वह और भी बड़ी चुनौती है। क्योंकि बच्चों के लिए लिखना आसान काम नहीं है। सहज और रोचक भाषा-शैली में लिखना सचमुच कठिन काम है। इसके लिए सर्वप्रथम बच्चों जैसा सरल हृदय होना चाहिए और बाल सुलभ-सहज शिक्षा सा भाव के साथ आसपास की चीजों को प्रेक्षित करने की कुशलता भी। एक अच्छे बाल विज्ञान साहित्य की यही प्रमुख विशेषता है कि बच्चों को उसको पढ़ने के लिए बार-बार कहना नहीं पड़ता। वे स्वयं उसे पढ़ने के लिए लालायित रहते हैं और उस ओर सहज ही आकर्षित हो जाते हैं। रोचक बाल साहित्य सृजन के लिए बाल मन की रूचियों, प्रवृत्तियों, जिज्ञासाओं एवं अपेक्षाओं को जानना अत्यन्त आवश्यक है। बच्चों की परिवेशगत पृष्ठभूमि से भी अवगत होना जरूरी है। सूचना-क्रांति के इस युग में बालकों की बुद्धिलब्धि उनकी आयु से काफी अधिक हो गई है। अब वे परी कथाओं में रूचि नहीं लेते उन्हें यथार्थपरक जानकारी चाहिए। उनकी आयु के अनुरूप साहित्य प्रदान करें। राष्ट्रीय स्तर पर पाठ्यक्रम निर्माणी समितियों में अन्य लोगों के साथ बाल मनोवैज्ञानिकों एवं बाल साहित्यकारों को भी सम्मिलित करने की आवश्यकता है। सी.एस.आई.आर. (नई दिल्ली) द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'विज्ञान प्रगति' एवं एन.आर.डी.सी. (नई दिल्ली) द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'आविष्कार' में बच्चों के लिए उपयोगी रोचक वैज्ञानिक सामग्री नियमित रूप से प्रकाशित होती रहती है। इधर के कुछ वर्षों से दैनिक एवं साप्ताहिक समाचार-पत्रों में भी बालोपयोगी रोचक वैज्ञानिक जानकारी प्रकाशित होने लगी है। सरकारी संस्थाओं में नेशनल बुक ट्रस्ट, प्रकाशन विभाग, एन.सी.ई.आर.टी. तथा विज्ञान प्रसार द्वारा बच्चों के लिए उपयोगी साहित्य प्रकाशित किया जा रहा है। 'बाल भारती', 'बालहंस', 'बाल वाटिका', कुछ ऐसी पत्रिकायें हैं जिनमें बच्चों के लिए उपयोगी रोचक वैज्ञानिक जानकारी समय-समय पर प्रकाशित होती रहती है। 'इलेक्ट्रानिकी आपके लिए' में महान वैज्ञानिकों की जीवनियाँ एवं बालोपयोगी अन्य रोचक सामग्री प्रकाशित होती रहती है। कुछ निजी प्रकाशक बाल विज्ञान साहित्य प्रकाशित कर रहे हैं। इनमें प्रमुख हैं- प्रभात प्रकाशन किताबघर, राजकमल, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, अनन्त प्रकाशन, पुस्तकायन, इत्यादि (सभी नई दिल्ली)। अन्य शहरों से भी स्थानीय प्रकाशन कुछ न कुछ बाल विज्ञान साहित्य प्रकाशित करते रहते हैं। इन पुस्तकों की प्रामाणिकता, रोचकता सुनिश्चित करके इन्हें प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। बाल विज्ञान साहित्य का उद्देश्य केवल मनोरंजन करना ही नहीं है, बाल जीवन की संवेदना को उद्बुद्ध करना भी है। बच्चे समाज के अंग हैं। उनके सामने अतीत भी है, वर्तमान भी और भावी रूप भी। सृजन यदि मानवीय है तो उसमें मनोरंजन का अभाव नहीं होगा। यथार्थ से परे वायवीय कल्पना और भय पैदा करने वाली परिस्थितियों पर आधारित बाल साहित्य बालक को कौन से मानवीय मूल्य प्रदान कर सकता है? सच्चा बाल विज्ञान साहित्य वही है जो उनके बाल मनोविज्ञान के स्तर पर खरा उतरे और जिसे वे सहज रूप से ग्रहण कर सकें। बाल साहित्य के सच्चे समालोचक तो बच्चे ही हैं। जब तक हम बाल मन को नहीं समझ सकेंगे, तब तक उनके लिए हमारा लेखन उद्देश्य रहित सिद्ध होगा।

dineshmanidsc@gmail.com

10वां विश्व हिन्दी सम्मेलन और विज्ञान : एक अवलोकन

डॉ. शंभू रतन अवस्थी

दसियों साल से मेरा सपना था कि मैं विश्व हिंदी सम्मेलन में भाग लूं। अपना सपना साकार होता देख मैं भावविभोर हो उठा। मैं आभारी हूं विज्ञान प्रसार, नौएडा का, जिसकी अनुशंसा के आधार पर विदेश मन्त्रालय ने आईसेक्ट विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि के तौर पर मुझे 10 से 12 सितंबर तक भोपाल में आयोजित होने वाले दसवें विश्व हिन्दी सम्मेलन में अतिथि के रूप में आमंत्रित किया।

विश्व हिन्दी सम्मेलन कुछ वर्षों के अंतराल से विश्व के ऐसे देशों में आयोजित होता रहा है जहां हिन्दी भाषियों की संख्या अधिक है। भारत में तीन विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित किए गए हैं। पहला सम्मेलन वर्ष 1975 में नागपुर में आयोजित किया गया था। इसके बाद दिल्ली में वर्ष 1983 में और भोपाल में दसवां विश्व हिन्दी सम्मेलन 10 से 12 सितंबर 2015 तक आयोजित किया गया। दसवें विश्व हिन्दी सम्मेलन का उद्घाटन भारत के प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा किया गया जिसमें 39 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

विश्व हिन्दी सम्मेलन का उद्देश्य विश्व पटल पर हिन्दी की उपस्थिति और महत्ता को उजागर करना होता है। दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन का मुख्य विषयः हिंदी जगतः विस्तार एवं सम्भावनाएं था। पूर्व में आयोजित विश्व हिन्दी सम्मेलन साहित्यिक चर्चाओं पर केंद्रित होते थे। इस बार के सम्मेलन का ध्येय हिन्दी के विस्तार को परिणाममूलक बनाना था। हिन्दी में योगदान देने वाले साहित्यकारों एवं अन्य हिंदीसेवियों को इस प्रकार स्मरण किया गया हैः

हिंदी सेवियों का स्मरण

सम्मेलन के लिए भोपाल के लाल परेड ग्राउंड पर एक भारतीय आत्मा माखन लाल चतुर्वेदी नगर बसाया गया। रामधारी सिंह दिनकर सभागार में उद्घाटन, समापन एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए गए। समानातर सत्रों के सभागारों के नाम भी हिंदी में विशिष्ट योगदान देने वाले निम्नलिखित व्यक्तियों के नाम पर किए गएः

- डॉ. विद्यानिवास मिश्र सभागार
- रोनोल्ड स्टुअर्ट मेक्ग्रेगर सभागार
- अलेक्सेई पेत्रोविच वरान्निकोव सभागार
- कवि प्रदीप सभागार
- राजेन्द्र माथुर सभागार

डॉ. मोटुरी सत्यनाराण प्रदर्शनी कक्ष, सुभद्रा कुमारी चौहान स्वागत कक्ष तथा भोजन के लिए काका साहब कालेलकर एवं दुष्यंत कुमार के नाम पर करके स्मरण किया गया।

आयोजक

यह सम्मेलन भारत सरकार के विदेश मंत्रालय एवं मध्य प्रदेश सरकार के सहयोग से आयोजित किया गया। इसमें माखन लाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय भागीदारी संस्था थी।

विशेष प्रकाशन

सम्मेलन के अवसर पर विदेश मंत्रालय द्वारा स्मारिका एवं प्रवासी साहित्यः जोहांसबर्ग से आगे लोकार्पित किए गए। इसके अलावा, भारतीय

सांस्कृतिक संबंध परिषद द्वारा गगनांचल पत्रिका का विशेषांक और राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा हिंदी भाषाः स्वरूप, शिक्षण, वैश्विकता नामक पुस्तक का भी लोकार्पण किया गया।

सम्मेलन के समाचारों को दैनिक सार नामक समाचार पत्र के माध्यम से 8 से 12 सितंबर तक प्रतिदिन प्रकाशित किया गया।

सम्मेलन में निम्नलिखित विषयों पर समानांतर सत्र आयोजित किए गए।

- गिरमिटिया देशों में हिंदी
- विदेशों में हिंदी शिक्षण - समस्याएं और समाधान
- विदेशियों के लिए भारत में हिंदी अध्ययन की सुविधा
- अन्य भाषा-भाषी राज्यों में हिंदी
- विदेश नीति में हिंदी
- प्रशासन में हिंदी
- विज्ञान क्षेत्र में हिंदी
- संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी में हिंदी
- विधि एवं न्याय क्षेत्र में हिंदी और भारतीय भाषाएं
- बाल साहित्य में हिंदी
- हिंदी पत्रकारिता और संचार माध्यमों में भाषा की शुद्धता
- देश और विदेश में प्रकाशन की समस्याएं एवं समाधान

प्रदर्शनी

डॉ. मोटुरी सत्यनारायण प्रदर्शनी कक्ष में हिंदी-कल आज और कल नाम से प्रदर्शनी लगाई गई। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा, विज्ञान प्रसार नौएडा, अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, एप्पल, गूगल, माइक्रोसॉफ्ट, सी-डैक आदि द्वारा उनके योगदान पर आधारित प्रदर्शनियां लगाईं गईं। भारतज्ञान कोश नामक हिन्दी में ज्ञान का महासागर की वेबसाइट की जानकारी प्रदर्शित की गई। इसमें माखनलाल चतुर्वेदी पत्रकारिता विश्वविद्यालय एवं दुष्यंत कमार स्मारक संग्रहालय द्वारा दुर्लभ पांडुलिपियां प्रदर्शित की गईं।

सोमदत्त बखौरी कक्ष में में मध्य प्रदेश शासन की प्रदर्शनी अभिज्ञानम् मध्य प्रदेश नामक प्रदर्शनी लगाई गई।

विज्ञान के सत्र

10, 11 एवं 12 सितंबर 2015 को विद्यानिवास मिश्र सभागार में विज्ञान के सत्र आयोजित किए गए। इन सत्रों की अध्यक्षता डा. हर्षवर्धन, मंत्री, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, भारत सरकार ने की। इनकी संयोजिकाः श्रीमती किंकिणी दासगुप्ता मिश्रा, वैज्ञानिक, विज्ञान प्रसार, नोएडा थीं। 10 एवं 11 सितंबर को विशेषज्ञों द्वारा विद्यानिवास मिश्र सभागार में निम्नलिखित आलेख प्रस्तुत किए गए :

● डॉ. बाल कृष्ण सिन्हा, पूर्व निदेशक, वैज्ञनिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग-हिंदी में विज्ञान शब्दावली : आवशकता एवं चुनौतियाँ ● डॉ. शिव गोपाल मिश्र, प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग-हिन्दी में विज्ञान साहित्य की वर्तमान स्थिति तथा संभावनाएं ● प्रो. मोहनलाल छीपा, कुलपति, अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल-चिकित्सा विज्ञान में हिंदी की पढ़ाई कराने का प्रयास ● डॉ. नरेन्द्र कुमार सहगल, पूर्व निदंशक, विज्ञान प्रसार- विज्ञान लोकप्रियकरण, वैज्ञानिक सोच का विकास और हिन्दी ● डॉ. सुभाष लखेड़ा, पूर्व वरिष्ठ वैज्ञानिक, रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन-हिंदी में विज्ञान संचार और रक्षा विज्ञान

12 सितंबर को विज्ञान के प्रतिभागियों के सुझाव आमंत्रित किए गए एवं संबंधित विषयों पर चर्चा हुई। इस सत्र में अनुशंसाओं को अंतिम रूप दिया गया।

अंततः

विश्व हिंदी सम्मेलन का भाषा पर केंद्रित होना एक महत्वपूर्ण पहल है। सम्मेलन के दौरान लेखक विज्ञान के सभी सत्रों में उपस्थित था तथा उसने कुछ सुझाव भी दिए। कार्यक्रम में भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री डा. हर्षवर्धन की पूरे समय उपस्थिति एवं सक्रिय भागीदारी उल्लेखनीय रही। यह इस तथ्य को रेखांकित करती है कि सम्मेलन को गंभीरता से लिया गया। इससे आशा बंधती है कि हिंदी में विज्ञान के क्षेत्र में सम्मानपूर्ण स्थान दिलाने के लिए गंभीर प्रयास किए जाएंगे।

srawasthi@yahoo.com

विज्ञान क्षेत्र में हिंदी

किंकिणी दासगुप्ता मिश्रा

जिस देश की जनसंख्या 55 प्रतिशत से ज्यादा हिन्दी लिखना और पढ़ना जानती हो उस देश में हिन्दी भाषा का प्रचलन होना जरूरी है। विश्व में मौजूद किसी भी देश की प्रगति को देखा जाये तो वहाँ की राष्ट्रभाषा ने उस देश को ऊंचाई हासिल करने में मदद की है। आज के समय देश की भाषा और विज्ञान का महत्व शायद ही बहस का विषय है। जहां तक भारत का सवाल है, आज हम आजादी के 68 साल बाद भी हिन्दी और विज्ञान के महत्व को न समझने के कारण भारत की प्रगति में जनमानस की भागीदारी को साथ नहीं ले पा रहे हैं।

पाश्चत्यात् संस्कृति का प्रभाव होने के कारण आज का जनमानस जो अपनी भाषा में अच्छे तरीके से विचारों का आदान प्रदान कर सकता है वह अंग्रेजी के कारण कहीं न कहीं बाधा और चुनौतियों में फंसा रहता है। आज के समय हिन्दी भाषा के माध्यम से इन युवा बुद्धि और हुनर को प्रगति के राह पर लाया जा सकता है। इसमें हमें हिन्दी भाषा में अनुसंधानिक लेखों का प्रकाशन को प्रोत्साहन देना चाहिए, मौलिक लेखन के लिये प्रोत्साहित करना चाहिए और साथ ही साथ में विश्व में मौजूद अलग अलग नवीनतम जानकारी को हिन्दी में उपलब्ध करने की आवश्यकता है। भाषा और शब्दों की जटीलता में न अटकते हुए अलग अलग पारिभाषिक शब्दों को हिन्दी में यथाचित प्रचलित करना चाहिए। विज्ञान क्षेत्र के विद्यार्थियों को अपने प्रबंध हिन्दी में प्रकाशित करनें के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए और शायद इन प्रयासों की वजह से भविष्य में मौलिक विज्ञान लेखन कि और शोध कार्य का अन्य देश अपनी भाषा में भाषांतर करते हुए नजर आएगें। आज विश्व में जो देश की मातृ भाषा में संचार और प्रचार कर रहें हैं वह ना सिर्फ वहां के लोगों का आत्मसम्मान बढ़ा रहें हैं बल्कि उस देश को अपने प्रगति पथ पर लाने में अपना योगदान दे रहें हैं। अंततः भारत को भी विज्ञान को हिन्दी के माध्यम से लोगों तक पहुंचाने का प्रयास मौलिक लेखन एवं मौलिए चितंन के माध्यम से करना चाहिए।

10वां विश्व हिन्दी सम्मेलन में पहली बार 'विज्ञान क्षेत्र में हिन्दी' सत्र का आयोजन किया गया है। इस सत्र का उद्देशय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विषयों को हिन्दी में सरल एवं रुचिपूर्ण तरीके से जनमानस में पहुंचाने के प्रयासों को प्रोत्साहित करना है। इस सत्र की अध्यक्षता केन्द्रीय मंत्री, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, माननीय डॉ. हर्षवर्धन ने की और सत्र संचालन एवं कार्यभार विज्ञान प्रसार की वैज्ञानिक श्रीमती किंकिणी दासगुप्ता मिश्रा ने किया।

'विज्ञान क्षेत्र में हिन्दी' विषय को दो सत्रों के माध्यम से पूरा किया गया। देश के विख्यात वैज्ञानिकों एवं एवं विज्ञान संचारकों ने इन सत्रों में अपने विचार रखते हुए हिन्दी में विज्ञान की उपलब्धता के संबंध में चुनौतियों और अवसरों पर विस्तार से चर्चा की। विज्ञान को सरल, बोधगम्य एवं प्रभावशाली बनाने के लिए अपने विचार रखे। विज्ञान क्षेत्र में हिंदी विषयक सत्र का उद्देश्य विज्ञान, प्रौद्योगिकी, चिकित्सा एवं अभियांत्रिकी विषयों में पाठ्यक्रम सामग्री का हिंदी में विकास एवं हिंदी में विज्ञान लोकप्रियकरण एवं विज्ञान संचार को प्रोत्साहन देना था।

इन दोनों सत्रों में कुल पांच वक्ताओं ने अपने विचार व्यक्त किए, जिसमें शामिल थे, डॉ. शिवगोपाल मिश्र, प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग, इलाहबाद, डॉ. एन. के. सहगल, पूर्व सलाहकार, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार, प्रो. मोहनलाल छीपा, कुलपति,

अटलबिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल, डॉ. बी.के. सिन्हा, पूर्व वैज्ञानिक अधिकारी, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग एवं डॉ. सुभाष लखेड़ा, पूर्व वैज्ञानिक, डीआरडीओ।

तीसरे दिन 12 सितंबर, 2015 को पिछले दोनों सत्रों की संक्षिप्त रपट प्रस्तुत की गई। सत्र के दौरान वक्ताओं के व्याख्यानों और प्रतिभागियों के विचार-विमर्श के बाद माननीय डॉ. हर्षवर्धन द्वारा प्रतिभागियों के साथ तकनीकी सत्रों पर विस्तार पूर्वक चर्चा के उपरांत निम्नांकित अनुसंशाओं का अनुमोदन किया गया :

चिकित्सा क्षेत्र में नियामक संस्थाओं द्वारा एक निश्चित समयसीमा में सभी चिकित्सा परीक्षाओं में हिंदी भाषा में लिखने की छूट प्राप्त हो। चिकित्सा शिक्षण द्विभाषीय माध्यम से हो।

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के अंतर्गत केन्द्रीय हिंदी चिकित्सा प्रकोष्ठ का गठन किया जाए।

उच्च चिकित्सा व तकनीकी शिक्षा लेखन मिशन की स्थापना की जाए।

अवकाश प्राप्त चिकित्सकों को शिक्षण संस्थानों में लोकप्रिय व्याख्यानों के लिए आमंत्रित किया जाए।

वैज्ञानिक एवं शब्दावली आयोग, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली का निर्माण एवं परिभाषा कोश का निर्माण कार्य करता है। इस कार्य को विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अंतर्गत संचालित किया जाए।

मौलिक विज्ञान लेखन को हिंदी में प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के नवीन एवं समसामायिक विषयों पर योजनाबद्ध तरीके से पुस्तकों को विकसित किया जाए।

हिंदी में लेखन करते हुए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के लोकप्रिय एवं प्रचलित अंतर्राष्ट्रीय शब्दों के यथारूप देवनागरी लिपि में मानक शब्दों के साथ दिए जाने की स्वीकार्यता मिले।

हिंदी में विज्ञान लेखन के क्षेत्र में संस्थागत और व्यक्तिगत रूप से किए जाने वाले प्रयासों का संकलन किया जाए ताकि वर्तमान स्थिति का आंकलन हो सके और भविष्य में किए जाने वाले कार्यों की रूपरेखा स्पष्ट हो सके।

हिंदी भाषा में विज्ञान विषयों पर वैज्ञानिक संस्थानों द्वारा शोध पत्रिकाओं का प्रकाशन अनिवार्य किया जाए। ऐसी शोध पत्रिकाओं को अन्य विदेशी भाषाओं के समकक्ष ही मान्यता मिले।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रसार की रणनीति के तहत विज्ञान विधि का प्रचार-प्रसार विद्यालय स्तर से ही मातृभाषा में हो।

डिजिटल इंडिया के तहत प्राचीन भारत के वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित दुर्लभ ग्रंथों जैसे ''भारत की संपदा'' आदि साहित्य को निःशुल्क वेबसाइट पर उपलब्ध कराया जाए इसके अलावा विज्ञान विश्वकोश का प्रकाशन हिंदी में किया जाए।

देश के सभी वैज्ञानिक, चिकित्सा एवं अभियांत्रिकी प्रयोगशालाओं एवं संस्थानों में विज्ञान संचार इकाई की स्थापना की जाए एवं विज्ञान संचार के लिए विज्ञान प्रयोगशालाओं में पदों का सृजन किया जाए।

विज्ञान एवं तकनीकी प्रयोगशालाओं द्वारा सोशल मीडिया पर हिंदी में विज्ञान सामग्री की उपलब्धता सुनिश्चित की जाए।

हिन्दी में दैनिक विज्ञान समाचार पत्र का प्रकाशन आरंभ किया जाए।

जिन दो विषयों जैसे सूचना प्रौद्योगिकी एवं अंतरिक्ष, में भारत का कार्य महत्वपूर्ण है, उसमें अधिकाधिक मूल जानकारी हिन्दी में प्रकाशित की जाना चाहिए।

kdgm04@gmail.com

हिन्दी में विज्ञान साहित्य की वर्तमान स्थिति तथा संभावनाएं

डॉ.शिवगोपाल मिश्र

मैं विश्व हिन्दी सम्मेलन की तुलना भारतीय विज्ञान कांग्रेस से करना चाहूंगा। अन्तर इतना ही है कि विज्ञान कांग्रेस प्रतिवर्ष आयोजित होता है जबकि विश्व हिन्दी सम्मेलन काफी अन्तराल के बाद। दूसरा अन्तर यह है कि विज्ञान कांग्रेस भारत देश के ही विभिन्न स्थानों में आयोजित होता है जिसमें न केवल देशभर के अपितु विश्व के विभिन्न देशों के वैज्ञानिक भाग लेते हैं। विश्व हिन्दी सम्मेलन देश के बाहर विश्व के उन देशों में आयोजित होता आ रहा है जहाँ हिन्दी भाषियों की संख्या अधिक है। देश में आयोजित यह तीसरा विश्व हिन्दी सम्मेलन है। पहला सम्मेलन 1975 में नागपुर में आयोजित हुआ था। दूसरा सम्मेलन दिल्ली में और अब तीसरी बार भोपाल में दसवां विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित हुआ है। विज्ञान कांग्रेस का उद्घाटन प्रधानमंत्री द्वारा होता रहा है और सौभाग्यवश इस विश्व हिन्दी सम्मेलन का उद्घाटन भी माननीय नरेन्द्र मोदी द्वारा हुआ है जो देश के प्रधानमंत्री हैं।

विश्व हिन्दी सम्मेलन का उद्देश्य विश्व पटल पर हिन्दी की उपस्थिति और महत्ता को उजागर करना होता है। शायद यह पहला अवसर है जब विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी की व्याप्ति पर चर्चा होने जा रही है। मुझे यह कहते हर्ष हो रहा है कि 'विज्ञान प्रसार' नोएडा के आह्वान पर मैं देश की 100 वर्ष पुरानी वैज्ञानिक संस्था विज्ञान परिषद् प्रयाग की ओर से विज्ञान के प्रचार प्रसार में हिन्दी की भूमिका, उसके सरोकारों एवं संभावनाओं पर विचार व्यक्त करने जा रहा हूँ। मैं विश्व हिन्दी सम्मेलन के आयोजकों,विशेषरूप से विदेश मंत्रालय को साधुवाद देना चाहूँगा कि देर से ही सही, हिन्दी वाङ्मय की समृद्धि में ज्ञान के साथ विज्ञान पर चर्चा करने का अवसर प्रदान किया।

प्रारम्भ में ही बता दूं कि मेरे व्याख्यान के तीन भाग हैं- पहले मैं हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के अवतरण की बात करूंगा।

दूसरे भाग में मैं हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के पल्लवन, पुष्पन तथा फलन की बात करूंगा।

तीसरे भाग में मैं कुछ सुझाव प्रस्तुत करूंगा ।

●

1800 ई. में कलकत्ता में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना हो जाने से वहाँ अन्य विषयों के अतिरिक्त भारतीय भाषाओं का भी शिक्षण शुरू हुआ। बंगाल में ईस्ट इंडिया कम्पनी के पुराने अधिकारी संस्कृत,अरबी और फारसी को शिक्षा का माध्यम बनाना चाहते थे किन्तु मुनरो तथा एलफिंस्टन जैसे प्रबुद्ध ब्रिटिश शासक बंगला, गुजराती, मराठी, तमिल आदि आधुनिक भारतीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाने के पक्षपाती थे। मैकाले का तर्क था कि जनता में पश्चिमी ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा देने का माध्यम केवल अंग्रेजी बन सकती है । फलस्वरूप 7 मार्च 1835 को विलियम बेंटिक ने मैकाले का समर्थन करते हुए अंग्रेजी को उच्च शिक्षा का माध्यम बना दिया। वैसे तो 1835 के पूर्व कतिपय अंग्रेजी विद्वान बंगला, हिन्दुस्तानी तथा मराठी भाषाओं का प्रयोग विज्ञान के प्रचार-प्रसार, हेतु शुरू कर चुके थे। उदाहरणार्थ 1817 ई. में स्कूल बुक सोसाइटी की स्थापना की गई और 1819 में फैनालिक्स ने बंगला में विश्वकोश तैयार किया और शरीर विज्ञान पर एक पाठ्य पुस्तक तैयार की। कुछ अन्य ऐंग्लो इंडियन शिक्षाशास्त्रियों ने भी भारतीय भाषाओं में अनुवाद कार्य शुरू किया। 1820-25 ई. में हिन्दुस्तानी मेडिकल स्कूल के प्रधानाध्यापक डॉ.टिटलर ने मेडिकल पुस्तकों का बंगला में अनुवाद किया। मराठी में तो 1815 से ही वैज्ञानिक पुस्तकों का अनुवाद शुरू हो चुका था। हिन्दी पट्टी में वैज्ञानिक पुस्तकों के लेखन या अनुवाद का कार्य काफी बाद में शुरू हुआ।

जब मिशनरियों ने हिन्दी क्षेत्रों में मिशन स्कूल खोले तो सर्वप्रथम उनका ध्यान पाठ्यपुस्तकें तैयार करने की ओर गया। उस समय आगरा, मिर्जापुर तथा मुंगेर मिशन के गढ़े थे। 1822 में टामसन नामक एक यूरोपियन ने ज्योतिष और गोलाध्याय नामक एक ज्योतिष विषयक महत्वपूर्ण पाठ्य पुस्तक लिखी । इसमें खगोल तथा भूगोल का वर्णन था। टामसन लल्लू लाल जी के समकालीन थे। तब लल्लू लाल जी फोर्ट विलियम कॉलेज के हिन्दी विद्वान के रूप में हिन्दी गद्य को परिष्कृत करने में लगे थे।

1837 में आगरा की स्कूल बुक सोसाइटी ने कई पुस्तकों के हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किये। यहीं से 1847 में विज्ञान विषयक पुस्तक

'रसायन प्रकाश प्रश्नोत्तर' छपी। 1862 में अलीगढ़ से सर सैयद अहमद ने कई अंग्रेजी पुस्तकों का उर्दू में अनुवाद कराया। उस समय हिन्दी में राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द (1860),लक्ष्मी शंकर मिश्र (1873-1885) तथा मुंशी रतनलाल (1887) मिडिल कक्षाओं के लिए विविध विषयों के साथ गणित और विज्ञान की पुस्तकें लिख रहे थे ।

पश्चिमोत्तर प्रदेश के स्कूलों में शिक्षा का माध्यम हिन्दी थी। अतः पाठ्य पुस्तकें तैयार करने पर बल था। यू.पी. में अंग्रेज अफसरों ने राजा शिव प्रसाद को हिन्दुस्तानी का पक्षधर बना लिया था । इसी तरह बिहार में राय सोहन लाल भी हिन्दुस्तानी के पक्षधर बने । केवल लल्लू लाल शास्त्रीय ज्ञानवर्धक पुस्तकों में परिमार्जित भाषा का प्रयोग कर रहे थे। उनके बाद काफी समय तक हिन्दी गद्य की स्थिति बदतर बनी रही।

राजा शिवप्रसाद काशी के ही भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समकालीन थे और प्रारम्भिक शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे थे। उन्होंने बड़े ही परिश्रम से हिन्दी में प्रारम्भिक पाठ्य पुस्तकें लिखीं जिनमें भूगोल तथा विज्ञान की पुस्तकें मुख्य थीं। वे बनारस सर्किल तथा इलाहाबाद सर्किल के इंस्पेक्टर आफ स्कूल्स रहे। उन्होंने आगरा और झांसी कमिश्नरियों में भी इसी पद पर कार्य किया। उन्होंने स्कूली पाठ्यक्रम की जिन दो पुस्तकों की रचना की वे थी विद्यांकुर (1876) तथा भूगोल हस्तामलक। 'विद्यांकुर' प्राकृतिक और सामाजिक विज्ञानी की मिली जुली पुस्तक थी। इसमें जीव विज्ञान,वनस्पति शास्त्र, पदार्थ विज्ञान, नागरिक शास्त्र,राजनीति शास्त्र का वर्णन था। उन्होंने इसका उर्दू संस्करण 'हकाइकुल मौजूदात' नाम से निकाला। 'भूगोल हस्तामलक' का प्रथम भाग 400 पृष्ठों का था जिसमें एशिया का वर्णन था।

इन दोनों पुस्तकों के अलावा उन्होंने एक तीसरी पुस्तक भी लिखी जो हिन्दी गद्य-पद्य संग्रह 'गुटका' या 'हिन्दी सेलेक्शन्स' के नाम से 867 में बनारस के मेडिकल हाल से छपी थी। यह 'गुटका' ब्रिटिश शासन के जूनियर सिविल सर्वेन्टों और फौजी अफसरों की हिन्दी परीक्षा के पाठ्यक्रम के तौर पर पढाया जाता था। राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द ने एक पाठ्य पुस्तक की भूमिका में अपने द्वारा अपनाई गई भाषा नीति के विषय में लिखा-'हम लोगों को जहाँ तक बन पड़े, चुनने में उन शब्दों को लेना चाहिए जो आमफहम और खासपसंद हों अर्थात् जिनको जियादह आदमी समझ सकते हैं और यहां के पढ़े-लिखे, आलिम-फाजिल, पंडित, विद्वान की बोलचाल में छोड़े नहीं गये हैं और जहाँ तक बन पड़े हम लोगों को हर्गिज गैरमुल्क के शब्द काम में न लाना चाहिए और न संस्कृत की टकसाल कायम करके नए नए ऊपरी शब्दों के सिक्के जारी करने चाहिए।' शिव प्रसाद की 'भाषा नीति' अपने समय की वास्तविकता के ज्यादा करीब थी। यद्यपि उनकी भाषा पर उर्दूपरस्ती का इल्जाम लगाया जाता है किन्तु पं. रामचन्द्र शुक्ल या डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने उनकी पुस्तकों की भाषा को चलती हुई सरल हिन्दी कहा है। उस समय स्कूलों में हिन्दू और मुसलमान दोनों के बच्चे पढ़ते थे। हिन्दू बच्चे हिन्दी माध्यम से पढ़ते थे और मुसलमान बच्चे उर्दू से। दोनों माध्यम की लिपि अलग अलग थी। शिव प्रसाद यह मानने को राजी नहीं थे कि लिपि अलग है तो उनकी भाषा भी अलग होनी चाहिए । उन्होंने पारिभाषिक शब्दों के लिए संस्कृत भाषा का सहारा लिया और तत्व, उद्भिज, वनस्पति, आमाशय, परमाणु, सरल रेखा, समकोण जैसे शब्द ग्रहण किये। उन्होंने एक ऐसा व्याकरण भी लिखा जो हिन्दी उर्दू दोनों का था। इसकी हँसी भारतेन्दु बाबू ने उड़ाई।

तभी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने दावा किया कि 1873 में हिन्दी नई चाल में ढली। इसमें सन्देह नहीं कि यदि हिन्दी व्योम में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का उदय न हुआ होता तो शायद हिन्दी गद्य का परिष्कार न हुआ होता और जिसे हम खड़ी बोली कहते हैं वह खड़ी न हुई होती।

आज से लगभग 600 वर्ष पूर्व चाहे अमीर खुसरो रहे हों या सन्तकवि कबीर दास, इनके काव्य में खड़ी बोली के बीज थे। किन्तु खड़ी बोली को खड़ी करने का सर्वाधिक श्रेय व्रजभाषा के ही प्रसिद्ध कवि तथा राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द के समकालीन श्री भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को है । उन्होंने इसे गद्य की भाषा के रूप में खड़ा किया। फिर तो भारतेन्दु मण्डल के अनेक सात्यिकारों ने इसका सम्वर्धन किया। यही खड़ी बोली विज्ञान लेखन में प्रगति की परिचायक है।

आगे चलकर 1900 ई. में प्रयाग से 'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन एक युगान्तरकारी घटना है। इसके द्वारा पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी ने खड़ी बोली या हिन्दी को ज्ञान-विज्ञान की भाषा बना डाला। उत्तरभारत के वे हिन्दी भाषाभाषी जो काव्य सागर में आनन्द की हिलोरे लेने में मस्त थे,सहसा विज्ञान की तरंगों में बहने लगे। हिन्दी अब विज्ञान संचारिका बन गई। प्रारम्भ के 20 वर्षों में उसके द्वारा इतना विज्ञान साहित्य परोसा गया कि पाठकगण विश्वस्त हो गये कि वे ऐसे समुन्नत युग का सपना देख सकते हैं जिसमें संस्कृत भाषा जैसे गाम्भीर्य और प्रवाह आने से विज्ञान की बातें आम लोगों को सुलभ होती रहेंगी और सचमुच ही यह सपना साकार हुआ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति (1947) तक हिन्दी में विज्ञान साहित्य सृजन का केन्द्र इलाहाबाद बना रहा। इलाहाबाद में 1913 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के चार मनीषियों- डॉ. गंगानाथ झा (संस्कृत), प्रो. हमीदुद्दीन (अरबी), श्री सालिगराम भार्गव (भौतिक शास्त्र) तथा श्री रामदास गौड़ (रसायन शास्त्र) ने मिलकर 'विज्ञान परिषद्' नामक संस्था की स्थापना की जिसका मुख्य उद्देश्य राष्ट्रभाषा हिन्दी के माध्यम से विज्ञान विषयों का प्रचार प्रसार करना था । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए दो वर्ष पश्चात् अप्रैल 1915 में 'विज्ञान' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ किया गया और उसके सम्पादक बने पं. श्रीधर पाठक तथा लाला सीताराम। ये दोनों साहित्यिक

व्यक्ति थे। इस तरह अभी तक जितने साहित्यिक जन या वैज्ञानिक रुचि वाले लोग, जो 'सरस्वती' में लिख रहे थे,उनके लिए 'विज्ञान' पत्रिका का नवीन मंच मिला और स्वतन्त्रताप्राप्ति के पूर्व तक 'विज्ञान' ही एकमात्र विज्ञान विषयों की पत्रिका बनी रही। इस पत्रिका से सभी विज्ञान लेखक परिचित हुए। स्वतन्त्रताप्राप्ति के बाद विज्ञान विषयक दो पत्रिकाएं, खेती (1948) तथा विज्ञान प्रगति (1950) प्रकाश में आईं। ये दोनों सरकारी पत्रिकाएं थीं। 1970 के दशक के बाद हिन्दी में विज्ञान पत्रिकाओं की धूम मच गई।

यद्यपि हिन्दी में विज्ञान लेखन भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के काल से ही शुरू हो चुका था किन्तु बीसवीं सदी के प्रारम्भ में आर्य समाज के नेता स्वामी श्रद्धानन्द जी ने जब कांगड़ी में गुरुकुल की स्थापना की तो 1907 में वहां के महाविद्यालय में वैज्ञानिक विषयों के शिक्षण हेतु पाठ्य पुस्तकों की आवश्यकता हुई। फलस्वरूप 1910-1912 के मध्य मास्टर गोवर्धन तथा श्री महेशचरण सिनहा ने वनस्पतिशास्त्र,भौतिकी तथा रसायन विषयक पुस्तकें लिखीं । तब तक काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने एक वैज्ञानिक कोश भी प्रकाशित कर दिया था जिससे विज्ञान लेखकों को हिन्दी के पारिभाषिक शब्दों को ग्रहण करने में सुविधा हुई। एक अनुमान के अनुसार स्वतन्त्रताप्राप्ति के पूर्व हिन्दी में लगभग 700 लोकप्रिय विज्ञान की पुस्तकें प्रकाश में आ चुकी थीं। स्वतन्त्रताप्राप्ति के बाद नये नये लेखकों तथा लेखिकाओं ने नये नये विषयों पर विज्ञान लेखन किया। अनुमान है कि इस समय 3000 से अधिक विज्ञान लेखक है जिनमें से 250 महिलाएं हैं। 1965 से लगातार विज्ञान लेखन में संलग्न लेखकों की संख्या 160 से अधिक है। सम्प्रति हिन्दी का भण्डार विज्ञान और प्रौद्योगिकी के समस्त पक्षों पर लिखी हिन्दी पुस्तकों से परिपूर्ण है। इन सबकी संख्या 7000 से ऊपर होगी। 1947 के पूर्व विज्ञान लेखक साहित्यिक पत्रिकाओं (वीणा, सुधा, माधुरी, विशाल भारत) में भी लिख रहे थे और अनेक साहित्यकार भी उन्हीं में विज्ञान विषयक लेख लिख रहे थे। यही कारण था कि विज्ञान लेखकों की गणना साहित्यकारों में की जाती थी। उन्हें हिन्दी साहित्य सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशनों में व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया जाता था। यही नहीं, ऐसे अनेक विज्ञान लेखक हुए जिनकी रचनाओं पर हिन्दी साहित्य का सर्वोच्च पुरस्कार-मंगला प्रसाद पुरस्कार प्रदान किया गया। त्रिलोकीनाथ वर्मा को उनकी पुस्तक 'हमारे शरीर की रचना' पर संवत 1983 में, डॉ. गोरख प्रसाद को उनकी पुस्तक 'फोटोग्राफी की शिक्षा' पर सं. 1988 में,श्री मुकुन्द स्वरूप को उनकी पुस्तक 'स्वास्थ्य विज्ञान' पर सं.1889 में,श्री रामदास गौड को उनकी पुस्तक 'विज्ञान हस्तामलक' पर सं. 1992 में तथा महावीर श्रीवास्तव को उनकी कृति 'सूर्य सिद्धान्तः विज्ञान भाष्य' पर सं. 1999 में मंगला प्रसाद पुरस्कार प्रदान किया गया।

स्वतन्त्रतापूर्व साहित्यिक पत्रिकाओं ने वैज्ञानिक साहित्य सृजन में जो भूमिका निभाई उसका लेखा जोखा सुरुचिपूर्ण है। उदाहरणार्थ 1900-1950 की अवधि में 'सरस्वती' में कुल 229, विशाल भारत में 204, वीणा में 129, माधुरी में 46 तथा सुधा में 50 वैज्ञानिक लेख छपे जिनके लेखकों की संख्या क्रमशः 160, 138, 79, 38 तथा 43 रही। ये निबन्ध स्वास्थ्य,कृषि एवं उद्योग के अतिरिक्त जीवन विज्ञान, वनस्पति विज्ञान,भौतिक शास्त्र तथा ज्योतिष जैसे विषयों पर थे। कुछ वैज्ञानिकों की जीवनियां भी प्रकाशित हुईं। अब मैं अपने व्याख्यान के दूसरे भाग में आता हूँ।

●

हिन्दी विज्ञान लेखन के 125 वर्ष पूरे हो चुके हैं। यह काफी लम्बी अवधि है। इसमें हिन्दी लोकप्रिय विज्ञान लेखकों ने विविध विषयों पर लोकप्रिय साहित्य प्रस्तुत करके अंग्रेजी साहित्य का विकल्प प्रस्तुत किया है जो सचमुच लोमहर्षक है। किन्तु अभी तक हिन्दी माध्यम से विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में जो सेना (3000 लेखकों की) जुटी हुई थी,अब उसे ऐसा नायक चाहिए जो विज्ञान की विविध शाखाओं में उत्कृष्ट लेखन के लिए प्रेरित करता ।

सम्प्रति सूचना प्रौद्योगिकी,जैव प्रौद्योगिकी,नैनो प्रौद्योगिकी,जीनोमिकी तथा अन्तरिक्ष विज्ञान जैसे नये नये क्षेत्र हैं जिनमें हिन्दी में प्रामाणिक वैज्ञानिक साहित्य की रचना की जानी है। इसके लिए निस्सन्देह उच्चकोटि की विशेषज्ञता चाहिए जो हमारे सामान्य लेखकों के पास नहीं है। इसके लिए मौलिक लेखन अनिवार्य है और यह कार्य चोटी के वैज्ञानिक ही कर सकते हैं। किन्तु बडे खेद के साथ यह कहना पड़ता है कि इन वैज्ञानिकों के कर्ण कुहरों में इस आवश्यकता की गुहार अभी भी प्रविष्ट नहीं हो पा रही है। उन्हें अंग्रेजी के मोह ने दिग्भ्रमित कर रखा है। शायद उन्हें राष्ट्रीयता या राष्ट्रभाषा की पुकार नहीं सुन पड़ती । वे दीर्घ निद्रा में हैं किन्तु यह निद्रा टूटेगी-अवश्य टूटेगी।

मौलिक लेखन

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में भारतीय भाषाओं में विज्ञान का जिस तरह लोकप्रियकरण हो रहा था,उसे वर्नाकुलराइजेशन की संज्ञा प्रदान की गई। चूंकि देश अंग्रेजी शासन के अधीन था अतः लेखकों में राष्ट्रीय भावना आन्दोलित हो रही थी । बंगाल में रामेन्द्र सुन्दर त्रिवेदी,दिल्ली में मास्टर रामचन्द्र तथा जका उल्ला और बनारस में लक्ष्मी शंकर मिश्र अपने अपने लेखन द्वारा अपने अपने क्षेत्रों में वैज्ञानिक अभिरुचि का विस्तार करने में लगे थे। उन्हें अंग्रेजी से परहेज नहीं था बल्कि हम यह कह सकते हैं कि उन्होंने आवश्यकतानुसार अंग्रेजी से अपनी अपनी भाषाओं में अनुवाद करके और स्वयं मौलिक लेखन करके देश में विज्ञान लेखन की नींव डाली। बीसवीं सदी के प्रारम्भ काल तक सैकड़ों पुस्तकें लिखी जा

चुकी थीं और बीसवी सदी के पूर्वार्द्ध तक इस संख्या में गुणात्मक वृद्धि होती रही।

चूंकि हिन्दी गद्य का विकास संस्कृत ग्रंथों के अनुवाद से हुआ इसलिए हिन्दी के धुरंधर विद्वानों को भी हिन्दी में विज्ञान सामग्री अनूदित करने में कोई संकोच नहीं हुआ। यही कारण है कि हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखने वाले आचार्य पं. रामचन्द्र शुक्ल ने 1920 में जर्मनी के सुपसिद्ध जीवविज्ञानी हैकेल की सुप्रसिद्ध पुस्तक Riddle of the Universe का अनुवाद 'विश्व प्रपंच' नाम से किया और काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने इसे सहर्ष प्रकाशित किया।

अतःचाहे मौलिक लेखन हो या अनुवाद,प्रामाणिक पारिभाषिक शब्दों की आवश्यकता अनुभव की जाती रही थी। यद्यपि पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण कार्य कई गैर सरकारी संस्थाएं करती आ रही थीं और डॉ. रघुवीर ने तो पारिभाषिक शब्दकोष ही रच डाला था किन्तु 1950 में जब भारत सरकार ने शब्दावली आयोग का गठन किया तो गैर सरकारी संस्थाओं ने उसमें सहयोग किया और मानक शब्दावली का निर्माण कार्य सम्पन्न हुआ। चूंकि यह शब्दावली संस्कृत पर आधारित है अतः भारत के अन्य भाषाभाषियों के लिए भी उपयोगी सिद्ध हुई।

हमें कहना यह है कि आधिकारिक लेखन के अभाव में ही द्वितीय कोटि का लेखन,जिसे लोकप्रिय विज्ञान लेखन कहते हैं पल्लवित होता आया है। अनुवाद की कितनी ही बुराई क्यों न की जाय,विज्ञान लेखन में अनुवाद अनिवार्य है-उसे समाप्त नहीं किया जा सकता । वैसे लेखन कार्य एक तपस्या है। लेखकों को उसका अभ्यास करना होगा और राज्याश्रय प्राप्त करने या पुरस्कृत होने की लालसा का परित्याग करना होगा।

राष्ट्रभाषा हिन्दी का मुख उज्ज्वल करने के लिए सर्वथा मौलिक ग्रन्थों का सृजन करना होगा। ये ग्रन्थ उच्च पदों पर आसीन वैज्ञानिक जनों को ही लिखने हैं। तभी मौलिक साहित्य की सर्जना का स्वप्न पूरा हो सकेगा । हम इसकी प्रतीक्षा में हैं।

हिन्दी विज्ञान लेखन की कथावस्तु

विज्ञान लेखन में कथावस्तु का बहुत बड़ा हाथ है । प्रारम्भ में जो विज्ञान लेखन हुआ उसकी विषयवस्तु लेखक की इच्छानुसार होती थी किन्तु 1950 से लेकर 1970 की अवधि में अनेक नवीन खोजे हुईं। उदाहरणार्थ 1960-70 के दशक में कृषि में हरितक्रान्ति की दस्तक होने सें तत्सम्बन्धी रचनाएं हुईं। इसी कालखण्ड में रूस ने अपना स्पुतनिक चन्द्रलोक में भेजा। प्रतिस्पर्धावश अमरीका ने भी अन्तरिक्ष कार्यक्रम शुरू हुआ। इससे भारत को भी अन्तरिक्ष कार्यक्रम शुरू करने की प्रेरणा मिला। स्वाभाविक था कि इस दिशा में हिन्दी में विज्ञान लेखन होता। इस तरह 1970 के पश्चात् हिन्दी में पर्यावरण,कम्प्यूटर तथा अन्तरिक्ष इन नवीन विषयों पर भी प्रचुर लेखन होता रहा। सागर विज्ञान और अंटार्कटिका अभियान भी अछूते नहीं रहे।

औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप पर्यावरण का जिस तेजी से विघटन हुआ,उसकी चिन्ता सर्वप्रथम १९७२ के स्टाकहोम सम्मेलन में प्रकट की गई। पर्यावरण से जुड़ा हुआ विज्ञान पारिस्थितिकी (Ecology) है। इसके अन्तर्गत पर्यावरण प्रदूषण, जैव विविधता पर पर्याप्त लेखन हुआ जिससे जनसामान्य में पर्यावरण तथा प्रकृति के प्रति जागरूकता उत्पन्न हुई और जल प्रदूषण,वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, मृदा प्रदूषण के साथ ही मानसिक प्रदूषण जैसी समस्याओं पर गम्भीरता से विचार हुआ। ओजोन परत की महत्ता,अभ्यारण्यों की आवश्यकता तथा जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग पर भी पर्याप्त साहित्य प्रकाश में आया। नैनोटेक्नालाजी तथा जीनोमिकी जैसे नवीनतम विषयों पर भी लेखन हो रहा है।

वैसे तो कम्प्यूटर युग का सूत्रपात 1984 में हुआ किन्तु हिन्दी में कम्प्यूटर की पहली पुस्तक 1970 में रमेश वर्मा ने लिख दी थी । जब स्कूलों,कॉलेजों तथा विश्वविद्यालयों में कम्प्यूटर शिक्षा प्रारम्भ हुई तो अनेक पाठ्यपुस्तकें भी लिखी गईं। जून 2001 से 'कम्प्यूटर विविधा' नामक पत्रिका भी प्रकाशित हो रही है। इससे सूचना प्रौद्योगिकी का पल्लवन हुआ है। भोपाल से ही प्रकाशित 'इलेक्ट्रानिकी आपके लिए' एक महत्वपूर्ण पत्रिका है ।

सागरों से खनिजों के दोहन और समुद्र से ऊर्जा प्राप्त करने की सम्भावना को लेकर काफी साहित्य प्रकाश में आया है।

राकेटों, प्रक्षेपास्त्रों तथा कृत्रिम उपग्रहों को लेकर भी हिन्दी में प्रचुर लेखन हुआ। यह साहित्य विशेष रूप से श्री काली शंकर द्वारा प्रणीत है जो इस क्षेत्र से सम्बद्ध विशेषज्ञ रहे हैं ।

आयुर्विज्ञान यद्यपि अति प्राचीन विज्ञान है और पहले से प्रचुर साहित्य प्राप्त है किन्तु सम्प्रति कई चिकित्सक प्रामाणिक हिन्दी ग्रन्थों की रचना कर रहे हैं जिनमें डॉ. यतीश अग्रवाल तथा डॉ. जे.एल. अग्रवाल अग्रणी हैं। आयुर्विज्ञान विषयक कई पत्रिकाएं भी निरन्तर प्रकाशित हो रही है। जीनोम तथा जीनोमिकी एवं जैव सूचनिकी (Bioinformatics) इन दोनों विषयों पर हाल ही में पुस्तकें प्रकाशित हैं।

विज्ञान पत्रकारिता

आजकल मीडिया की चर्चा सर्वत्र हो रही हैं। यह पत्रकारिता के समतुल्य शब्द है। हिन्दी में पत्रकारिता का अर्थ होता है पत्रिका या समाचार पत्र के प्रकाशन द्वारा जनसामान्य तक ज्ञान विज्ञान की सूचनाएं पहुंचाना।

1950 में श्री वेंकट लाल ओझा ने समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं की एक निर्देशिका तैयार की थी जिसमें 1820 से 1925 तक के 105 वर्षों के मध्य प्रकाशित अनेक पत्र पत्रिकाओं के विवरण छपे थे । इसमें विज्ञान विषयक अनेक पत्रिकाओं की सूचना मिलती है किन्तु 1983 में सी.एस.आई.आर. ने जो विज्ञान निर्देशिका प्रकाशित की, उसमे विषयवार 321 पत्रिकाओं की सूची है। इस संख्या में परिवर्तन होता रहा है क्योंकि 2001 में जो संशोधित निर्देशिका छपी है उसमें

विज्ञान पत्रिकाओं की संख्या 321 से घट कर मात्र 119 रह गई अर्थात् लगभग 200 पत्रिकाएं बन्द हुई। इस तरह कुछ पत्रिकाएं बन्द होंगी तो कुछ नई विज्ञान पत्रिकाएं प्रकाश में आती रहेंगी। हाल ही में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से 'विज्ञान गंगा' और उत्तराखण्ड से 'विज्ञान परिचर्चा' (त्रैमासिक) का प्रकाशन स्वागत योग्य है ।

हिन्दी में विज्ञान के प्रचार-प्रसार का एक पक्ष और है जिसका उल्लेख आवश्यक है। विज्ञान परिषद् प्रयाग ने सन् 1958 से एक त्रैमासिक विज्ञान विषयक शोध पत्रिका-'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' का प्रकाशन शुरू किया जो विगत 57 वर्षो से निरन्तर प्रकाशित हो रही है। यह राष्ट्रभाषा हिन्दी में प्रकाशित होने वाली एकमात्र पत्रिका है जिसका देश विदेश में स्वागत हुआ है। इसमें प्रकाशित शोधपत्रों की संक्षिप्तियां गण्यमान्य एजेन्सियों द्वारा प्रकाशित की जाती हैं। देखादेखी सम्प्रति अन्य क्षेत्रों में भी शोध पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। यह शुभ लक्षण है। भारतीय कृषि अनुसंधान पत्रिका (त्रैमासिक) 1973 से करनाल से प्रकाशित हो रही है। विज्ञान शोध भारती (अर्धवार्षिक) 1960 से ग्वालियर से प्रकाशित है। गणित सुधा (त्रैमासिक) 1994 से लखनऊ से प्रकाशित हो रही है।

वैज्ञानिक शोध पत्रिकाएं किसी एक व्यक्ति के उत्साह से नहीं संचालित होती अपितु उन्हें राष्ट्र की निधि बनना है। शोध पत्रिकाओं की जितनी ही अधिक संख्या होगी,उतने ही नवीन शोधों का प्रकाशन होकर जन जन तक उन्हें उपलब्ध कराया जा सकेगा। अभी लोकप्रिय विज्ञान लेखन अनिवार्य बना हुआ है किन्तु उसका स्तर तभी उठ सकेगा जब उसमें हिन्दी में प्रकाशित शोध पत्रों की विषयवस्तु को स्थान दिया जावेगा। अपने देश की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर जो भी शोधकार्य होगा और फिर उसका लोकप्रियकरण होगा,वह निश्चित रूप से कल्याणकारी सिद्ध होगा। इससे देश में हिन्दी प्रकाशकों को उच्चस्तरीय वैज्ञानिक साहित्य प्रकाशनार्थ प्राप्त होता रहेगा और हमारे छात्रों, अध्यापकों तथा शोधकर्ताओं को सुविधा होगी।

●

अब मैं अपने व्याख्यान के तीसरे भाग में आता हूँ।

मैं उन पूर्व पुरुषों का स्मरण करना चाहूंगा जिन्होंने हिन्दी में विज्ञान लेखन की नींव रखी और उसे पुष्ट बनाया। इनमें भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बाबू श्याम सुन्दर दास, पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी,पं. रामचन्द्र शुक्ल, महापंडित राहुल सांकृत्यायन, पं. सुधाकर द्विवेदी, प्रो. फूलदेव सहाय वर्मा, डॉ. सत्यप्रकाश, डॉ. गोरख प्रसाद,डॉ. आत्माराम, डॉ. ब्रजमोहन मुख्य हैं। नई पीढ़ी में मेरे तमाम समकालिक हैं जिनका नाम मैं नहीं ले रहा- को बड़ छोट कहत अपराधू। मैंने स्वयं हिन्दी साहित्य और विज्ञान लेखन में 60 वर्ष बिताये हैं और देश की अग्रणी संस्था विज्ञान परिषद् प्रयाग का कार्यभार संभाल रहा हूँ। मेरा अहर्निश प्रयास है कि नये प्रतिभाशाली व्यक्ति विज्ञान लेखन के प्रति आकृष्ट हों क्योंकि भविष्य उन्हीं का है।

अब मैं अन्त में कुछ सम्भावनाओं एवं सुझावों को सूचीबद्ध करना चाहूंगा।

मानक पारिभाषिक शब्दावली का ही व्यवहार हो। मनमाने प्रयोग नहीं हों।

नये उभरते वैज्ञानिक विषयों पर अधिकारी विद्वानों से हिन्दी में लेखन को प्रोत्साहित किया जाये।

विज्ञान लेखन की विविध विधाओं में परिष्कृत लेखन हो।

यथासम्भव शीघ्र ही विज्ञान विश्वकोश की रचना हो। विज्ञान परिषद् ने कई वर्षों पूर्व ऐसा कोश तैयार करके केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय को सौंप रखा है। अनुरोध है कि उसे शीघ्र प्रकाशित किया जाये।

दुर्लभ गौरव ग्रन्थों का पुनः प्रकाशन हो।

हिन्दी विज्ञान लेखकों के लिए नये नये पुरस्कारों की स्थापना हो।

हिन्दी में नवीन वैज्ञानिक शोध पत्रिकाओं के प्रकाशन को प्रोत्साहित किया जाये।

मैं अत्यन्त आशावादी हूँ । मुझे विश्वास है कि मेरे जीवन काल में ही विज्ञान की हिन्दी राष्ट्रभाषा हिन्दी बन सकेगी। निश्चय ही हिन्दी विश्वभाषा बनकर रहेगी।

जय हिन्दी, जय नागरी, जय विज्ञान।

सन्दर्भ ग्रन्थ

हिन्दी में स्वतन्त्रता परवर्ती विज्ञान लेखन : डॉ. शिवगोपाल मिश्र, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली 2004

हिन्दी विज्ञान साहित्य का सर्वेक्षण : डॉ. शिवगोपाल मिश्र, हिन्दुस्तानी एकेडमी 2004

विज्ञान प्रवाह : डॉ. शिवगोपाल मिश्र, विज्ञान परिषद् प्रयाग 2006

इतस्ततः -डॉ. शिवगोपाल मिश्र, विज्ञान परिषद् प्रयाग 2015

vijnananparishad_prayag@rediffmail.com

AISECT
Education. Empowerment. Enterprise.

आईसेक्ट समाचार

ड्रीम स्टार्ट अप चैलेंज 2015 के 12 फाइनल प्रतिभागी चयनित

सी.आई.आई. यंग इंडिया, आईसेक्ट व नेटलिंक का संयुक्त प्रयास कॉन्फेडरेशन ऑफ इंडियन इंडस्ट्रीज (सी.आई.आई.) व यंग इंडियन के भोपाल चैप्टर और आईसेक्ट व नेटलिंक के संयुक्त प्रयासों से आयोजित हो रहे ड्रीम स्टार्ट अप चैलेंज 2015 मप्र सहित देश के स्टार्ट अप और युवा उद्यमियों को प्रोत्साहित करने के लिए उठाया गया कदम है। इस प्रतियोगिता के प्रथम चरण की समाप्ति पर 12 फाइनल प्रतिभागी स्टार्टस अप का चयन कर लिया गया है। इस प्रतियोगिता में मप्र सहित पूरे देश से 66 प्रतिभागियों ने आवेदन प्रस्तुत किए थे जिनमें से पर्सनल इंटरव्यू एवं बिजनेस आइडिया की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए। 12 प्रतिभागियों का चयन किया गया। इस प्रतियोगिता के अगले चरण की शुरूआत दिनांक 30 सिंतबर को आईसेक्ट विश्वविद्यालय के सभागार में आयोजित एक भव्य समारोह में हुई। इस कार्यक्रम में मप्र के सफल उद्यमी संतोष चौबे चेयरमैन आईसेक्ट, श्री अनुराग श्रीवास्तव प्रेसिडेंट नेटलिंक और श्री आर.एस. गोस्वामी फाउंडर हिंद फार्मा ने 12 चयनित प्रतिभागियों एवं छात्रों से सफल उद्यमी बनने के सूत्र बताते हुए उनसे अपने अनुभव साझा किए। आईसेक्ट के चेयरमैन संतोष चौबे ने कहा कि उद्यमियों को सामाजिक उद्यमिता के क्षेत्र में ध्यान देना होगा। साथ ही उन्होंने कहा कि भविष्य में एनर्जी पर भी तेजी से कार्य करने की जरूरत है। नेटलिंक के अनुराग श्रीवास्तव ने कहा कि आपके पास हर पल अवसर है बस आपकी नजर पैनी होनी चाहिए कि आप उसे पहचाने। इसी के साथ यंग इंडियंस भोपाल के हितेष आहुजा एवं सिद्धार्थ चतुर्वेदी ने इस पूरे कॉम्पिटिशन की रूपरेखा सभी के सामने रखी। उन्होंने बताया कि आज मप्र में स्टार्ट अप को बढ़ावा देने के लिए एक अनुकूल वातावरण की सख्त आवश्यकता है और यह प्रतियोगिता इसी दिशा में बढ़ाया गया एक कदम है। इस मौके पर यंग इंडियंस भोपाल की चेयर सुश्री प्रगति जैन के साथ बड़ी संख्या में यंग इंडियंस के सदस्य उपस्थित थे।

ब्रेनी बियर में मनाया जंगल डे

ब्रेनी बियर प्री-स्कूल के प्ले ग्रुप के बच्चो ने 'जंगल डे' मनाया बच्चों ने जंगली जानवारों की थीम को बहुत सुन्दरता से प्रस्तुत किया। इसमें हर बच्चे को जंगली जानवर की ड्रैस में तैयार होना था। इसी थीम पर पूरे स्कूल को डेकोरेट किया गया। बच्चों ने बहुत मस्ती की। उन्होंने विभिन्न जानवरों की आवाज व निवास के संबंध में जानकारी प्राप्त की। ब्रेनी बियर प्री-स्कूल तेजी से बढ़ता हुआ स्कूल चेन है जो कि, मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़, बिहार नागालैंड, पंजाब व हरियाण में है।

देशव्यापी आईसेक्ट कौशल विकास यात्रा

16 राज्यों के 270 जिलों में युवाओं को कौशल विकास के लिए करेगी जागरूक

कौशल विकास और शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में देश के अग्रणी संस्थान आईसेक्ट की देश व्यापी कौशल विकास यात्रा का शुभारंभ आईसेक्ट के महानिदेशक श्री संतोष चौबे, निदेशक श्री सिद्धार्थ चतुर्वेदी और निदेशक सुश्री पल्लवी राव चतुर्वेदी ने हरी झंडी दिखाकर किया। इस मौके पर आईसेक्ट की गतिविधियों और कौशल विकास के महत्व पर आधारित एक न्यूज लैटर आईसेक्ट आवाज़ का विमोचन भी किया गया। यात्रा के शुभारंभ अवसर पर आयोजित एक समारोह में आईसेक्ट के महानिदेशक श्री संतोष चौबे ने संबोधित करते हुए कहा कि आईसेक्ट पिछले कई वर्षों से कौशल विकास यात्राएं आयोजित कर रहा है जो कि देश भर के ग्रामीण क्षेत्र और कस्बों में युवाओं का कौशल विकास और तकनीकी शिक्षा के महत्व के प्रति जागरूक करती है। भविष्य में भी इन यात्राओं को और बड़े स्वरूप में

आयोजित किया जाएगा। आईसेक्ट के निदेशक श्री सिद्धार्थ चतुर्वेदी ने संबोधित करते हुए कहा कि पिछले 4 वर्षों से आईसेक्ट इन यात्राओं को बड़े स्वरूप में आयोजित कर रहा है। इस बार ये यात्रा देश के 16 राज्यों में निकाली जा रही हैं अगले वर्ष से इन यात्राओं को साउथ और नार्थ इस्ट के राजयों सहित पूरे देश में आयोजित किया जाएगा। आईसेक्ट के नेशनल कोआर्डिनेटर श्री राजेश पंडा ने कहा कि आईसेक्ट-एनएसडीसी पार्टनरशिप कार्यक्रम के तहतये यात्राएं दिनांक 28 सितम्बर से 15 अक्टूबर के बीच पूरे देश में 16 राज्यों एवं लगभग 270 जिलों में विभिन्न मार्गों पर एक साथ चलते हुए सैकड़ों ब्लॉक/तहसील मुख्यालयों से होकर लगभग 450 लोकेशन से गुजरेंगी। यह यात्रा मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, देहली, हरियाणा, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, उत्तरप्रदेश, पंजाब, जम्मू कश्मीर, गुजरात, महाराष्ट्र, झारखंड, ओडिशा, बिहार, पश्चिम बंगाल, सिक्किम राज्यों में भ्रमण करेंगी। इस यात्रा के दौरान लगभग 30 हजार विद्यार्थियों को जागरूक करने का लक्ष्य रखा है। इस दौरान इन यात्राओं के साथ चल रहे विषय विशेषज्ञ छात्रों को आईसेक्ट के अन्य कार्य PMKVY, डिजिटल लिटरेसी मिशन की जानकारी भी प्रदान करेंगे। उल्लेखनीय है कि आईसेक्ट और भारत सरकार के उपक्रम एनएसडीसी में हुए समझौते के तहत विभिन्न कम्प्यूटर पाठ्यक्रमों में 100 से भी अधिक डिप्लोमा व सर्टीफिकेट पाठ्यक्रमों को शामिल किया गया है। एनएसडीसी द्वारा आईसेक्ट का चयन नोडल संस्था के रूप में किया गया है। आईसेक्ट व एनएसडीसी द्वारा अर्द्धशहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में कम्प्यूटर आईटी हार्डवेयर और नेटवर्किंग जैसे रोजगारोन्मुख विषयों पर आधारित प्रशिक्षण कार्यक्रम सूचना प्रौद्योगिकी आधारित सेवाएं, इलेक्ट्रॉनिक्स, एवं हार्डवेयर, बैंकिंग, व फायनेंशियल सर्विसेज, टीचर एवं एस्सोर प्रशिक्षण, टेक्सटाइल, एग्री स्किल्स तथा रिटेल आदि विषयों के पाठ्यक्रम आईसेक्ट द्वारा संचालित हो रहे हैं।

सीहोर जिले में मोबिलाइजेशन स्टडी प्रारंभ

आईसेक्ट और आई.एफ.एम.आर. (इंस्टीट्यूट फॉर फाइनेंशियल मैनेजमेंट एंड रिसर्च) द्वारा भोपाल व सीहोर की 20 चयनित ग्राम पंचायतों में मोबिलाइजेशन स्टडी की जा रही है जिसके तहत दिनांक 22 से 26 सितंबर तक सीहोर जिले की सटोरनिया, झरखेडा, सरखेड़ा, ढाबला, बरखेड़ी एवं खंडवा ग्राम पंचायतों में सर्वे एवं विशेष मोबिलाइजेशन किया गया। इस दौरान हमारे दल ने

लगभग 43 बीपीएल परिवारों से व्यक्तिगत बातचीत की एवं प्रत्येक परिवार के 18-35 वर्ष के बीच की लगभग 160 महिलाओं से महिला एवं पुरुष मोबिलाइजर द्वारा विशेष तौर पर रोजगारोन्मुख प्रशिक्षण के लाभ व उससे जुड़ी भविष्य की निरंतर आजीविका के अवसर की जानकारी दी गई। गौरतलब है इस मोबिलाइजेशन स्टडी के पहले चरण में भोपाल जिले की 10 ग्राम पंचायतों में दिनांक 18 से 128 अगस्त तक स्टडी की गई थी एवं इसका द्वितीय चरण सीहोर जिले में दिनांक 22 सितंबर से प्रारंभ किया गया। आईसेक्ट की प्रोजेक्ट डायरेक्टर सुश्री शिल्पी वार्ष्णेय ने बताया कि इस स्टडी में सभी ग्राम पंचायतों में वहां के सरपंच, सचिव, प्राचार्य और ग्राम रोजगार सहायकों के सहयोग से बीपीएल परिवारों तक इसके उद्देश्य को पहुंचाया जा रहा है। उन्होंने बताया कि इस स्टडी में उल्लेखनीय बात यह रही कि जिन बीपीएल परिवारों में युवा हैं उनमें से 60 प्रतिशत इस योजना से जुड़ने में इच्छुक हैं एवं प्रशिक्षण उपरांत नई आजीविका अपनाना चाहते हैं।

सेक्ट कॉलेज में सांस्कृतिक पर्व

सेक्ट कॉलेज ऑफ प्रोफेशनल एजुकेशन में सीनियर विद्यार्थियों द्वारा जूनियर विद्यार्थियों के लिये फ्रेशर पार्टी का आयोजन किया गया। कार्यक्रम की शुरूआत महाविद्यालय के प्रिंसीपल डॉ. सत्येन्द्र खरे द्वारा दीप प्रज्जवालित करके की गयी। इसके पश्चात् विद्यार्थियों ने सरस्वती वंदना प्रस्तुत की। इस अवसर पर विद्यार्थियों ने गीत, नृत्य, कवितायें प्रस्तुत करके समारोह में समां बांध दिया। कार्यक्रम में शुभम, अपूर्वा, अन्नपूर्णा के द्वारा गणेश वंदना को नृत्य के रूप में प्रस्तुत करके सबका मन मोह लिया। इसके पश्चात् बी.कॉम द्वितीय वर्ष के विद्यार्थियों ने समूह गीत से सबका दिल जीत लिया। अंत में महाविद्यालय के मिस एवं मिस्टर फ्रेशर का चुनाव किया गया, जिसमें बी.सी.ए. प्रथम वर्ष से अमन श्रीवास्तव मि. फ्रेशर एवं बी. कॉम. प्रथम वर्ष से अन्नपूर्णा राजपूत मिस फ्रेशर चुनी गयी। कार्यक्रम का संचालन विशाल शर्मा, प्राची, अंकित सिंह व नेहा ने किया। कार्यक्रम मे प्रिंसीपल डॉ. सत्येन्द्र खरे ने विद्यार्थियों को एक नारा दिया ''सीनियर हो या जूनियर रेस्पेक्ट इच अदर''। डीन एकेडेमिक्स श्री नितिन मोढ़ ने विद्यार्थियों को संगठन मे कार्य करने की प्रेरणा दी। इस अवसर पर उप प्राचार्य श्री योगेन्द्र चौहान, एवं समस्त फैकल्टी उपलब्ध थी।

स्कोप समाचार

एंटी रेगिंग पर आधारित नाट्य मंचन

गणेश वंदना पर अतुल के शानदार डाँस तथा युसुफ (एम.बी.ए) की सूफियाना कव्वाली की प्रस्तुति से विद्यार्थी झूम उठे। मौका था स्कोप कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग में फ्रेशर्स पार्टी का इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रुप में आईसेक्ट के निदेशक श्री सिद्धार्थ चतुर्वेदी उपस्थित थे। कार्यक्रम के प्रारम्भ में प्राचार्य डॉ. डी एस राघव ने छात्र-छात्राओं को शुभकामनाएँ देते हुए अनुशासन के साथ आगे बढ़ने की सीख दी। प्रथम वर्ष के बी.ई, डिप्लोमा, एम.बी.ए, एम.सी.ए के छात्रों का स्वागत किया गया। कार्यक्रम का आर्कषण का केन्द्र एंटी रेंगिग का संदेश देता हुआ नाटक था। लोक नृत्य विद्यार्थीयों ने प्रस्तुत किये जिसमें राजस्थानी लोक नृत्य घूमर सभी को पंसद आया। छात्र-छात्राओं को परफारमेंस के आधार पर विभिन्न खिताबों से नवाजा गया। मिस फ्रेशर रुपाली कोरी (सी.एस) तथा मिस्टर फ्रेशर अभिमन्यु (एम.ई), बेस्ट आलराऊंडर फीमेल अंकिता ठाकुर (एम.बी.ए), बेस्ट आलराऊँडर मेल रुपेश यादव (डिप्लोमा) बेस्ट पर्सनालिटी मेल नीलेश द्विवेदी (एम.ई), बेस्ट पर्सनालिटी फीमेल अंजली (सी.एस), बेस्ट टेलेंट मेल विनय उवनारे (डिप्लोमा), बेस्ट टेलेंट फीमेल मेघा राजपुत (एम.बी.ए), तथा एपरिशियेसन यूसुफ खान (एम.बी.ए), जीतेन्द्र जयसवाल (एम.ई) को चुना गया संचालन मौसम शर्मा, बारीखान, प्रभात सिंह, तुषार, अभिषेक, शुभम शर्मा ने किया। कार्यक्रम में मार्गदर्शन डा. मोनिका सिंह का रहा।

आईसेक्ट यूनिवर्सिटी समाचार

नाट्य समारोह आयोजित

एक सिरे पर लोक धुनों की अलमस्त उड़ान और लय-ताल की जादुई थिरकन तथा दूसरे छोर पर समझौता परस्त लेखकीय बिरादरी पर कटाक्ष करते कथानक की बेहतरीन रंग प्रस्तुति। आईसेक्ट यूनिवर्सिटी के सभागार में जमा हुए सैकड़ों छात्र-छात्राओं के लिए रंगमंच से वाबस्ता होने का यह बेमिसाल मौका रहा। अपने विश्वविद्यालय के कुलाधिपति संतोष चौबे को एक लेखक-नाटककार के रूप में देखना भी युवा दर्शक बिरादरी के लिए रोचक अनुभव था। दो दिवसीय नाट्य समारोह की पहली सभा में विहान ड्रामा वर्क्स के करीब चालीस कलाकारों ने 'रंग संगीत' की सुमधुर प्रस्तुति दी जबकि दूसरा आयाम चौबे की बहुचर्चित कहानी 'लेखक बनाने वाले' का शानदार मंचन था। इस कहानी का नाट्य प्रदर्शन थर्ड बेल के कलाकारों ने किया। इस मौके पर कला समीक्षक विनय उपाध्याय ने रंग संगीत और नाटक में वाचिक अभिनय से जुडी जरूरी बातें साझा की। यूनिवर्सिटी के कुलपति डॉ. विजयकांत वर्मा और कुलसचिव डॉ.विजय सिंह ने सभी कलाकारों का अभिनन्दन किया।

समारोह की शुरुआत विहान ग्रुप की गीत-संगीत प्रस्तुति से हुई। अब तक मंचित हुए नाटकों कनुप्रिया, प्रेम पतंगा, एक कहानी बस्तर की, रसीदी टिकिट, हास्य चूड़ामणि आदि में प्रयोग किये गए गीतों की सुरीली बानगियों के साथ मस्ती भरी अदाकारी के साथ पेश आये कलाकारों का साथ दर्शकों ने भी तालियां की थाप देकर दिया। इस समूह का सबसे दिलचस्प आयाम बेबी तनिष्का की मौजूदगी रही। तीन बरस की नन्ही कलाकार ने अपनी अदाकारी से सबका मन जीत लिया। विहान संगीत का संयोजन हेमंत देवलेकर और नितेश मांगरोल ने किया। नाटक 'लेखक बनाने वाले' को देखना अपने समय के साहित्यिक परिवेश की कड़वी सच्चाइयों से अवगत होना था। संतोष चौबे की इस कहानी में बाजारवाद और सस्ती लोकप्रियता की गिरफ्त में आती लेखक बिरादरी पर तीखा कटाक्ष है। रोचक रंगमंचीय ताने-बाने के बीच आलोक गच्च, प्रेम अष्ठाना, मनोज श्रीवास्तव, स्वस्तिका और नीति श्रीवास्तव ने अपने सधे अभिनय से कथानक को गति प्रदान की।